Saurashtra University

Re – Accredited Grade 'B' by NAAC
(CGPA 2.93)

Gursahani, Rani, 2012, "कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता", thesis PhD, Saurashtra University

http://etheses.saurashtrauniversity.edu/id/950

Copyright and moral rights for this thesis are retained by the author

A copy can be downloaded for personal non-commercial research or study, without prior permission or charge.

This thesis cannot be reproduced or quoted extensively from without first obtaining permission in writing from the Author.

The content must not be changed in any way or sold commercially in any format or medium without the formal permission of the Author

When referring to this work, full bibliographic details including the author, title, awarding institution and date of the thesis must be given.

Saurashtra University Theses Service
http://etheses.saurashtrauniversity.edu
repository@sauuni.ernet.in

© The Author

कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

(सौराष्ट्र युनिवर्सिटी, राजकोट की पीएच.डी.(हिन्दी) उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध–प्रबंध)

❖❖❖❖❖

❖ अनुसंघित्सु ❖

प्रा. रानी गुरसहानी

हिन्दी विभाग

सी.बी. पटेल आर्ट्स इन्स्टिट्यूट

नड़ियाद

❖❖❖

❖ शोध–निर्देशक ❖

डॉ. शैलेश के. महेता

प्रोफेसर, हिन्दी भवन,

सौराष्ट्र युनिवर्सिटी,

राजकोट

२०१२

प्रमाणपत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **प्रा. रानी गुरसहानी** ने सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट की पीएच.डी.(हिन्दी) उपाधि के लिए मेरे निरीक्षण और निर्देशन में **''कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता''** शीर्षक शोध-प्रबंध तैयार किया है । इस शोध-प्रबंध में इन्होंने उक्त विषय का यथाशक्ति अध्ययन, अनुशीलन एवं शोधपरक विवेचन-विश्लेषण कर वैज्ञानिक ढंग से मौलिक निरूपण किया है । साथ ही, यह शोध-प्रबंध अथवा इसका कोई अंश अब तक न तो प्रकाशित हुआ है और न ही इसका कहीं कोई उपयोग हुआ है ।

राजकोट

दिनांक :

(डॉ. शैलेश के. मेहता)
शोध-निर्देशक तथा
प्रोफेसर, हिन्दी भवन,
सौराष्ट्र विश्वविद्यालय,
राजकोट (गुजरात)

अनुक्रमणिका

❖ प्रस्तावना १-११
- ० विषय-चयन की प्रेरणा
- ० विषय का महत्व
- ० शोध-क्षेत्र की सीमा
- ० शोध-सामग्र-संकलन
- ० प्रस्तुत शोध-कार्य द्वारा प्रस्तावित योगदान
- ० शोध-प्रबंध-परिचय
- ० कृतज्ञताज्ञापन

❖ प्रथम अध्याय : सामाजिकता : तात्पर्य और व्याप्ति १२-३४
- ० समाज का स्वरूप और विकास
- ० समाज और साहित्य : उपन्यास-विशेष संदर्भ
- ० सामाजिक चेतना-सामाकिता का तात्पर्य और व्याप्ति
- ० निष्कर्ष

❖ द्वितीय अध्याय : कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्राः
परिचयात्मक अध्ययन ३५-७४
- ० समुद्र में खोया हुआ आदमी
- ० सुबह दोपहर शाम
- ० लौटे हुए मुसाफिर
- ० रेगिस्तान
- ० डाक बंगला
- ० तीसरा आदमी
- ० काली आँधी
- ० एक सड़क सत्तावन गलियाँ
- ० कितने पाकिस्तान

❖ तृतीय अध्याय : स्वतंत्रता–पूर्व की स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता ७५–१६१
- स्वातंत्र्य–पूर्व के उपन्यास : भूमिका
- लौटे हुए मुसाफिर
- एक सड़क सत्तावन गलियाँ
- रेगिस्तान
- सुबह दोपहर शाम

❖ चतुर्थ अध्याय : स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता १६२–२७२
(१) स्वातंत्र्योत्तर कालीन विभिन्न परिस्थितियाँ
- आर्थिक परिस्थितियाँ
- सामाजिक परिस्थितियाँ
- राजनीतिक परिस्थितियाँ
- सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ

(२) स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता
- समुद्र में खोया हुआ आदमी
- डाक बंगला
- तीसरा आदमी
- काली आँधी
- कितने पाकिस्तान

❖ पंचम अध्याय : कमलेश्वर के उपन्यासों की पात्र–सृष्टि में सामाजिकता २७३–२९२
- भूमिका
- कमलेश्वर के उपन्यासों की पात्र–सृष्टि में सामाजिकता के स्वर

❖ षष्ठ अध्याय : कमलेश्वर के उपन्यासों में
विचार–सृष्टि की सामाजिकता २९३–३२६
- भूमिका
- विचारधारा और विचार–सृष्टि
- स्वाधीन भारतीय समाज की वैचारिक आधार और कमलेश्वर के उपन्यास
- उपसंहार
  लेखकीय दृष्टि का वैचारिक प्रतिफल

❖ ग्रंथानुक्रमणिका ३२७–३३०
(अ) आधार ग्रंथ
(ब) सहायक ग्रंथ
  – हिन्दी
  – अंग्रेजी
(क) कोश

प्रस्तावना

❖ विषय–चयन की प्रेरणा

मैंने एम.फिल.(हिन्दी) उपाधि के लिए ''कमलेश्वर के उपन्यास : एक अध्ययन'' विषय पर लघुशोध प्रबंध तैयार किया था । कमलेश्वर के उपन्यासों का अध्ययन करते हुए मुझे प्रतीत हुआ कि आगे चलकर उनके उपन्यासों को लेकर व्यापक शोध–भूमिका पर पीएच.डी. के लिए शोधग्रंथ प्रस्तुत किया जा सकता है । लघुशोध–प्रबंध में कमलेश्वर के तमाम उपन्यासों में अभिव्यक्त मानव–समाज से संबंधित विशिष्ट तथ्यों–तत्त्वों को प्रस्तुत कर पाना संभव नहीं था । कमलेश्वर के 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास ने समसामयिक भारतीय जनमानस को हिलाकर रख दिया है । उसका मेरे मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा । परिणाम स्वरूप मैंने दृढ़ संकल्प कर लिया कि पीएच.डी.(हिन्दी) उपाधि के लिए कमलेश्वर के उपन्यासों पर ही शोधकार्य करूँगी । मैंने सौराष्ट्र युनिवर्सिटी के हिन्दी भवन के रीडर और यशस्वी शोध–निर्देशक डॉ. शैलेश के. महेता से संपर्क स्थापित किया और अपने शोध–प्रबंध के बारे में विस्तारपूर्वक विचार–विमर्श किया । डॉ. महेता साहब ने अपनी सूक्ष्म शोध–दृष्टि से कुछ देर तक चिन्तन किया और शोध के लिए विषय–शीर्षक तय कर दिया – ''कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता ।''

❖ विषय का महत्त्व

सुप्रसिद्ध हिन्दी उपन्यास कार कमलेश्वर के उपन्यासों में मानव सहज अनुभूतियों को रेखांकित किया गया है । वर्तमान युग में मनुष्य अपने ही जीवन की आपाधापी में दौड़ रहा है । आर्थिक सुदृढ़ता और भौतिक सुखों के लालच में वह निरन्तर दौड़ रहा है । आज ऐसा प्रतीत होता है कि इस आपाधापी में इन्सानियत कहीं खो गई है । कमलेश्वर जी मानव की इस आपाधापी से कहीं दूर बैठकर इन्सान की अंधी दौड़ और उसकी प्रवृत्तियों का निरीक्षण करते रहे । उनमें मानव सहज प्रेम की उदात्त भावना प्रस्फुटित होती रहती है । उन्होंने अपने उपन्यासों में आधुनिक युग के व्यक्ति की विडम्बनाओं के चित्र उकेरे हैं । कमलेश्वर सिर्फ उपन्यासकार ही नहीं हैं, अपितु वे समाज के सजग–सचेत प्रहरी भी हैं । आज के भटकते–भागते लोगों की अंधी दौड़ में गिरता–भागता इन्सान किस हद तक दौड़कर अपनी संवेदनाओं को कुचलता जाता है, उसका सजीव व यथार्थ चित्र कमलेश्वर के उपन्यासों में प्राप्त होता है ।

कमलेश्वर के उपन्यासों में केवल समसामयिक युग का ही चित्र नहीं है, बल्कि स्वतंत्रतापूर्व के युग को भी वे नजरअंदाज नहीं करते । मानव समाज और देश के प्रति उनके हृदय में गहन प्रेम है । आधुनिक युग का इन्सान अपने आप तक ही सीमित हो गया है । देशप्रेम की भावना प्रायः लुप्त हो गई हो ऐसा प्रतीत होता है । स्वाधीनता–संघर्ष के दौरान भारतीय लोग आज़ादी प्राप्त करने हेतु सबकुछ त्यागकर सरफरोशी की तमन्ना लिए हुए निकल पड़ते थे । समग्र देश में बलिपंथ पर चलने की होड़ाहोड़ी मची हुई थी । किन्तु स्वाधीनता

प्राप्ति के पश्चात् जैसे देशवासियों का रक्त ठंडा पड़ गया और राष्ट्रप्रेम का झरना सूखने लगा । उक्त परिप्रेक्ष्य में कमलेश्वर के उपन्यासों का शोधपरक अनुशीलन करना और उनमें प्रतिबिंबित सामाजिकता के सूत्रों का आकलन करना आवश्यक प्रतीत होता है । भारतीय स्वतंत्रता को सफल एवं सार्थक करने की दिशा में कमलेश्वर के उपन्यास नयी स्फूर्ति और चेतना प्रदान कर सकते हैं । इसी लक्ष्य को साकार और सिद्ध करने के लिए शोधार्थी ने उक्त विषय का चयन किया है ।

❖ शोध–क्षेत्र की सीमा

कमलेश्वर के अबतक प्रकाशित निम्नांकित उपन्यासों में प्रतिबिंबित–चित्रित सामाजिकता के विभिन्न आयामों–पक्षों का वैज्ञानिक ढंग से शोधपरक अनुशीलन करना शोधार्थी का अभीष्ट है :

(१) एक सड़क सत्तावन गलियाँ

(२) रेगिस्तान

(३) समुद्र में खोया हुआ आदमी

(४) तीसरा आदमी

(५) काली आँधी

(६) लौटे हुए मुसाफिर

(७) सुबह दोपहर शाम

(८) डाक बंगला

(९) कितने पाकिस्तान

❖ शोध–सामग्री–संकलन

शोधार्थी ने उक्त आधार ग्रंथों को पहले ही खरीद कर अपने पास रख लिया था । विषय से सम्बन्धित अन्य सहायक ग्रंथ सौराष्ट्र युनिवर्सिटी केन्द्रीय ग्रंथालय, राजकोट, गूजरात विद्यापीठ ग्रंथालय, अहमदाबाद, गुजरात युनिवर्सिटी ग्रंथालय, अहमदाबाद, एस.पी. युनिवर्सिटी, वल्लभविद्यानगर ग्रंथालय एवं सी. बी. पटेल आर्ट्स इन्स्टिटयूट, नड़ियाद के ग्रंथालय से प्राप्त किए गए । साथ ही मेरे शोध–निर्देशक डॉ. शैलेष महेता की निजी लाइब्रेरी से भी पर्याप्त सामग्री प्राप्त की गई ।

❖ प्रस्तुत शोध–कार्य द्वारा प्रस्तावित योगदान

(१) उपन्यास–साहित्य में सामाजिकता–सामाजिक चेतना की अवधारणा और उसका समाजोत्कर्ष की दिशा में महत्त्व सुस्पष्ट करने का संनिष्ठ प्रयत्न किया गया है ।

(२) कमलेश्वर के उपन्यासों का सामाजिकता के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन–अनुशीलन करके साहित्य और समाज के पारस्परिक संबंध की घनिष्ठता पर व्यापक प्रकाश डालकर सामाजिक चेतना के विकास में उपन्यास साहित्य के महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है ।

(३) कमलेश्वर के उपन्यासों में वर्णित वैयक्तिक विडम्बनाओं एवं सामाजिक विषमताओं को रेखांकित करके समाज–जीवन को

स्वस्थ व सार्थक बनाने का मार्ग प्रशस्त करने की चेतना जगाने का प्रयत्न किया गया है ।

(४) कमलेश्वर के तमाम उपन्यासों का एकत्र वैज्ञानिक ढंग से शोधपरक अनुशीलन करके उनके औपन्यासिक अवदान को समाकलित करने, हिन्दी शोध-क्षेत्र को समृद्ध करने एवं नवीन शोध की संभावनाओं को उजागर करने का कदाचित् यह प्रथम प्रयत्न माना जाए ।

❖ शोध-प्रबंध का परिचय

प्रस्तुत शोध-प्रबंध को छः अध्यायों में विभाजित किया गया है । प्रारंभ में 'प्रस्तावना' एवं अंत में 'उपसंहार' तथा ग्रंथानुक्रमणिका प्रस्तुत की गई है ।

प्रथम अध्याय :

सामाजिकता : तात्पर्य और व्याप्ति

इस अध्याय में समाज का स्वरूप और विकास, समाज और साहित्य (उपन्यास के संदर्भ में) तथा सामाजिकता की अवधारणा-तात्पर्य एवं व्याप्ति पर प्रकाश डालकर शोधव्य-विषय की व्यापक भूमिका स्पष्ट की गई है । साथ ही सामाजिक चेतना के विकास में विशेषतः उपन्यास-साहित्य के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है ।

द्वितीय अध्याय :

कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा : परिचयात्मक अध्ययन

इस अध्याय में कमलेश्वर के प्रकाशित हिन्दी उपन्यासों - (१) एक सड़क सत्तावन गलियाँ (२) रेगिस्तान (३) समुद्र में खोया हुआ आदमी (४) तीसरा आदमी (५) काली आँधी (६) लौटे हुए मुसाफिर (७) सुबह दोपहर शाम (८) डाकबंगला (९) कितने पाकिस्तान - का कथ्यगत परिचय प्रस्तुत कर उपन्यासकार की सामाजिक दृष्टि एवं अवदान को रेखांकित किया गया है ।

तृतीय अध्याय :

स्वतंत्रता-पूर्व की स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

इस अध्ययन में स्वतंत्रता-पूर्व की स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में कमलेश्वर के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया गया है । स्वातंत्र्य-पूर्व की स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में लिखे गए उपन्यासों की श्रेणी में 'लौटे हुए मुसाफिर', 'सुबह दोपहर शाम', 'रेगिस्तान' और 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' को परिगणित किया जाता है । कमलेश्वर के उपन्यासों की कथाभूमि कस्बे से लेकर शहर के विभिन्न क्षेत्रों तक फैली हुई है । यह कथाभूमि ही एक प्रकार से उस 'वस्तु' को प्रक्षेपित करती है जो समसामयिक समस्याओं, द्वन्द्वों, प्रताड़नाओं, दबावों, अमानवीय क्रूर स्थितियों, कुण्ठाओं और सामाजिक विसंगतियों के विभिन्न बिन्दुओं में प्रसारित है । कमलेश्वर ने अपने उपन्यासों

की पृष्ठभूमि में सामाजिक यथार्थ को भिन्न–भिन्न रूपों में उभारा है । प्रस्तुत अध्याय में शोधव्य उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिकता के नाना स्वरों–सूत्रों को वैज्ञानिक ढंग से रेखांकित किया गया है ।

चतुर्थ अध्यायः

स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

इस अध्याय में स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में कमलेश्वर के उपन्यासों में चित्रित विभिन्न सामाजिक समस्याओं एवं विडंबनाओं का चित्रण किया गया है । स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों से संबंधित उपन्यासों की शृंखला में 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', 'तीसरा आदमी', 'डाक बंगला', 'काली आँधी' और 'कितने पाकिस्तान' की गणना की जाती है ये उपन्यास समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं । समाज के नाना वर्गों और लोगों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं धार्मिक जीवन के रेशे–रेशे को कमलेश्वर ने आलोकित किया है । युग–परिवर्तन से सामाजिक जीवन में भी आमूल परिवर्तन हो जाता है । मनुष्य की मानसिकता बदल जाती है । स्वातंत्र्योत्तर कालीन उपन्यासों में कमलेश्वर ने सामाजिक विद्रूपताओं, विडंबनाओं, धार्मिक राजनीतिक, संकीणताओं और विसंगतियों का यथार्थ निरूपण किया है ।

पंचम अध्याय :

कमलेश्वर के उपन्यासों की पात्र–सृष्टि में सामाजिकता

इस अध्याय में कमलेश्वर के उपन्यासों में चित्रित पात्रों का परिचय कराते हुए उनमें अनुस्यूत सामाजिकता के सूत्रों–तत्त्वों का निरूपण किया गया है । कमलेश्वर मूलतः सामाजिक जीवन के रचनाकार हैं । उनके उपन्यासों में सामाजिक जीवन के बहुआयामी चित्र मिलते हैं । उनके उपन्यास सामाजिक चिंतन के ही प्रतिफल हैं । लेखक की पात्रसृष्टि विलक्षण है । कमलेश्वर समाज में उन चरित्रों का चयन करते हैं, जो सामाजिक चिन्ताओं से पूर्णतः जागरूक हैं और उन्हें दूर करने के लिए प्रतिबद्ध हैं । वस्तुतः कमलेश्वर ने अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता अपने पात्रों के माध्यम से उजागर की है ।

षष्ठ अध्याय :

कमलेश्वर के उपन्यासों में विचार–सृष्टि की सामाजिकता

इस अध्याय में कमलेश्वर के उपन्यासों में निहित विचार–बिन्दुओं का आकलन करते हुए उनके सामाजिकता के निर्वाह में महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है । कमलेश्वर ने अपने समाज की आवश्यकता के अनुसार ही अपने विचारों को बुना है और उनके अनुरूप विषयों को चुना है । साहित्य–सृजन का आधार व्यक्तिगत होता है, परंतु उसकी चेतना उस वर्ग–समाज में समाहित होती है, जिसमें वह साँसें लेता है । इस अध्याय में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं धार्मिक समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में कमलेश्वर की विचारधारा एवं सामाजिक चिन्ताओं का निरूपण किया गया है ।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध के अंत में पूर्व विवेचित तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष–निष्पादन करते हुए प्रतिपादित किया गया है कि कमलेश्वर सामाजिक क्रांतिचेता उपन्यासकार थे ।

अंततः 'ग्रंथानुक्रमणिका' के अंतर्गत आधार ग्रंथों और सहायक ग्रंथों की सूची अकारादि क्रम से प्रस्तुत की गई है ।

❖ कृतज्ञताज्ञापन

यह मेरा सद्भाग्य है कि मैं सौराष्ट्र युनिवर्सिटी, राजकोट की पीएच.डी.(हिन्दी) उपाधि के लिए सामाजिक सद्भाव एवं सामंजस्य को पैदा करने तथा सामाजिक चेतना के विकास को नया बल व गति प्रदान करनेवाले विषय पर शोध–प्रबंध तैयार करने में सफल हुई हूँ । सबसे पहले मैं अपने विद्वान शोध–निर्देशक डॉ. शैलेष महेता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करती हूँ, जिन्होंने विषय–निर्वाचन की प्रेरणा प्रदान की तथा विषय के महत्त्व से अवगत कराकर मेरी शोधयात्रा का श्रीगणेश करा दिया । हिन्दी भवन के यशस्वी अध्यक्ष डॉ. बी. के कलासवा के प्रति मैं हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने मेरी शोधकार्य से संबंधित जिज्ञासाओं का समाधान करते हुए मेरा हौसला बढ़ाया । साथ ही हिन्दी भवन के पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष डॉ. एस. पी. शर्मा और पूर्व प्रोफेसर डॉ. गिरीश त्रिवेदी का भी आभार मानती हूँ जिन्होंने मेरे शोध–विषय के संबंध में आस्था प्रकट कर मेरा उत्साहवर्धन किया ।मेरे

इस सारस्वत अनुष्ठान में नड़ियाद एज्युकेशन सोसायटी के प्रमुख श्री आर. बी. पटेल तथा सी. बी. पटेल आर्ट्स इन्स्टिटट्युट के प्राचार्य एवं हिन्दी विद्वान डॉ. मनोजभाई दुधात्रा की शुभकामनाओं ने मुझे नया बल प्रदान किया तदर्थ मैं उनका अंत:करणपूर्वक आभार मानती हूँ । मैं अपनी जीजी और पुत्र प्रकाश, पुत्रवधू ध्वनि एवं पुत्री श्वेता को विस्मृत नहीं कर सकती क्योंकि स्नेह–सहयोग से ही मेरी शोधयात्रा सुचारूपेण संपन्न हो सकी ।

नड़ियाद विनीता

दिनांक : (रानी गुरसहानी)

प्रथम अध्याय

सामाजिकता : तात्पर्य और व्याप्ति

(१) समाज का स्वरूप और विकास ।

(२) समाज और साहित्य : उपन्यास-विशेष संदर्भ ।

(३) सामाजिक-चेतना-सामाजिकता का तात्पर्य और व्याप्ति ।

(४) निष्कर्ष ।

(१) समाज का स्वरूप और विकास

यदि भारतीय संदर्भ में यह देखने का प्रयास करें कि समाज की उत्पति कब हुई तो ज्ञात होगा कि सबसे पहले पुरुष मनु थे । हिन्दी के प्रख्यात कवि जयशंकर प्रसाद कहते हैं कि मनु हिमालय के हिम-शिखरों पर बैठे हुए सृष्टि के विनाश को देख रहे थे ।उनके ऊपर और नीचे पानी था । विनाश लीला के थमने पर मनु ने जब शांति की साँस ली तब उन्हें श्रध्धा मिली । मनु और श्रध्धा ने मिलकर भरत को जन्म दिया और इस तरह समाज का सिलसिला चल पड़ा । बाइबल में भी कथा है आदम और हौआ ने समाज की संरचना की । यही तथ्य स्पष्ट होता है कि जब से इस पृथ्वी पर मनुष्य आया है, समाज की परंपरा भी तब से ही है ।

साधारण अर्थ में समाज शब्द का प्रयोग व्यक्तियों के समूह के लिए किया जाता है । हिन्दी शब्द सागर में समाज का अर्थ है (१) संघ, गिरोह, दल । (२) एक ही स्थान पर रहनेवाले अथवा एक की प्रकार का व्यवसाय आदि करनेवाले लोग जो मिलकर अपना समूह बनाते हैं । जिसे समुदाय कहते हैं । (३) वह संस्था जो बहुत से लोगों ने एक साथ मिलकर किसी विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्थापित की हो (४) प्राचुर्य, समुच्चय, संग्रह । (५) एक प्रकार का गृहयोग (६) मिलना एकत्र होना [१]

समाज का अर्थ :

समाजशास्त्र की भाषा में समाज की अवधारणा बहुत अधिक प्रयोग में आती है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । मेक आरूवर पंजकृत "Society" के अनुवाद में लिखा है ।

Social beings men express their nature by creating & organization which guides & controls their behavior in myriad ways. This organization society liberates & limits the activities of men acts up standards for them to follow and maintain whatever the imperfection and tyrannics it has exhibited in human history. It is a necessary condition of every fulfillment of life. Society is a system of usages and procedures of authority and natural aid of many grouping and divisons of controls of human behaviour and of liberties. This ever changing, complex system we call society. It is the web of social relationship. And it is always changing. "(२) [Society P.5]

मनुष्य समाज से जुडा हुआ है, "वह एक सामाजिक प्राणी है । इस बात को अरस्तू के नाम पर बार बार दोहराया भी जाता है । मनुष्य सामाजिक,

संगठनों, संस्थाओं समितियों, वर्गों, जातियों को बताता है और उनहीं के माध्यम से अपनी सामाजिकता की अभिव्यक्ति भी करता है "।(३)

मानव समाज के निर्माण सामाजिक संगठन जन संख्या निश्चित स्थान और कुछ उद्देश्यों को लेकर होता है । समाज में व्यक्तियों के एक जैसे उद्देश्य होते हैं और वे जीवन के विभिन्न पहलुओं में एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं । भारतीय समाज के लोगों का एक विशेष प्रकार का समाजिक संगठन होता है । वे एक खास तरह का रहन–सहन अपनाते हैं, इसलिए वे सब एक समाज के नाम से सम्बोधित किये जाते हैं ।

सामान्य रूप से समाज का अभिप्राय सामुदायिक जीवन की ऐसी अनवरत एवं नियामक व्यवस्था से है, जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित जाने–अनजाने कर लेते हैं ।"(४)

विद्वानों ने समाज को अनेक प्रकार से परिभाषित किया है। मेकारूवर और पेज ने समाज की परिभाषा देते हुए लिखा है "समाज रीतियों कार्यविधियों तथा पारस्परिक सहायता, अनेक समूहों तथा उनके विभाजनों मानव व्यवहार के नियंत्रणों तथा स्वतंत्रताओं की व्यवस्था है । यह सामाजिक सम्बन्धों का जाल है।"(५)

"Sociological theories में लिखा गया है । "Man is a social animal according to Arristotle. He cannot live

alone. He has to depend upon society do its member being a member of society everyone is above of the social activity and its affected by the activity of the attitudes of other member of society. Thus each member of society is more or less aware of the attitudes and ideologies prevalent in the society." (६) Baker बेकर समाज की परिभाषा देते हैं – સમાજશાસ્ત્ર પરિચય માં બેકર સમાજ ની વ્યાખ્યા આપતા નોંધે છે કે " માનવીની આંતરક્રિયા દ્વારા સાતત્ય ધરાવતી અને પરિવર્તન પામતી જે સામાજિક વ્યવસ્થા વિકસાવે છે. તેને સમાજ કહેવાય છે. (૭)

गिन्स बर्ग का कथन है "समाज ऐसे व्यक्तियों का संग्रह है जो कुछ सम्बन्धों अथवा व्यवहार की विधियों द्वारा संगठित है तथा उन व्यक्तियों से भिन्न है जो इस प्रकार के सम्बन्धों द्वारा बंधे हुए नहीं हैं अथवा जिनके व्यवहार उनसे भिन्न हैं ।" (८)

राइट ने लिखा है "समाज व्यक्तियों का समूह नहीं है । यह समूह के सदस्यों के बीच स्थापित सम्बन्धों भी एक व्यवस्था है । "(९)

डब्लयु ग्रीन ने समाज की व्याख्या और भी विस्तृत रूप से की है "समाज एक बहुत बड़ा समूह है और व्यक्ति उसके सदस्य है, समाज के

अंतर्गत जनसंख्या संगठन, समय, स्थान और विभिन्न हेतु होते हैं । जनसंख्या में सभी आयु और लिंगों के व्यक्ति होते हैं । पुरुष, स्त्री, बच्चे और बूढ़े सभी समाज के सदस्य हैं । उन सदस्यों के विभिन्न संगठन परिवार वर्ग जाति आदि होते हैं । समाज का एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र होता है और सदस्यों के कुछ सामाजिक स्वार्थ और उद्देश्य होते हैं । ये सब समाज के लक्षण हैं । (१०)

फेयर चारूल्ड का मत है – "समाज व्यक्तियों का एक ऐसा समूह है, जो अपने बहुत से प्रमुख हितों उद्देश्यों जिनसे अनिवार्य रूप से स्वयं भी रक्षा या भरण पोषण तथा स्वयं जो स्थायित्व प्रदान करता सम्मिलित है, यों पूरा करने के लिए सहयोग करते हैं ।"(११)

उपरोक्त सभी परिभाषाओं में समाज को व्यक्तियों के समूह के रूप में चित्रित किया गया है । व्यक्ति अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अन्य व्यकितयों के साथ संबंध स्थापित करते हैं । ये लोग विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों के आधार पर परस्पर एक दूसरे के साथ व्यवहार करते हैं । यह सब कुछ निश्चित किए गए नियमों के आधार पर ही होता है । इसमें कुछ पारस्परिक इच्छाएँ – अपेक्षाएँ जुड़ी रहती हैं । इन सबसे मिलकर बननेवाली व्यवस्था को ही समाज कहा गया है ।

समाज का विकास धीरे धीरे होता है । प्रसिद्ध समाजशास्त्रीय विचारक आगस्त काम्टे का मानता है कि समाज के विकास के लिए गति आवश्यक है । समाज के विकास के लिए गति एक अनिवार्य तत्त्व है । सामाजिक गति भी एक निश्चित दिशा है एक निश्चित लक्ष्य है । समाज में गति एवं प्रगति होती है । साथ साथ परिवर्तन भी होते हैं इतिहास हमें बताता है कि किस किस प्रकार समाज में परिवर्तन हुए । वास्तव में सामाजिक परिवर्तन ही सामाजिक प्रगति के रूप में प्रस्तुत होता है।

समाज शास्त्रीय विचारक आगस्त काम्टे सामाजिक प्रगति के तीन प्रकार करता है । ये प्रकार हैं भौतिक उन्नति Physical Progress बौध्धिक उन्नति Intellectual progress नैतिक उन्नति Moral Progress (१२) इन तीनों प्रकार भी उन्नतियों से ही समाज का विकास संभव है ।

भौतिक उन्नति – मानव समाज की आधारभूत उन्नति भौतिक उन्नति है । इस उन्नति के बिना किसी प्रकार की प्रगति संभव ही नहीं होती । भौतिक उन्नति का सामान्य अर्थ मनुष्य के बाहरी रहन–सहन एवं खान–पान की उन्नति है । काम्टे के मतानुसार सामाजिक प्रगति के विकास क्रम में इसका पहला परंतु निचला एवं कम महत्त्वपूर्ण स्थान है । भौतिक उन्नति सामाजिक प्रगति भी पहली सीढ़ी है । (१३) बौध्धिक उन्नति – सामाजिक प्रगति के अंतर्गत बौध्धिक उन्नति का विशेष महत्त्व है । बौध्धिक विकास एवं प्रगति के

द्वारा ही हम समाज में संगठन एवं विघटन अथवा अव्यवस्था के कारणों को ज्ञात कर पाते हैं । सामाजिक जीवन में सामंजस्य लाने के लिए भी बौध्धिक उन्नति आवश्यक है । “काम्टे का विचार था कि यदि हमारी बुध्धि सामाजिक सामंजस्य के महत्त्व को स्वीकार कर ले तो समाज में व्याप्त स्वार्थ की भावना परार्थ की भावना में परिवर्तन होनी संभव है । इससे सामाजिक विकास एवं प्रगति होती है । परंतु यह सबकुछ बौध्धिक उन्नति के द्वारा ही संभव है ।(१४) नैतिक उन्नति सामान्य रूप से समाज के विकास में बौध्धिक उन्नति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है । आगस्त काम्टे ने नैतिकता को महत्त्व देने के साथ ही साथ एक विशिष्ट धर्म का भी प्रतिपादन किया जिसे उसने मानव प्रेम, धर्म (Religion of love of humanity) का नाम दिया । (१५)”

जिस प्रकार समाजशास्त्री अगस्त काम्टे ने समाज के विकास के लिए तीन प्रकार की उन्नतियों का जिक्र किया है । तो उसी प्रकार ‘मानव समाज के विकास के लिए कार्ल मार्क्स ने सामाजिक विकास के आर्थिक आधार के दो अंग माने हैं । (१) उत्थान की शक्तियाँ (२) आर्थिक सम्बन्ध । प्रथम में यंत्र इत्यादि आते हैं तो द्वितीय में स्वामित्व तथा वितरण की प्रथाएँ । इसी प्रकार वितरण के माध्यम सिकक्‍ों तथा बैंक इत्यादि के प्रवेश के साथ – साथ समाज में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए ।"(१६)

काल मार्क्स का मानना है कि समाज में सदैव विरोधी वर्ग रहे हैं (१) दास प्रथा वाला समाज (२) सामंतशाही समाज (३) पूंजीवादी समाज ।

सभी समाजों में सर्वहारा लोगों का शोषण हुआ । साथ-साथ दो वर्गों का संघर्ष बढ़ा । संघर्ष की भावना जाग्रत होने से मानव अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो जाता है । इसी प्रकार समाज मानव चेतना के जाग्रत होने से विकास की और उन्मुख होता है। (१७)

उपर्युक्त विभिन्न विचारको की परिभाषाओं का अनुशीलन करने से हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि विश्व के विभिन्न देशों और क्षेत्रों में जो मानव-समूह निवास करते हैं, उनके अलग - अलग रीति-रिवाज, आचार-संहिता, संबंधों को व्यवस्थाएँ होती हैं, उन सभी में जो एक सर्वसामान्य तत्त्व है वह है परस्पर सद्भाव और सौहार्द की भावना । इसमें यदि व्यतिक्रम उपस्थित होता है या समाज में रह रहे व्यक्तियों या वर्गों की भावनाओं को ठेस पहुँचती है तो आपस में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है । इनहीं संघर्षों से बचने के लिए जो सामाजिक नियम बनते हैं या जो सहानुभूतिपरक विचार विकसित होते हैं, वह सामाजिक चेतना का आधार बनते हैं ।

(१) समाज और साहित्य-उपन्यास : विशेष संदर्भ

समाज और साहित्य दोनों एक दूसरे के पूरक हैं । 'साहित्य' समाज की चेतना में साँस लेता है । वह जनता के सुख-दुःख, हर्ष - विषाद, आकर्षण विकर्षण के ताने-बाने में बुना जाता है । उसमें मानव जीवन की व्याख्या है,

जो उन मानवों की आहों – दर्दों को ध्वनित करता है । इसलिए वह पूर्णतः मानव केन्द्रित है । मानव सामाजिक प्राणी है । सामाजिक समस्याओं से वह घिरा हुआ है, जिसका प्रभाव उसके जीवन पर पड़ता है । इसी से विद्वानों ने साहित्य को समाज का दर्पण कहा है ।"(१८) साहित्य का मानव हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ता है । समाज का विकास तभी सम्भव है 'जब हमारा लक्ष्य संवेदनशील तथा बुध्धि विकसित और परिष्कृत हो । इन दोनों कार्यों के लिए साहित्य सबसे प्रभावशाली साधन है । वह हमारे हृदय को संवेदनशील बनाता है । वह हमारी अनुभूतियों का परिष्कार करता है । साहित्य सेवन से हमारा मन परिष्कृत और हृदय उदार हो जाता है साहित्य का आनंद लेने के लिए हमें सतोगुणात्मक वृत्तियों में रमने का अभ्यास हो जाता है । साहित्य सेवन से मनुष्य की भावनाएँ कोमल बनती हैं । उसके भीतर मनुष्यता का विकास होता है, शिष्टता और सभ्यता आती है, जिससे दूसरों के साथ व्यवहार करने की कुशलता प्राप्त होती है । इससे समाज में शांति की स्थापना होकर विकास का मार्ग प्रशस्त होता है । अतः सामाजिक जीवन में साहित्य का महत्त्व निर्विवाद है ।"(१९)

उपन्यास : एक नयी विद्या

'उपन्यास की परिगणना कथा साहित्य के भीतर होती है और कथा साहित्य में भारतीय वाङमय समृद्ध नहीं वरन् संसार के कई देशों का गुरु भी कहा जा सकता है ।'(२०) उपन्यास वह हिन्दी में ही नहीं बल्कि सभी भारतीय भाषाओं में पश्चिम की देन है । पश्चिम में उपन्यासों का विकास रोमांस कहानियों से हुआ परन्तु उसका वास्तविक रूप तो सेम्युअल रिचाड्‌र्सन (१६८९-१७६१) के चरित्र प्रधान पामेला से ही मिलने लगता है ।'(२१) उपन्यास यंत्र-युग की देन है और यंत्र युग की मूल चेतना वैयक्तिक स्वाधीनता का आदर्श है । फ्रांस की राज्य क्रांति ने भी उसकी गतिविधि में योग दिया है । गुलामों के मसीहा अब्राहम लिंकन ने प्रजातंत्र के लिए कहा है -

"Democracy is the Government of the people, for the people, by the people".

वही इस नई विद्या के लिए कह भी हम सकते हैं -

Novel is the literature of the people, for the people by the people

वस्तुतः उपन्यास नये ज़माने के लिए नये लोंगों की नयी अभिव्यक्ति का नया रूप है ।

प्रेमचंदजी उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र कहते हैं । अर्थात् उपन्यास चित्र है । जिसमें उपन्यासकार मानव चरित्रों को लेकर उनसे मानव चित्रों का निर्माण कर उन्हें अपनी कल्पना के रंगों से सजाता है । उपन्यास में यथार्थ चिंतन अपेक्षित है, जो मनुष्य के जीवन के रहस्यों को उद्घाटित करता है ।

हिन्दी साहित्य में अनेक विधाएँ हैं । कहानी, नाटक, संस्मरण, रेखाचित्र, उपन्यास आदि । वर्तमान हिन्दी उपन्यास हिन्दी साहित्य के लिए एक सर्वथा नई देन है । अतः इस नई विधा उपन्यास की व्याख्या भी बड़ी विशिष्टता से की गई है । 'उपन्यास प्रसादनम्' अर्थात प्रसन्न करने को उपन्यास कहते हैं । "The History of English literature" में सामाजिक उपन्यास को मध्यवर्गीय का प्रतिबिंब माना गया है ।

"He is regarded as the best vehicle equipped to present a picture of life lived in a given society against a stable background of social and moral values of people, who were recognizable like the people encountered by readers and this was the kind of picture of life the middle class reader wanted to read about. The novelists concentrated on the social political, economic aspects of

society and sought to fight a solution to the rampant evils of the age"(२२)

सामाजिक उपन्यास में सामाजिक युग के विचार आदर्श और समस्याएँ चित्रित रहती हैं । सामाजिक समस्याओं का चित्रण – उनका मुख्य उद्देश्य होता है । इन पर राजनैतिक सामाजिक धारणाओं और मतों का विशेष प्रभाव रहता है । समाज के चित्रण के अभाव में उपन्यासों की रचना करना संभव नहीं है ।"(२३) 'समाज केन्द्रित उपन्यासों की दो कोटियाँ हैं, इन्हें हम सामाजिक और समाजवादी उपन्यास कह सकते हैं । सामाजिक उपन्यासों में सामाजिक जीवन का चित्रण रहता है किंतु उसे देखने की लेखक की कोई निर्दिष्ट दृष्टि नहीं रहती ।'(२४) 'समाजवादी उपन्यासों में एक निर्दिष्ट दृष्टि होती है, यह दृष्टि लेखक भी अपनी निजी दृष्टि नहीं हो सकती । वह मार्क्स वादी' होती है । अर्थात् मार्क्स ने सामाजिक यथार्थ का जो विश्लेषण किया है उसे ये उपन्यास नहीं छोड़ सकते हैं ।"(२५)

समाज में फैली हुई वर्ग विषमताओं को जनसमुदाय के समक्ष प्रस्तुत करना ही समाजवादी उपन्यासकारों का लक्ष्य था । समाजवादी उपन्यासों में प्राय: सामान्य पिसी हुई जनता और जीवन की नवीन शक्तियों के प्रति सहानुभूति तथा उन्हें स्थापित करने का भाव, असंगतियों से ग्रस्त, झूठी शान के गर्वीले लोगों और सड़ी-गली प्राचीन जिन्दगी के ठेकेदारों के प्रति कठोर आक्रोश दिखाई पड़ता है । इन उपन्यासकारों ने किसान, मजदूर और मध्यवर्ग

से अपने अधिकांश पात्रों को चुना है ।"(२६) प्रेमचंद के काल में हिन्दी के सामाजिक उपन्यास साहित्य का अभूतपूर्व विकास हुआ । प्रेमचंद के उपन्यासों में उस युग का राजनैतिक और सामाजिक भारत साकार हो उठा । ' प्रेमचंद के उपन्यास मनोरंजन के साधन भी हैं और सत्य के वाहक भी । "(२७)

प्रेमचंद की किसान पंरपरा को तजकर हिन्दी उपन्यास अनेक नई शाखाओं में बढ़ा-तत्त्व और रूप दोनों ही दृष्टि से । एक धारा निम्न मध्यवर्ग के जीवन, उनकी निराशाओं और समानताओं को अपनाती है । इसके प्रमुख परिचायक जैनैन्द्र, भगवतीप्रसाद बाजपेयी, उपेन्द्रनाथ अश्क आदि हैं । दूसरी धारा व्यक्तिवादी, अहंवादी, नाशवादी दृष्टिभोग को अपनाती है । इसके प्रतिनिधि भगवती चरण वर्मा और अज्ञेय आदि हैं ।

संक्षेप में आज हिन्दी उपन्यास साहित्य निरंतर विकसित होता जा रहा है आज समाज में साहित्य के इस अंग-उपन्यास की अत्यधिक मांग है । इन उपन्यासों का मूलस्वरूप प्रगतिशील जन-चेतना है । वर्तमान सामाजिक जीवन की विभीषिका अपने विभिन्न रूपों में नये उपन्यासों के माध्यम से अभिव्यक्ति हो रही है ।

(३) सामाजिक चेतना – सामाजिकता का तात्पर्य और व्याप्ति

उपन्यास इस नये युग के नये मनुष्य की नयी विधा है । उसका स्वरूप अत्यंत जटिल, अनिश्चित एवं नित्य परिवर्तित है । वर्तमान युग तो द्रुत गति से भाग रहा है । इस द्रुतगामी काल को पाने की चेष्टा में नित्य नवीन रूपों की खोज कर रहा है । उपन्यास का वस्तुगत एवं शिल्पगत वैविध्य बढ़ता जा रहा है । साहित्यिक उपन्यास अपने यथार्थधर्मिता को लेकर स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर एक विशेष साद्यान्त जीवन दृष्टि के साथ-साथ नित्य नवीनता और व्यापक चेतना को लेकर अपने विकास पंथ की ओर अग्रसर हो रहा है ।

यथार्थवाद : उपन्यासकार अपने उपन्यास में यथार्थधर्मिता का निर्वाह अनिवार्य रूप से करता है । आदर्शवादी उपन्यासकार भी यथार्थ की अवहेलना नहीं कर सकता । रचनाकार का आदर्श यथार्थ की भूमि पर ही फलता फूलता है ।

यथार्थ का तात्पर्य है मानव-जीवन की घटनाओं का ब्योरा । आधुनिक युग में आत्मिक प्रेम का स्थान शारीरिक प्रेम ने लिया है । 'डाकबंगला' की नायिका विरेन से आत्मिक प्रेम करती है पर वह उसमें धोखा प्राप्त करती है । अंततः उसका जीवन एक डाकबंगला बन जाता है । जवानी जब गुजर जाती है मध्याह्न जीवन जब हिसाब मांगता है तब यथार्थ की प्रतीति होती है ।

स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर

उपन्यास गति कर रहा है । प्रथम उपन्यास उपदेशात्मक संदेशवहन के माध्यम थे । आज के उपन्यासों में कथानक चरित्र–चित्रण कथोपकथन, वातावरण और उद्देश्य विहित होते हैं । चरित्रों का उत्थान कथोपकथन से होता है । कथोपकथन के माध्यम से रचनाकार गहन एवं सूक्ष्म यथार्थ को प्रस्तुत करने में सफल होता है।

साद्यान्त जीवन दृष्टि : प्रत्येक साहित्यिक उपन्यासकार की एक विशिष्ट जीवन–दृष्टि होती है । उसके प्रत्येक चरित्र के निर्माण में कथोपकथन में यहाँ तक भी प्रत्येक वाक्य से जीवन दृष्टि की गूँज अनुगूँज स्पष्ट सुनाई पड़ती है । प्रेमचंद, जैनेन्द्रकुमार, कमलेश्वर, अज्ञेय, रेणु आदि उपन्यासकारों का अपना एक जीवन दर्शन है जो उन्होंने व्यक्तिगत संघर्ष व साधना के साथ प्राप्त किया और यही जीवन दर्शन उनके उपन्यासों में झलकता है । नित्य नवीनता : उपन्यासों में आधुनिक युग की नित नवीनता का होना अपेक्षित है । जो नोवेल नाम को सार्थक करता है । व्यक्ति नवीनयुग से ताल से ताल मिला रहा है पर नित नई घटनाओं से वाकिफ नहीं होता है । उपन्यास ऐसा होना चाहिए जिसमें हमेशा नित–नवीनता प्राप्त हो । जितनी ही बार पढ़े उसकी रचना सृष्टि में उतने ही ज्यादा पाठक डूबे वहीं उस उपन्यास के रचनाकार की सार्थकता–सिद्धि है ।

व्यापक चेतना

उत्कृष्ट साहित्यिक उपन्यासों में एक ओर विशेषता उनकी चेतनागत व्यापकता है । उपन्यासकार व्यक्ति, समाज और यथार्थ के साथ जुड़ा है रचनाकार ही भिन्न–भिन्न चेतना की चिंनगारी को हवा दे सकता है । चाहे वह व्यक्ति चेतना, सामाजिक चेतना, सांस्कृतिक चेतना, राष्ट्र–चेतना, युग चेतना हो । प्रत्येक युग का उपन्यासकार ही समसामयिक विषमताओं को, जड़ मान्यताओं को नष्ट करने के लिए युगीन चेतना को जाग्रत करता है ।

अतत: समग्रावलोकन के द्वारा निष्कर्ष निकलता है कि साहित्यक उपन्यास ही समाज हित, देश हित, व्यक्ति हित से जुड़े हुए हैं । उपन्यासों की संख्या तो काफी है साथ साथ उपन्यासकारों की संख्या भी कम नहीं है पर उनमें से कुछ ही उपन्यासकार के उपन्यास मील के पत्थर बन सकते हैं । साहित्यिक योगदान देने में सक्षम हैं ।

(४) निष्कर्ष

उपन्यास कोई भी स्पष्ट विचार, उद्देश्य या जीवन दृष्टि को केन्द्र में रखकर लिखा जाता है । यह विचार या जीवन दृष्टि की दृढ़ अभिव्यक्ति ही उसे मनोरंजन मात्र के लिए लिखे गए कथा साहित्य से पृथक करती है । उपन्यास के प्रारंभिक काल में उपन्यास लिखने का मुख्य हेतु मनोरंजन,

उपदेशवादिता, एवं समाज सुधार की भावना हुआ करती थी । प्रेमचंद के उपन्यासों में उपदेशवादिता एवं समाज–सुधार की भावना प्रखर रूप से दिखती है । परंतु बाद में उनकी दृष्टि यथार्थ प्रधान होती गई । उपेन्द्रनाथ अश्क अपने उपन्यासों में चित्रित यथार्थवाद को आलोचनात्मक यथार्थवाद (क्रिटिकल रिआलिज्म) नाम देते हैं । (२८) उपन्यास एक कला है । मुंशी प्रेमचंदजी लिखते हैं – कला के लिए कला का समय वह होता है जब देश संपन्न और सुखी हो । जब हम देखते हैं कि हम भाँति–माँति के राजनीतिक और सामाजिक बंधनों से जकड़े हुए हैं, जिधर निगाह उठती है उधर दु:ख और दरिद्रता के भीषण दृश्य दिखाई देते हैं, विपत्ति का करुण क्रन्दन सुनाई देता है, तो कैसे सम्भव है कि किसी विचारशील प्राणी का हृदय न दहल उठे ?" (२९) नयी पीढ़ी के उपन्यासकार मोहन राकेश ने प्रेमचंदजी के विचारों का समर्थन करते लिखते हैं – पुरानी परम्पराएँ हमसे छुटती जा रही हैं और नई परंपराएँ विकसित नहीं हो पा रही हैं । हमारी इकाइयों में उबलती हुर्ह भावना विद्यमान है, पर इस भावना के सामूहिक उफान के अवसर नहीं आ पाते । आज हमें वर्तमान की यह संकुल पृष्ठभूमि प्राप्त है । इस पृष्ठभूमि के आगे तेजी से बनते हुए इतिहास की साक्षी में हम जो कुछ देख रहे हैं, जैसे जो कुछ अनुभव कर रहे हैं, जैसे जीना चाहते हैं और जैसे जी रहे हैं इन सबका चित्रण आज के उपन्यास में नहीं तो और कहाँ होगा ? प्रेमचंदजी और मोहन राकेश दोनों उपन्यासकार, उपन्यास की यथार्थधर्मिता की ओर संकेत करते हैं ।

हिन्दी उपन्यास साहित्य के कुछ उपन्यासकार व्यक्तिवादी चिंतन को लेकर आगे बढ़े । उनमें खास विशेष रूप से जैनेन्द्रकुमार और अज्ञेयजी के नाम उल्लेखनीय हैं । प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में संघर्ष होते हैं । वे संघर्ष – चाहे ब्राह्य हों अथवा आंतरिक (अंतर्मन के संघर्ष हों । यह तथ्य भी सही है कि अगर बाहय संघर्ष से व्यक्ति जूझ रहा है । संघर्ष की प्रतिक्रिया उसके अंतर्मन पर प्रभाव डालती है । उपन्यासकार उसमें अंतर्मन को टटोलता है, पर उसमें भी यथार्थवाद ही होता है ।

प्रत्येक उपन्यासकार की अपनी एक जीवन दृष्टि, विशेष संदर्भ होता है, जैसे जैनेन्द्रकुमार में आत्मपीड़न का जीवन दर्शन, अज्ञेय में बौद्धिक निरपेक्षता का सिध्धान्त, भगवतीचरण वर्मा में नियतिवादी चिन्तन ।" यह दृष्टि उनके लेखन में प्रत्येक पृष्ठ में प्रतिबिंबित होती रहती है ।

उपन्यासों में समसामयिक समस्याओं का निरूपण होता आया है । प्रेमचंदजी के उपन्यासों में विशेष रूप से समाज लक्षी समस्याएँ उभर आई हैं । आधुनिक युगका मानव संक्रांति युग से गुजर रहा है । समाज का रंग–रूप बदल चुका है । यहाँ तक कि मनुष्य की मानसिकता में बड़ा बदलाव आ चुका है । आज का मानव मानसिक पीड़ाओं का शिकार बना हुआ है । आज के संक्रातियुग में समाज में एवं व्यक्ति के दांपत्यजीवन में विशेष प्रभाव डाला है व्यक्ति सामाजिक आर्थिक और मानसिक समस्याओं से घिरा हुआ है । आज के युग में बढ़ते अनैतिक संबंध, दामत्य विघटन तीसरे पुरुष–नारी का प्रवेश

एक आम बात हो गई है । विवाहपूर्व यौन संबंध एक साधारण बात हो गई है । आज का उपन्यासकार इनहीं समस्याओं के दृश्यों और घटनाओं का उल्लेख अपने उपन्यास के कथ्य में स्पष्ट करता है । संवेदनशीलता का ह्रास हो जाने से सभी रिश्ते–नाते खोखले होते जाते हैं । एक ऊपरी दिखावे का आवरण चढ़ाकर व्यक्ति अपना जीवन गुजार रहा है।

समग्रतः समस्याएँ दिन–प्रति दिन नया रूप धारण करके आती हैं ।जैसे 'गबन' में रमानाथ सरकारी रुपयों का (चुंगी) गबन करता है सिर्फ अपनी पत्नी के समक्ष अपने आपको सक्षम साबित करने में, उसी प्रकार आज का आधुनिक मानव गबन लूट, खसोट करने में लगा हुआ है । उपन्यासकार आज के आधुनिक युग की प्रत्येक परिस्थिति देख समझकर ही उपन्यास के कथ्य को सारगर्भित करते हैं ।

संदर्भसंकेत

१. हिन्दी विश्वकोश, डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी, पृ. १८२

२. श्री मेकआरूवर और श्री पेजकृत–अनुवाद 'सोसायटी' ग्रंथ पृ. ८, ९

३. 'समाज शास्त्र की नई दिशाएँ' लेखक–एस. एल. दोषी, पी.सी. जैन

४. हिन्दी उपन्यास में सामाजिक चेतना डॉ. लालसिंह पृ. ५

५. पं. भगवतीप्रसाद बाजपेयी – अभिनंदन ग्रंथ सम्पादक पं. नंददुलारे बाजपेयी पृ. ८३–८७

६. Sociological Theories - N Jayaplan Page 1

७. સમાજ શાસ્ત્ર પરિચય–લેખક – એ.જી.શાહ પ્રો. જે.કે. દવે પેજ ૩૦

८. डॉ हजारीप्रसाद : हिन्दी साहित्य सहचर पृ.७६

९. The art of fiction - Great critics P. 661

१०. 'समाज शास्त्र नई दिशाएँ' लेखक एस. एल दोषी, पी.सी. जैन पृ.६०

११. आचार्य रामचंद्र शुक्लः हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ.५१८ आ.रा.शु.

१२. रामनाथ शर्मा – राजेन्द्रकुमार शर्मा : प्रमुख समाजशास्त्रीय विचारक पृ.३८

१३. रामनाथ शर्मा – राजेन्द्रकुमार शर्मा : प्रमुख समाजशास्त्रीय विचारक पृ.३९

१४. रामनाथ शर्मा – राजेन्द्रकुमार शर्मा : प्रमुख समाजशास्त्रीय विचारक पृ.३९

१५. रामनाथ शर्मा – राजेन्द्रकुमार शर्मा : प्रमुख समाजशास्त्रीय विचारक पृ.३९

१६. रामनाथ शर्मा, राजेन्द्रनाथ शर्मा : प्रमुख समाजशास्त्रीय विचारक पृ – ७५–७६

१७. वही

१८. राजनाथ शर्मा : साहित्यक निबंध पृ. ३६७

१९. राजनाथ शर्मा : साहित्यक निबंध पृ. ३६८

२०. काव्य के रूप : गुलाबराय पृ. १८०

२१. हिन्दी उपन्यास साहित्य की विकास परंपरा में साठोत्तरी उपन्यास– डॉ. पारुकान्त देसाई, पृ.१४.

२२. J. N. Mundra, S.C. Mundra : History of English literature

२३. राजनाथ शर्मा : साहित्यिक निबंध पृ– ५७६

२४. डॉ. लालसाहब सिंह : हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना, पृ. १११

२५. डॉ. रामदरश मिश्र – हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा पृ.११२

२६. डॉ. रामदरश मिश्र – हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा पृ.११५

२७. राजनाथ शर्मा : साहित्यिक निबंध पृ. ५८४

२८. वही

२९. प्रेमचंद : कुछ विचार पृ.८०

३०. मोहन राकेश : उपन्यास और यथार्थ चित्रण पृ.१३

३१. पारुकान्त देसाई : हिन्दी उपन्यास साहित्य की विकास परंपरा में साठोत्तरी उपन्यास पृ.३३

द्वितीय अध्याय
कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा : परिचयात्मक अध्ययन

(१) समुद्र में खोया हुआ आदमी

(२) सुबह दोपहर शाम

(३) लौटे हुए मुसाफिर

(४) रेगिस्तान

(५) डाक बंगला

(६) तीसरा आदमी

(७) काली आँधी

(८) एक सड़क सत्तावन गलियाँ

(९) कितने पाकिस्तान

भूमिका

प्रस्तुत अध्याय में कमलेश्वर के आलोच्य उपन्यासों का कथात्मक परिचय एवं सार-संक्षेप दिया गया है जिससे आगे के अध्यायों में उनके उपन्यासों में प्रतिबिंबित सामाजिकता के स्वरों-सूत्रों को समाकलित करने में आसानी हो जाएगी । अतएव यहाँ प्रत्येक उपन्यास पर अलग रूप से प्रकाश डाला गया है ।

(१) समुद्र में खोया हुआ आदमी

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' उपन्यास कमलेश्वर का एक सामाजिक उपन्यास है जिसमें उपन्यासकार ने एक मध्यवर्गीय परिवार के माध्यम से महानगरीय जीवन की झाँकी को प्रस्तुत किया है । उपन्यास का मुख्य पात्र श्यामलाल है वह अत्यंत महत्त्वाकांक्षी एवं स्वप्नदर्शी व्यक्ति है । श्यामलाल द्वन्द्व ग्रस्त है । वह ट्रान्सपोर्ट कंपनी में कार्य करता है, उसकी नौकरी चले जाने पर परिवार की स्थिति बहुत खराब हो जाती है । वह तरह-तरह का काम ढूँढता है । आर्थिक परिस्थितियाँ उसे भीतर ही भीतर खोखला बना देती हैं । वह निरीह जीवन व्यतीत करता है, उसके स्वाभिमान को सदा चोट लगती है, वह तंग होकर अपने परिवार सहित दिल्ली चला आता है । दिल्ली जैसे महानगरीय जीवन में उसे अनेकों कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती हैं ।

श्यामलाल को एक बेटा–जिसका नाम बीरून है और दो सयानी लड़कियाँ हैं । बीरून एक समझदार एवं शांत स्वभाव का लड़का है उसमें धीरज साहस और एकाग्रता जैसे गुण है वह बड़ा हुआ लड़का है । पिता की परेशानियों को समझता है । परिवार की दयनीय आर्थिक स्थिति एवं पिता की दयनीय, लाचार दशा से वह अत्यधिक प्रभावित होता है । जल्द से जल्द अपने परिवार के सारे उत्तरदायित्वों को अपने पर लेकर, परिवार के सदस्यों सुख–शांति की जिंदगी देना चाहता है । अतः वह जलसेना में भर्ती होकर सुनहले भविष्य की कल्पना करता है पर होनी को कौन टाल सकता है ? भविष्य की सुंदर कल्पना में समुद्र की अतल गहराइयों में समा जाता है और कभी लौटकर नहीं आता । परिवार के सदस्यों के चेहरों पर थोड़ी मुस्कान आई ही थी कि अचानक उन पर बिजली गिर पड़ती है । परिवार के सदस्य इस हादसे को स्वीकार नहीं कर पाते, उसकी चिर प्रतीक्षा में लग जाते हैं ।

श्यामलाल की बड़ी लड़की तारा एक छोटी–सी दुकान में २५ रुपये माह पर नौकरी कर लेती है । छोटी बहन की पढ़ाई रुक जाती है । श्यामलाल कबाड़ी के सामान की दलाली का काम करता है और कुछ रुपये कमा लेता है, पर जब कबाड़ियों को ज्ञात होता है तो वे एकजुट होकर श्यामलाल के सामने हो जाते हैं । श्यामलाल का थोड़ा बहुत काम और आय को चोपट कर देते हैं । तारा जहाँ काम करती है, परिस्थितियों ने उसे काफी निचोड़ा, वह गर्भवती

बन जाती है । परिवार को जब पता चलता है तो परेशान हो जाते हैं । किसी तरह उसी दुकान के मालिक के साथ उसका ब्याह करवा देते हैं ।

बीरून की माँ अपने मृत बेटे का मुआवज़ा लेने के लिए दफतर दर दफतर भटकती है । उसकी छोटी बहन नर्सिंग कोर्स में लग जाती है । तारा अपनी माँ को अपने घर में पनाह देती है – पर एक आया के रूप में, श्यामलाल एक फेकटरी में काम ढूँढ लेता है और वहीं पास में ही जुग्गी लेकर रहता है । मकान मालिक मकान खाली करवा देता है छह महीनों का किराया चढ़ गया था महानगर रूपी समुद्र में एक छोटा सा परिवार बिखर जाता है ।

"श्यामलाल वर्तमान के परिवर्तित परिवेश के अनुरूप अपने आप को ढाल नहीं सकते हैं । अंत में स्वयं को एकान्त निःसहाय एवं अकेला अनुभव करते हैं । उस महानगर में उसे कोई भी ऐसा नहीं दिखाई पड़ता जो उन्हें सहारा दे सके ।"(१)

कमलेश्वर ने बड़ी बखूबी के साथ जीवन की यथार्थता को प्रस्तुत किया है । एक और उन्होंने महानगरीय समुद्री लहरों के थपेड़ों से जूझते परिवार के सदस्यों को चित्रित किया है । तो दूसरी ओर उन्होंने मानव के टूटे हुए मूल्यों को भी उजागर किया है । रिश्ते क्या हैं ? स्वार्थ की हद कहाँ तक है ? एक बेटी अपनी माँ का शोषण किस हद तक करती है, लाचारी क्या है ? का दु:खद यथार्थ चित्र इस उपन्यास में उभारा है । तारा अपनी माँ से घर का पूरा

काम खाना बनाने से लेकर, बच्चे के गंदे कपड़ों से लेकर बर्तन साफ करवाने तक के सभी काम अपनी माँ से करवाती है और रात में अपना बच्ची भी सँभालने के लिए दे देती है । कितनी स्वार्थता । एक बेटी ही अपनी माँ की ममता का, उसकी लाचारी का, उसकी बेचारगी का लाभ उठाती है । उसकी छोटी बहन नर्सिँग होस्टेल से महानगर की भीड़ को देख रही है । कमलेश्वर ने बड़ी प्रतीकात्मकता से महानगर और भीड़ को समुद्र की भयंकर लहरों के रूप में स्थापित किया है । यह भीड़ निरंतर बढती ही जाती है जिसमें एक ग्रामीण मध्यवर्गीय परिवार के सदस्य एक-एक करके बिखरते गए ।

(२) सुबह-दोपहर शाम

प्रस्तुत उपन्यास 'सुबह-दोपहर-शाम' कमलेश्वर रचित परतंत्र भारत की तनावपूर्ण स्थितियों का जीवन्त वर्णन प्रस्तुत करता है । इस उपन्यास में गुलामी से पीड़ित भारतीय जनता, देशभक्ति की भावना, क्रांतिकारियों की भूमिका और तत्कालीन परिस्थितियों का प्रतिबिंब है । एक ओर उपन्यास में राजनैतिक संघर्ष है तो दूसरी और गांव, सरकार, धार्मिकता, त्यौहारों का भी मार्मिक चित्रण है । कमलेश्वरजी ने इस उपन्यास में मानवीय संवेदनाओं एवं आजादी की कल्पना को बखूबी उभारा है । 'सुबह-दोपहर-शाम' लेखक का

एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है । जो हमें देशभक्ति की भावना जागृत करने की प्रेरणा देता है ।

'सुबह–दोपहर–शाम' में कमलेश्वर ने तीन पीढ़ियों की दास्तान को अंकित किया है । उपन्यास की पृष्ठभूमि मध्यवर्गीय परिवार की देशभक्ति, उनकी कुरबानी को रोशन किया है । स्वाधीनतापूर्व के भारतीयों की राष्ट्रीय भावना बेमिसाल थी । १८५७ के संग्राम में बड़े दादा(बड़ी दादी के पति) अपने राजा साहब को बचाने के लिए अंग्रेजों का सामना करते लड़ते लड़ते शहीद हो गए थे, फिर भी बड़ी–दादी अपने आपको (सुहागिन) सधवा ही मानती है । कमलेश्वरजी ने बड़ी–दादी को एक स्वतंत्र भारत की स्वप्न सृष्टि के रूप में बड़ी संवेदनाओं से राष्ट्रीय–चेतना को उज़ागर किया है ।

'सुबह–दोपहर–शाम' की बड़ी–दादी उपन्यास का प्रमुख एवं आदर्शपात्र है, जिसके हृदय में अंग्रेज और उसकी सल्तनत के प्रति जबरदस्त विद्रोह है । वह शोषितों पर हो रहे अत्याचारों को मिटा देना चाहती है । बड़ी दादी बड़ी ही स्वाभिमानी नारी थी, जिसे अपने भारतीय होने का गर्व था । बड़ी दादी पशुपक्षियों की बातें–भाषा समझती है ।

बड़े दादा और बड़ी दादी प्रथम प्रहर सुबह है, बड़ीदादी का बेटा जसवंत वह दूसरी पीढ़ी अर्थात् दोपहर के रूप में है, और जसवंत की बेटी रानो वह शाम है । बड़े दादा राजा साहब के सिपाहसालार थे, अपनी जान की परवाह न

करते हुए शहीद हो गए और उनका ही बेटा जसवंत अंग्रेजों की दो रुपये की तनख्वाह के लिए अपने देश के साथ गद्दारी करता है । अंग्रेजों की चाटुकारी करता है, अपनी बुआ के रंग में रंग जाता है । दादी अपने ही बेटे के लिए कहती है – "तेरी बुआ इसी पेट की जाई है – पर मेरी कोख से उसे जनम देकर चौदह बरस बाद काली पड़ गई है । वह अपने आदमी के साथ अंग्रेजों की रोटी तोड़ने लगी है । उसकी तड़क भड़क हवेली जैसा तुलवार तुझे ज्यादा सुहाने लगा ।"(२)

बड़ी दादी की सभी चारित्रिक विशेषताएँ उनकी नाती में सन्तो में आ जाती है । जसवंत अपने देश को लाल झंडी दिखाकर अंग्रेजों की रेलगाड़ियों को हरी झंडी दिखाने की नौकरी ले लेता है । वह शहर चला जाता है । बड़ी दादी अंग्रेजों को लंगूर और लोमड़ी के नाम देती है तो उनका ही बेटा जसवंत अंग्रेज हकूमतवाली नौकरी के लिए अपना गाँव छोड़ शहर आ जाता है । जसवंत बस्ती के बड़े बाबू बन गए थे । सन्तो भी बड़ी हो गई थी ।

सन्तो का ब्याह प्रवीन नामक युवा के साथ हो जाता है, प्रवीन का भाई नवीन एक जोरदार क्रांतिकारी है । अपने भाई के ब्याह में तो वह उपस्थित न हो सका, अंग्रजों के कारण । शान्ता को गाड़ी में बिदा कर दिया गया, वहीं नवीन बुर्खा ड़ालकर अपनी भाभी से मिलने आता है । भाभी के आशीर्वाद का अभिलाषी नवीन मिलकर चला जाता है । जिसे पकड़ने में अंग्रेज भी सफल न

हो पाई । नवीन बड़ी चतुराई से अंग्रेजों का खज़ाना लूटकर फरार हो जाता है । अपनी भाभी को होली में आने का वादा करता है ।

सन्तो की शादी के पश्चात चार होली के त्यौहार गुजर जाते हैं पर नवीन नहीं आ पता । सत्नो भी देवर की प्रतीक्षा में बैठी है । पाँचवीं होली पर अनायास नवीन आ जाता है । होली के रंगों में सब मशगुल थे तभी पास की हवेली की खिड़की खुली और बंद हुई किसी को पता न चला, कुछ ही समय में अंग्रेज के सिपाही घर को घेर लेते हैं । उस समय सन्तो बड़ी चतुराई से पानी लेने के बहाने नवीन को रसोई में भेज देती है वहाँ से वह सीधा ऊपर छत पर ले जाती है और कमरे का दरवाजा बंद कर देती है । सन्तो एक वीरांगना बन चुकी थी । उसमें साक्षात दर्गामां का रूप दिखाई देता था ।

इन्सपेक्टर ने गारद को दरवाजा तोड़ने की सूचना दी । दरवाजा तोड़ दो, दरवाजे पर चोट बढ़ गई । जब सन्तो ने अंग्रेज गारदों को चीख कर कहा – ठीक है – तोड़ दो दरवाजा – पर सोच लो – मेरे तन एक कपड़ा नहीं होगा – देख पाओगे अपनी बहन को नंगा ।

नवीन मना करता रहा, नवीन को क्या मालूम था उसकी भाभी एक 'माँ' दुर्गा बन चुकी थी । सन्तो चीखी लालाजी मैं तुम्हारी भाभी माँ हूं । माँ अपने बेटे को इस तरह नहीं देगी । फिर वह सिपाहियों पर बिगड़ी थी । हिन्दुस्तानी सिपाही एक दूसरे का मुँह देखने लगे, अपनी बंदूकें फेंक दीं सिर झुका कर खड़े

हो गए । इन्सपेक्टर ने अपने सिपाहियों के सामने पिस्तोल तान दी । नवीन की पिस्तोल से गोली चली – इन्सपेक्टर की लाश छतपर गिर पड़ी ।

प्रवीन के बाबूजी ने कहा था

यह बहू नहीं । एक और बड़ी दादी पैदा हुई है ।

इस प्रकार कमलेश्वरजी का 'सुबह–दोपहर शाम' उपन्यास भारत के स्वतंत्रता संग्राम, भारत की शोषित जनता, क्रांतिकारियों की आजादी प्राप्त करने की तमन्ना, भारतीय संस्कृति, धार्मिकता, त्यौहार एवं भारतीय सामाजिक रीतिरिवाजों का अंकन करता हुआ एक आदर्श उपन्यास है । भारतीयों के दिलों में आज़ादी की मशाल को जला दिया, 'सुबह–दोपहर–शाम' एक सुंदर क्रांतिकारी के देश प्रेम का उपन्यास है ।

(३) लौटे हुए मुसाफिर

भारत विभाजन की पृष्ठभूमि में लिखा गया यह एक सशक्त उपन्यास है । देश विभाजन और साम्प्रदायिकता पर चोट करनेवाला अपने ढंग का अनूठा उपन्यास – ''लौटे हुए मुसाफिर'' है । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' की भाँति ही कमलेश्वर इस उपन्यास में निम्नवर्ग और छोटे शहर या कस्बे की जिंदगी की ओर दृष्टिपात किया है ।

इस उपन्यास की अन्य विशेषता यह है कि किन्हीं दो चार पात्रों की दु:ख भरी परिस्थिति का प्रश्न नहीं उठाया है अपितु एक संपूर्ण समुदाय का प्रश्न उठाया है ।

'लौटे हुए मुसाफिर' में उपन्यासकार ने देश–विभाजन के पश्चात की विडम्बनाओं को उभारा है । जिसमें हिन्दू मुसलमान दो जातियों के बीच घर्षण और संघर्ष हुआ, वह साम्प्रदायिकता पर जा पहुँचा ।

विभाजन का परिणाम यह हुआ कि मुसलमानों में नई उम्मीद जाग्रत हुई, जिसने जीवन में उल्लास–उमंग भर दिया । कितने ही सुंदर नए सपनों को संजोने लगे । पाकिस्तान में रोजी–रोटी, रोटी–कपड़ा–मकान मिलेगा, और वे अपने अपने मुल्क में जाने के लिए वे निकल पड़े । रास्ते में गदर बढ़ गया । हिन्दू मुसलमानों का गठबंधन था । वह कुछ लोगों की स्वार्थपरता के कारण जातिवाद खड़ा कर खून की नदियाँ बहाने पर तुले हुए थे, अनेक बेकसूर लोग मारे गए ।

जो अमीर थे वे पाकिस्तान पहुँच गए और जो चिकवों की बस्ती छोड़ के पाकिस्तान की राह पर निकले थे वे आधे रास्ते पर भी पहुँच न पाए, जहाँ वे पहुँचे भारत में, वहीं पर वे बस गए, पाकिस्तान पहुँचने के सपने अधूरे–ही रह गए । वे वहीं पर बस गए । जीवन की यथार्थता का सामना हुआ तो वे सहम गए, कोई कानपुर पहुँचा तो कोई आगरा तक पहुँचे, पर कोई पाकिस्तान

पहुँच न सका । अंतत: परिस्थितियों के साथ समझौता कर वहीं बस गए, उसी नगर में – भारत में ही बसे रहे ।

चिकवों की बस्ती में ही सलमा और सत्तार के प्रेम में बहार आई हुई थी, जातिवाद पहुँच न सका, वैसे भी प्रेम कहाँ जातिवाद और सीमाओं से जुड़ा हुआ है ?

उपन्यासकार की यह बेजोड़ विशिष्टता है कि इस लघु उपन्यास में उसने जातिवाद, राजनैतिक झमेलों से हटकर प्रेम के अस्तित्त्व की महत्ता को अंकित कर दी ।

"लेखक विभाजन की सारी जिम्मेदारी अंग्रेजों पर छोड़ देता है । लेखक 'लौटे हुए मुसाफिर' में निष्फल थिंकिंग का शिकार होकर अपने पात्रों या उनके उत्तराधिकारियों को उन्हीं स्थानों पर लौटा लाता है ।"(३)

कमलेश्वर ने लौटे हुए मुसाफिर में जहाँ जातिवाद, साम्प्रदायिकता के कहर का चित्रण किया है तो दूसरी और प्रेम । सत्तार और सलाम के बेइन्तहा प्रेम की यथार्थता को भी रोमानी अंदाज से आलेखित किया है । सबसे बड़ी और विशिष्ट यथार्थता यह है कि जो अकेले थे और पाकिस्तान के लिए रवाना हुए, मंजिल तक पाकिस्तान तो पहुँच न सके अपितु वापिस अपने चिकवों की बस्ती में प्रेम महोब्बत से एक अधिकार से अपनी बस्ती में वापिस लौट आते हैं, चाची उतने ही प्यार से दुलार से उनका स्वागत करती है ।

(४) रेगिस्तान

कमलेश्वर लिखित 'रेगिस्तान' उपन्यास में लेखक ने स्वाधीनतापूर्व और स्वातंत्र्योत्तर दो भिन्न परिस्थितियों को आलेखित किया है । उपन्यास का नायक विश्वनाथ एक स्वाभिमानी देशप्रेमी युवक है । जिसे अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी से अत्यधिक लगाव है, जिसके लिए वह अपना परिवार, धन दौलत सबकुछ छोड़ छाड़ के हिन्दी भाषा के रंग से भारत के देशवासियों के दिलों को रंगने के भगीरथ कार्य को लेकर निकल पड़ता है । देश की अनेकता में एकता को हिन्दी भाषा की डोर-से बाँधने के लिए अथाह परिश्रम करता है । देश की चारों दिशाओं को उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम को हिन्दी भाषा से उन्हें बाँधना चाहता है । भिन्न-भिन्न प्रांतों को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए अपना संपूर्ण जीवन लगा देता है, गाँव दर गाँव, शहर दर शहर वह हिंदी की पाठशालाएँ खोलता जाता है । हिन्दी के अ,आ,इ,ई की गूंज भारतीयों के दिलो दिमाग में बसा देना चाहता है । किंतु वह अपना संसार नहीं बसा पाता । विश्वनाथ के सूने जीवन में अ,आ,इ,ई के अलावा कोई सुंदर प्रिय ध्वनि नहीं है, उनका जीवन ही हिन्दी है, उनका कर्म ही हिन्दी भाषा का संचार करना है ।

विश्वनाथ भारत के गूंगे-बहरे लोगों को हिन्दी भाषा के स्वर देना चाहता है, स्वरों की झनकार से उनके जीवन को झंकृत कर देना चाहता है । उसका जीवन तो विरान बना हुआ था, हिन्दी के वर्ण ही उसके साथी थे, जो उसके दायें-बायें रहते हैं, यही वर्ण उसके सूने जीवन में उल्लास की लहरें और

शक्ति का संचार कर रही है । दोपहर की तपिश भी उसे बादलों की ठंडक का अहसास कराती है । बादलों की गड़गड़ाहट उसे हिन्दी भाषा के स्वागत के लिए बजते हुए नगारों जैसा अहसास देती है ।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के विस्तार–संचार के लिए उसने जो अभियान उठाया था, उसमें वह अपने जीवन के सुंदर लम्हों को भूलकर, अपनी जवानी के प्रेम की आहुति चढ़ा दी । विश्वनाथ हिन्दी भाषा के प्रचार का भगीरथ कार्य अकेले ही लेकर चलता जा रहा है....बढ़ता जा रहा है....अ...आ...इ....ई...के साथ एक अंत हीन प्रवास की ओर

स्वतंत्रता मिलते ही भारत–देश की परिस्थितियाँ अचानक बदल गईं, विश्वनाथ को अवाक् कर दिया । सभी भारतीयों की मानसिकता में बदलाव आ गया । देश भक्ति के गीत जहाँ चारों और बजते थे, वहाँ फिल्मी गानें बजने लगे थे ।

शहर के बाजारों में महान नेता गांधीजी की तस्वीरों के स्थान पर बाजार में फिल्मी हिरोइनों– के फोटो लगे हुए हैं । फिल्मी गीतों के नशे में मशगुल है, यहाँ तक कि हिन्दी भाषा के स्थान पर अंग्रेजी का चलन संचार होने लगा ।

विश्वनाथ की अ,आ,इ,ई का स्थान A,B,C,D ने ले लिया था।

भारत पाक विभाजन ने भारतीय परिवारों की जिंदगी को नर्क बना दिया था । विश्वनाथ का मित्र बाकर भारत में पैदा हुआ, पला, बढ़ा, जवान हुआ,

उसके बेटे–हुएँ, नाती–पोते, सब हिन्दुस्तान में रहे और बाकर को जबरन पाकिस्तान खदेड़ दिया गया । बाकर के बुढ़ापे को मानो विभाजन का ग्रहण लग गया । सरकार बेरहम होकर बाकर के साथ बर्ताव किया...क्या इसी के लिए आजादी मांगी थी ? कि एक बूढ़े बुजुर्ग को परिवार से काटकर अलग कर एकाकी, ठोकरभरी, दूसरे देश में जिंदगी जीने के लिए विवश किया जा रहा है । बाकर को पशुओं की भाँति खींचकर अपनी जमीन से उसे बेदखल कर दिया जाए ? यह कहाँ का न्याय है ।

'रेगिस्तान' उपन्यास सिर्फ विश्वनाथ की घनीभूत पीड़ा का ही आकलन नहीं करता अपितु उन तमाम भारतीयों की पीड़ा को बड़ी गहराई से बड़ी ही संवेदनशीलता से उपन्यासकार ने अभिव्यक्त किया है ।

'रेगिस्तान' उपन्यास विश्वनाथ के जीवन की व्यथा की दास्तान का बयान करता हुआ दस्तावेज है । विश्वनाथ संपूर्ण भारत के लोगों के कंठ में भाषा के स्वर डालने की तजबीज करता है । भारतीय गूंगे न रह जाए, पर अफसोस इस भगीरथ प्रयास में बेचारा विश्वनाथ! पर अफसोस अंत में इस भगीरथ प्रयास में विश्वनाथ का कंठ ही शिथिल हो जाता है – विश्वनाथ ही अर्ध विक्षप्त अवस्था में आ जाता है ।

कमलेश्वर ने विश्वनाथ के जीवन की यथार्थता को बडी खूबी के साथ अंकित किया है । उपन्यास के अंत में अर्ध विक्षिप्त अवस्था में कुछ स्वर ही

विश्वनाथ निकाल पाता है.... B... for बाकर, B... for बनियान ही बोलता है ।

विश्वनाथ की मानसिकता पर हुए कठोर आघातों का चित्रण ही रेगिस्तान है ...वास्तव में यथार्थ तो यही है कि...विश्वनाथ का जीवन ही एक रेगिस्तान बन जाता है ।

(५) डाक-बंगला

कमलेश्वर मूलतः कहानीकार हैं किंतु उन्होंने अपने आपको सशक्त उपन्यासकार के रूप में भी स्थापित कर अपनी कृतियों में मध्यवर्गीय जीवन के अच्छे-बुरे, सच्चे-झूठे अनुभवों का यथार्थपरक चित्रण किया है । वे नयी दृष्टि और नए मूल्यों को महत्त्व देते हैं । उन्हें जीवन में नवीन संदर्भों की तलाश है जिससे उन्होंने अकेलेपन, अजनबीपन, भटकन तथा अन्य तनाव-पूर्ण मन:स्थितियों का सफल चित्रण किया है । उनके उपन्यासों में 'बदनाम गली'- 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ', 'तीसरा आदमी' (१९६४) प्रमुख रहे हैं । इन उपन्यासों के अलावा अन्य उपन्यास - 'काली आँधी', 'सुबह-दोपहर-शाम', 'रेगिस्तान', 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'कितने पाकिस्तान' आदि मुख्य हैं ।

कमलेश्वर के उपन्यास 'डाक बंगला' की नायिका 'इरा' बीसवीं सदी के संक्रमणग्रस्त भारतीय समाज का सजीव किंतु दयनीय चित्र प्रस्तुत करती है । इरा–जिसने कभी विमल को प्यार किया था । उसके बाद वह अनेक व्यक्तियों के संपर्क में आई बिना प्यार के भी वह सब कुछ होता चला गया जो एक पुरुष और स्त्री के बीच होता है । हर नये प्रेमी में उसने उसी विमल की खोज की । विमल पर जीवन शुरू हुआ, वह विमल पर ही आकर समाप्त हो गया । इससे आगे इरा, इरा नहीं रही ।(४)

जिसका सामान्यसा–बाह्य जीवन वस्तुत: अपने भीतर अनेक राज छिपाये है । आडू और निवरवट के डाक बंगलों में इरा अपनी आप बीती सुनाती है । उसे विमल मिला और उसका हो गया, यही इरा का प्रथम आत्म समर्पण था । प्यार के नाम पर इरा का यही प्रथम और अंतिम प्यार था ।

इरा ने बतरा के यहाँ नौकरी की और विमल इरा के प्रति शंकालु होकर, रुष्ट होकर इरा को छोड़कर बम्बई चला गया इरा बतरा के यहाँ रहने लगी । बिना माँ की बेटी अनेक विषम मोड़ों से गुजरती रही, जीवन के अनेक विचित्र मोड़ गिनाये उसे इरा कहती है – 'तिलक – यह तुम्हारी दुनिया बहुत कमीनी है, यहाँ औरत बगैर आदमी के रह ही नहीं सकती, चाहे उसके साथ पति हो, या भाई या बाप कोई न हो तो नोकर ही हो, पर आदमी की छाया जरूर चाहिए । इसलिए हर लडकी एक कवच ढूँढती है । इस कवच के नीचे वह अच्छा बुरा, हर तरह का जीवन बिता सकती है ।"(५)

बतरा इरा का कवच बना, जो शीला का कवच था । जो बतरा की पत्नी भी और नहीं भी थी । बतरा का अपना भी एक अतीत है रावलपिंडी में शीला बतरा की पड़ोसिन थी । दोनों में प्यार पनपा, लेकिन वे बिछड़ गये । शीला ने बेझिझक कहा - बोलो हेमेन्द्र बतरा चाहो तो मैं तुम्हारे घर तुम्हारी बीबी बनकर रह सकती हूँ ।

कहानी सुनाकर बतरा ने इरा को अपनी आगोश में भर लिया इरा को लगा कि - 'उसका चेहरा, उसके स्पर्श, उसकी साँसें और उसकी मादकता भरी आँखें बिलकुल विमल की तरह थीं - वही उमस और उखड़ती -सी साँसें, और वही समर्पण ।"(६) शीला के कारण इरा को बतरा का घर छोड़ना पड़ा ।

पुरुष के प्रति इरा को नफरत सी हो गई, और प्रेम का रूप नाटक में परिवर्तित हो गया । लेकिन पुरुष के प्रति नारी की घृणा दूसरे ही क्षण दया के रंग में बदल जाता है और फिर उसे पुरुष की आसक्ति में भी बाँधती है । इरा के जीवन में जो आता है वह उसे जीत जाता है, या उसके दु:ख इरा को हार मानने को मजबूर करते हैं या उस पुरुष का अपनापन उसे मार देता है - 'जब भी मैंने आदमी को अकेले में देखा है मेरा मन उसके लिये करुण हो गया, क्योंकि हर आदमी अपने जीवन में बहुत दु:खी है । उसके दु:ख के बदले में उसे प्यार दे सकती हूँ ।'(७)

इरा की जिंदगी का तीसरा मोड़ – जहाँ डाक्टर चंद्रमोहन मिला । एक निरीह और दयनीय पात्र । उसने डाक्टर से शादी कर ली । वह डॉक्टर मजाक बनाती, उसका चश्मा उतारकर भटकाती, घर से निकाल देती लेकिन रहम खाकर फिर उसे अपना लेती ।

डाक्टर धायल हुआ तो इरा भी सम्पूर्ण करुणा उमड़ आई । मैं चाहती हूँ तुम जी जाओ । लेकिन डॉक्टर बच नहीं पाता । वह पंद्रह हजार और एक वाक्य 'अब जैसा तुम चाहो' की वसीयत छोड़कर चला जाता है । डॉक्टर के दारुण अंत ने इरा को हिला दिया । जिस डाक्टर को जीते जी उसने तिरस्कार दिया, मृत्यु के उपरांत उसी डॉक्टर को उसने सच्चा प्यार भी किया ।

तिलक इरा से अभिभूत होकर उसे स्वीकारने के लिए उद्यत होता है पर इरा उसके प्रस्ताव को ठुकरा देती है । और वही इरा कहानी सुनाने के दूसरे दिन सोलंकी के साथ चहकती मिली । मैं आदमी से भागना भी चाहती हूँ और उसी के पास रहना भी चाहती हूँ ।" मेजर सोलंकी को पसंद करती है और उसके जीवन का स्वप्न (सेमल के फूलों का खिलना) साकार होने लगता है । तब उसे बिमारी की अंतिम अवस्था में विमल मिलता है जीवन के अंतिम पहर में वह उसे निराश नहीं करना चाहती । अत: सोलंकी को बिना बताये चली जाती है और अपने हाथों अपने स्वप्नों का (सेमल के लाल फूलों का) गला घोंट देती है । विमल पुन: उसे अकेली छोड़कर सदा–सदा के लिए चला जाता

है । इरा कहती है – "सब कुछ खोकर भी यही हाथ आया । अब और कोई भी ऐसा नहीं है जिसे आवाज दूँ ।"(८)

इरा ने एक बार प्रेम किया और अनेक बार प्रेम का नाटक किया । इसलिये उसने सच्चे प्रेम की खोज में 'प्रेम' का खूबसूरत फरेब किया । पुरुष नारी से खेलता आ रहा है, यहाँ नारी ने पुरुष से खेल किया । इरा शेष पुरुषों को प्यार नहीं करती उन पर दया करती है ।

एक प्रेमिका के रूप में इरा कभी की मर चुकी थी लेकिन एक अभिनेत्री के रूप में जीती रही, हँसती रही, चहकती रही । विवाह उसके लिए नाटक था मनुष्य (पुरुष) के प्रति घृणा, फिर उसी के प्रति प्यार के परस्पर विरोधी मनोवेगों में इरा का जीवन चहक रहा है, भीतर से रो रहा है ।"(९) उसने हर नये व्यक्ति में विमल को ही खोजने का प्रयत्न किया लेकिन वह उसे नहीं मिला ।

कुण्ठाओं, हीन भावनाओं, संस्कारहीन व्यवस्थाओं, लक्ष्यहीन व्यस्तताओं और नाटकीय जीवन की भूमिकाओं से बोझिल इस आधुनिक युग में उसे प्यार नहीं , प्यार के अभिनय की भूमिका ही मिल सकती थी ।

लेखक ने तथाकथित उच्च एवं भद्र समाज में होनेवाले सुशिक्षित नारी के भौतिक शोषण के कोणों को इसमें लेखक ने खराद पर चढ़ाकर और भी नुकीला कर दिया है । उपन्यास के अंत में इरा की टूटन को एक ही वाक्य में व्यंजित

कर दिया है - चलो भाई सूटकेस, चलें-संक्षेप में इरा का जीवन महज एक डाक बंगला बन कर रह जाता है ।

(६) तीसरा आदमी

कमलेश्वर का उपन्यास 'तीसरा-आदमी' में दिल्ली महानगर की विडम्बनापूर्ण परिस्थितियों को उभारा है । महानगरीय जीवन का शिकार सिर्फ नरेश, चित्रा ही नहीं होते अपितु ऐसे अनेक युवावर्ग उन विषमताओं से गुजर रहा है । वैसे भी शेक्सपीयर का एक वाक्य है - 'संशय हमेशा प्रवंचक होता है । संशय का कीड़ा हमारे जीवन-वृक्ष को खा जाता है । पति-पत्नी के संबंधों में विश्वास का तत्त्व प्राण के समान है । इसके अभाव में दाम्पत्य की दीवारें ढ़हने लगती हैं । 'तीसरा आदमी' की कहानी हमारे सामाजिक जीवन की इसी विषबेल के भयंकर परिणामों की कहानी है ।

कमलेश्वर का 'तीसरा आदमी' आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों की उपज है । मैं (नरेश) चित्रा और सुमन्त के बीच घूमती हुई यह कहानी अन्य त्रिकोणात्मक कहानियों से भिन्न है । सुमन्त नरेश का दूरदराज का भाई है । अत: चित्रा और सुमन्त में एक स्वाभाविक नैकट्य या मैत्री है । नरेश जब तक इलाहाबाद आकाशवाणी में रहा तब तक तो वहाँ के परिवेश के कारण उसका अहम् संतुष्ट होता रहा । परन्तु दिल्ली में आ जाने के बाद महानगरीय परिवेश

के कारण उसका अहं टूटने लगता है । दूसरी ओर आर्थिक कठिनाइयों के कारण वह सुमन्त के साथ एक कमरे में रहने लिए बाध्य हो जाता है । पूर्ण स्वतंत्रता या पत्नी पर पूर्णाधिकार बिना आत्मनिर्भरता के असंभव है । आज की आर्थिक विषमताओं के कारण नारी ने घर के बाहर पाँव रखा है तो यह स्वाभाविक है कि किसी तीसरे आदमी के आने की सम्भावना बढ़ जाती है । जाने अनजाने न्यूनाधिक मात्रा में तीसरे आदमी का प्रवेश सहज हो जाता है । यह एक अवश्यभावी परिणाम है "जहाँ महानगर का व्यक्ति उसके साथ समझदारी पूर्वक या पुरानी विचारधारा के अनुसार कायरतापूर्ण समझौता कर लेता है । यहाँ कस्बाई मनोवृत्ति का माध्यवर्गीय पुरुष कुछ हिचक का अनुभव करता है, और उसीमें वह टूटने लगता है प्रस्तुत उपन्यास में नरेश का टूटना इसी प्रकार का है ।" (१०)

अपने अधिक खुले स्वभाव के कारण सुमन्त चित्रा के अधिक निकट होता जाता है । अतः समुन्त-चित्रा का यह बढ़ता नैकटय नरेश को काँटे की भाँति चुभता है । आकाशवाणी के काम से जब नरेश के कुछ दिनों के लिए बाहर जाना पड़ता है तब संशय की यह काली घनी छायाको सुदीर्ध होती जाती है । यहाँ तक कि लेखक ने नरेश की मानसिक प्रतिक्रिया बड़ी विशिष्टता से अंकित किया है ।

चित्रा और सुमन्त दोनों के द्वारा बिल्लीवाले प्रसंग को दोहराये जाना जिसमें यह संकेत किया गया था कि उन दिनों सुमन्त कमरे के बाहर सोया था

कि उन दिनों सुमन्त को देखते ही नरेश चिड़चिड़ा हो जाता । यहाँ तक कि चित्रा के नक्श भी धीरे-धीरे नरेश को सुमन्त जैसे प्रतीत होने लगते हैं । प्रगाढ़ शारीरिक सम्बन्धों के फलस्वरूप स्त्री-पुरुष के रूपाकारों में यह साम्य उभरने लगता है । चित्रा के आसपास मंडराती सुमन्त की वह छाया नरेश को पागल-सा बना देती है । उसके ही शब्दों में रात में...जब मैं चित्रा को अपनी बाँहों में लेता तो एक अजनबी गंध फूटती थी । जब मैं उसकी बाँहों पर हाथ रखता तो वहाँ दो हाथ पहले से मौजूद होते थे । वह छाया मुझे चित्रा के पास पहुँचने से रोकती थी । चित्रा की आँखों में जब मैं झांकता था तो वहाँ चार आँखें झांकती थीं । चार बाहें उसे कस रही होती थी, चार होंठ उसे प्यार कर रहे होते थे ।"(११)

संशय का यह भुजंग न केवल नरेश-चित्रा के दाम्पत्य को डंसता है बल्कि वह सुमंत के जीवन को भी डंस लेता है । प्रस्तुत उपन्यास में लेखक का उद्देश्य इसी मध्यवर्गीय मनोदशा और संस्कार (जो आर्थिक ज्यादा है) को गहराई से एक हल्की विषमता के साथ उभारने का रहा है । आज के मध्यवर्गीय परिवार में किसी भी वस्तु पर किसी का पूर्णाधिकार नहीं होता ।

"कमलेश्वर ने मानवीय संवेदना का स्पर्श किया है । प्रथम अभाव टूटती हुई सम्मिलित कुटुंब व्यवस्था के बीच पनपती हुई व्यक्तिवादी चेतना का परिणाम है, तो दूसरी स्थिति भी वेदना आर्थिक विवशता का परन्तु यह दोनों स्थितियाँ मध्यवर्ग से सम्बद्ध हैं ।"(१२)

लेखक ने 'तीसरा आदमी' में दिल्ली के निम्न-मध्यवर्गीय परिवेश को छोटे-छोटे कमरों के दबड़ों में सड़ती हुई जिंदगी की तस्वीर को पेश किया गया है । महानगरों में जीवन जीता हुआ मध्यवर्गीय परिवार तिल-तिल दम घोंट-घोंट कर, मानसिक त्रस्त होकर जीवन गुजार रहा है । उस जीवन में वह कितनी बार - दम तोड़ता है और कितनीबार वापिस जीवित भी हो जाता है । यही जीवन है । शायद

(७) काली आँधी

कमलेश्वर रचित 'काली आँधी' उपन्यास राजनीति की पृष्ठभूमि पर रचा गया एक लघु उपन्यास है । खजुराहो के बैरिस्टर प्रतापराय की इकलौती बेटी मालती है, प्रतापराय की प्रबल इच्छा है कि उसकी एक मात्र बेटी विदेश पढ़ाई कर अपनी अच्छी केरियर बनाए । मालती के कदम प्रेम-मार्ग, प्रेम की लीक पर उठ चुके थे, जगदीशभाई उर्फ जग्गी बाबू युवक से प्रेम विवाह के पवित्र-बंधन से बंध गई । इन दोनों की इकलौती बेटी है लिली ।

जग्गी बाबू खजूराहों में होटल चलाते हैं । मालती राजनीति में प्रवेश करती है, जग्गीबाबू मालती की हिम्मत बढ़ाते हैं, उसके लिए भाषण की (स्पीच) तैयार कर देते हैं, उनका मानना है कि देश के निर्माण में औरतों को भी आगे आना चाहिए । मालती राजनीति में सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ती जाती

है । वह जिल्ला परिषद वाला चुनाव जीतती है । चुनाव जीते पर मालती के स्वभाव में परिवर्तन होता है । सफलता के नशे की बात की कुछ और है । जग्गीबाबू के साथ उसका संघर्ष शुरू होता है । पति का होटल का बिजनेस मालती की प्रतिष्ठा, उसकी इमेज खराब होने की संभावना महसूस होती है । इस कारण मालती पति को होटल बंद करने की सलाह देती है । कितने ही स्वयंसेवक मालती की राजनीति में, अनेक कामकाज में हाथ बँटाते हैं । पति भी उसके साथ कदम से कदम मिलाकर उसका साथ दे ऐसी मालती की इच्छा है । स्वाभिमानी जग्गीबाबू इसके लिए तैयार नहीं होते, अपना वजूद मिटा देना नहीं चाहते, अपनी स्वाभिमानी को वह छोड़ना नहीं चाहते, दोनों के दरम्यान संघर्ष बढ़ता जाता है । प्रेम और विश्वास के स्थान पर अहम् और स्वमान ले लेता है परिणाम स्वरूप दोनों प्रेमी जीवों की दिशाएँ बदल जाती हैं, दोनों में दुराव आ जाता है और अलग हो जाते हैं ।

जग्गीबाबू अपनी बेटी मालती को पंचमढ़ी के स्कूल में भर्ती कराके भोपाल चले आते हैं वहाँ वो होटल गोल्डन सन के मेनेजर के पद को स्वीकार करते हैं ।

मालती सफलता की रवानगी में अपनी बेटी का प्रेम भी भूल जाती है । मालती का राजनीति में बड़ा नाम होता है । सफलता की प्यासी मालती पति प्रेम और पुत्री प्रेम को पीछे छोड़ आगे कदम बढ़ाती जाती है । मालती की नीति थी – "वक्त, जरूरत–जीत । वक्त के अनुसार किस को कितना मान

देना है, उसकी जरूरत कितनी है उसी के अनुसार वह इस्तेमाल करती है – बशर्ते कि जीत होनी चाहिए ।

लोकसभा का चुनाव मालती भोपाल लोकसभा क्षेत्र से लड़ती है – मालती चुनाव जीतने के सारे दाव-पेंच हथकंडे, पैंतरे, तिडकड़म-बाजियाँ और नाटक खेलती है, जो चुनाव में सफलता पाने के लिए खेले जाते हैं । सफलता के शिखर पर पहुँचने के लिए वह अनेक युक्तियाँ-प्रयुक्तियाँ करती है । यहाँ तक कि अपने पति जग्गी बाबू और अपनी बेटी लिली की संवेदना को भी बक्षती नहीं है ।

झूठी मान प्रतिष्ठा के लिए मालती अपने पति का भी त्याग किया । इकलौती लीली जब ऑटोग्राफ लेने आती है तो उसे भी पहचान नहीं पाती । 'मालतीदेवी जिंदाबाद' के नारों की आवाज़ में पति और प्यारी बेटी की आवाज़ दब जाती है । नारों की अभिलाषी मालती, फूलों, हारों में ऐसी उलझ जाती है कि जीवन के मायने भूल गई, जीवन के सही मूल्य भूल गई । उच्च महत्त्वाकांक्षा की दौड़ में वह अपने स्वप्नों को छोड़ काफी आगे निकल जाती है, अपनी बेटी के दिल को न जीत पाई तो दूसरी ओर जग्गीबाबू अपनी बेटी लिली से इस कदर जुड़े हुए हैं कि – 'मेरे जीवन की मंजिल लिली के सफर में ही पूरी होगी ।' कहकर अपना अपना उत्तरदायित्व स्पष्ट करते हैं । मालती की सफलता की दौड़ में किसी के लिए कोई जगह नहीं है ।

मालती और जग्गीबाबू के दाम्पत्य जीवन में दीमक लग गई थी । लोकसभा प्रचार अभियान में संयोग से मालती उसी होटल में ठहरती है । जिसके मैनेजर जग्गीबाबू हैं । इतने निकट रहते हुए भी दोनों में पति–पत्नी के संबंध फिर से स्थापित नहीं हो सकते, फिर मालती किसके लिए दौड़ रही है । उसके जीवन का खोखलापन जग्गीबाबू के इन शब्दों में स्पष्ट हुआ है.... "तुम्हें अपनी बेरफतार दौड़ती जिंदगी में सोचने का वक्त ही कहाँ मिला है ? मशीनें नहीं सोचतीं, मशीनों के लिए आदमी सोचता है । और सफलता....सफलता सिर्फ एक मशीन है, अब तुम औरत नहीं एक सफलता बन गई हो...जब तुम्हारी मुक्ति और ज्यादा सफल होते जाने में है...और कोई रास्ता नहीं है । यही तुम्हारा एक मात्र रास्ता है ।"(१३)

उपन्यास के अंत में जग्गीबाबू लिली को पंचमढ़ी पहुँचाने के लिए स्टेशन पर थे, और मालती दिल्ली लौटने के लिए दोनों की गाड़ियों के छूटने में सिर्फ पाँच मिनट का अन्तराल है दोनों दो दिशाओं की ओर बढ़ते हैं । पति और पत्नी के जीवन का प्रवास भी भिन्न दिशाओं की ओर चलने वाला था ।

मालती अपने स्वार्थ के लिए औरों को इस्तेमाल की उसे आदत हो जाती है । वह अपने साथियों का इस्तेमाल करती है, जनता की गरीबी का इस्तेमाल करती है, धर्म और जातीय भावना का इस्तेमाल करती है, और परित्यक्त पति का भी इस्तेमाल करती है । उसके लिए चुनाव जीतने की जिजीविषा में वह जनता को कितने वादे, आश्वासन देती है किंतु चुनाव के पश्चात वह किसी के

वादे याद नहीं रखती । जिसने व्याह के पवित्र बंधन को सफलता के यज्ञ में आहुति के रूप में दे दिया तो अन्य आम जनता की बात तो काफी दूर रही । व्यक्ति जब सत्ता से मदहोश हो जाता है तब सामाजिक चेतना महज एक ग्रास बन जाती है । सबसे विचित्र बात तो यह है कि मूढ़ जनता उनकी पूजा करती है ।

"पूंजीवादी समाज व्यवस्था की तथा स्वातंत्र्योत्तर भारतीय जनतंत्रात्मक प्रणाली की यही त्रासदी है ।"(१४) डॉ. अमर अग्रवाल ने लिखा है - "मालती उस पूंजीवादी व्यवस्था की प्रतीक है जो अपने हित और स्वार्थ के लिए आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्ग का शोषण करती है । उन्हें बहकाती है और उनकी कमजोरी का हर जगह जितना संभव हो सका उतना फायदा उठाती है । स्वार्थी और खुदगर्ज व्यक्ति के चित्रण में लेखक ने मालती के रूप में स्वाभाविक और प्रभावी पात्र का चित्रण किया है ।(१५)

इस उपन्यास की नायिका अपना स्त्रीत्व भूल जाती है । वह पत्नी और माता की पवित्र भूमिकाओं को भूल जाती है । राजनैतिक परिस्थितियाँ और मालती जैसे चरित्र स्वातंत्र्योत्तर भारतीय परिवेश के जीवन्त प्रतीक हैं । मालती का चरित्र एक साथ युगीन भी है और सार्वकालिक भी । मालती के चरित्र की प्रेरणा और प्रवृत्ति के बारे में डॉ. माधुरी शाह का कथन है...."उपन्यास की नायिका मात्र एक व्यक्ति न होकर अपने समय के साथ जुड़ी हुई एक इकाई है । जिसकी प्रत्येक उक्ति युग-चेतना से सयुक्त है ।"(१६) प्रस्तुत उपन्यास

का कथ्य महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति के भीतर जुड़ी हुई फासिस्ट वृत्ति को, सत्ता प्राप्ति के सपनों से गुजरने का संकेत देता है । युगीन तथ्य को अभिव्यक्ति देना है ये फासिस्ट वृत्ति न केवल सत्ताकामी व्यक्ति निकटतम संबंधों को खत्म कर देती है । बल्कि तमाम समष्टिमूलक का भी गला घोंट देती है ।

(८) एक सड़क सत्तावन गलियाँ

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' कमलेश्वर का पहला उपन्यास है । जो प्रकाशन की भूल के कारण 'बदनाम गली' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था । कमलेश्वर ने उपन्यास में छोटे शहर या कस्बे की जिंदगी को बहुत करीब से देखा । इस उपन्यास में - दुख-दर्द, आशाएँ, निराशाएँ और हताशाएँ सभी संवेदनाओं को उभारा है । छोटे-से इस उपन्यास में जितने लोग, उतनी ही तरह की जिंदगियाँ हैं, उनकी फिर भी उसमें कोई ऐसी एकसूत्रता है जो उन्हें आपस में जोड़े रखती है । सरनामसिंह और रंगीले, शिवराज और बाजामास्टर, बंसरी और कमला प्राय: सभी इस सूत्र से बँधे हुए हैं क्योंकि ये सब-के-सब किसी-न-किसी रूप में उस वर्ग के सदस्य हैं जो सताया जाता रहा है और प्राय: गुमराह भी किया जाता है ।

"स्वतंत्रता पूर्व लेखकों के स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में समाज के साथ मानव अस्तित्त्व को भी दिया गया है । व्यक्ति के बाहरी परिवेश के अतिरिक्त

उसके अंतर्मन में झांकने का पूरा प्रयत्न किया तथा उसकी आंतरिक परतों को भी खोलने की कौशिश की है । भ्रष्ट राजनेताओं, देश की सामाजिक, आर्थिक स्थिति, सांप्रदायिकता, अवसरवादिता, परंपरा रूढ़ियों के विरुद्ध जनमानस की स्थिति को बड़ी खूबी के साथ उजागर किया है । स्वतंत्रता पूर्व लोगों की जो आशाएँ थीं, स्वतंत्रता पश्चात में धूमिल हो गयीं, उनके सारे स्वप्न स्वप्न ही साबित हुए ।"(१७)

"कमलेश्वर प्रेम और आर्थिक संघर्षों के बीच जूझते, टूटते व्यक्ति के अस्तित्त्व की खोज में लगे हैं । उनके उपन्यास में व्यक्ति की टूटती हुई मानसिकता परंपरागत बिखरते मूल्यों का सटीक चित्रण हुआ है । व्यक्ति जीवन के नाटकीय मोड़ों, उतार-चढ़ाव, उसकी विवशताओं, मजबूरियाँ करुणा आदि को मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से अभिव्यक्त किया है, लोगों में मानव मूल्यों के प्रति आस्था, आत्मविश्वास जगाने का प्रयास किया है ।"(१८)

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' लघु उपन्यास में मुख्य नायक डाकू सरनामसिंह और नायिका बंसरी है । मैनपुरी कस्बे की यह प्रेम कथा है । सरनामसिंह एक ट्रक ड्राइवर है । एक डकैती में सरनाम और बंसरी एक दूसरे को देखते हैं बंसरी सरनाम की और आकर्षित हो जाती है । जब डाकू पकड़े गये । सरनाम अदालत में हाजिर हुआ, बंसरी ने जानबूझ कर सरनाम की शिनाख्त नहीं की । बंसरी भी इस सरनाम पर मेहरबान थी । बंसिरी सरनाम पर फिदा हुई थी "पर सरनाम के दिल में बंसरी की अजीब सी अनुभूति थी -

एक सताई हुई दयावान नारी की, एक नासमझ लड़की की उसको देखकर उसकी पशुता अचानक मर गई थी, अद्‌भुत प्रभाव था उसमें ।"(१९)

दो साल बीत गये । सरनाम सोरो के मेले में नौटंकी में गया । लैला की सखियों में बंसरी थी । वही सीधी सादी बंसरी अब, कूल्हे मटकाती, आँखें नचाना सीख गई थी । नौटंकी कलाकार होते हुए भी बंसिरी स्वाभिमानी जीवन जीने की उम्मीद रखती थी । सरनाम बंसरी का दीवाना बन जाता है । बंसरी एकान्त में उससे कहती है ।- "तू निठल्ला है, समझता है सब इसी तरह रह लेते हैं ।"(२०) बंसरी अप्रत्यक्ष रूप में सरनाम के साथ रहने की इच्छा ही व्यक्त करती है । इसी पहली मुलाकात में बंसरी अपना सबकुछ सरनाम को समर्पित करती है । रात के अँधेरे में तृप्त बंसरी अकेली अपने डेरे की तरफ चली जाती है ।

सरनाम और बंसरी में यह तय हुआ था कि बंसरी सरनाम के साथ चलेगी । ठर्रे की बोतल पकड़ी गई और सरनाम भी पकड़ा गया । जमानत देर से हुई, छूटने के बाद सरनाम सोरो के मेले में पहुँचा, मेला खत्म हुआ था, जिले के सब मेले उसने छान डाले । बाद में पता चला वह सतार के साथ सर्कस में चली गई थी । वह सर्कस भी कुछ दिन बाद तितर-बितर हुई । सरनाम को बंसरी नहीं मिली ।

बंसरी ने सरनाम की बहुत प्रतीक्षा की थी । अब उसका चरित्र कलंकित हुआ, वह बाजारू बनी । एक दिन गेंदा कवि एक अपरिचित औरत को लेकर आया, उस असहाय औरत का सौदा हुआ । सरनाम का साथी क्लीनर रंगीले को वह पाँच सौ रुपये में दी गई, सरनाम ही सौदा करने के लिए गया था पर सरनाम बंसिरी को पहचान न पाया । रंगीले ने ही बंसरी को खरीद लिया था । सरनाम के लिए यह बड़ा आघात था । बंसरी सरनाम को दोष देती है, "अपने को बड़ा अफलातून समझता है सरनाम । बेईमान...दगाबाज....इज्जत से खेल गया ।" लेकिन न जाने क्यों मन खट्टा हो गया । "नौटंकी की बंसरी और सत्तार और फिर कृष्ण मंडली के साथ बलराम से आँखें लड़ाती हुई...कवि के साथ रही हुई बंसरी...न जाने कितने गेंदा, बलराम और सत्तार ।"(२१)

बंसिरी की जीवन का संघर्ष शुरू हुआ, उस रात उसने जाहिद दीवान को खुश किया । उसने सरनाम को सबक सिखाने का निश्चय किया फिर भी वह नीडर सरनाम को भूल नहीं सकती थी । "बलिष्ठ सरनाम पत्थर की लाट की तरह सोने पर कसी हुई कारतूसों की पेटी, बंदूक से खिलौने की तरह खेलता हुआ । गाँव के चार सौ आदमियों के घेरे से बाह गया था...रोआँ तक न छू पाया कोई, दिलेर सरनाम ।"(२२)

सरनाम ने जो शरीर सुख बंसरी को दिया था उस सुख की स्मृतियाँ उसे याद आतीं । मन में द्वन्द्व का तूफान उठता । उस अनुभूति को वह भूल नहीं

सकती थी ।..."रग रग निचुड़ गई थी ड़ड़्ी-ड्ड़ी चटक गई थी, और उस हडफूटन का अनिवचनीय सुख । कैसे लड़ेगी वह उससे ? मन क्यों डूब-डूब जाता है...उस पत्थर के शरीर को सभ्मालने का मन होता है, बनाये रखने को जी करता है ।"

बंसिरी का मन सरनाम के लिए तड़पता रहा । अब रंगीले से मन लगाना पड़ा, उसी के साथ गृहस्थी बसा ली । सरनाम रंगीले दोनों की दोस्ती थी । सरनाम की शिवराज के साथ अच्छी पटती थी तो दूसरी ओर शिवराज बंसरी की सरनाम की सारी बातें उसे सुनाता था । शिवराज को डाकुओं से दूर रहने की सलाह देती है ।

सरनाम को एक डकैती में किसी ने दगा दिया । सरनाम फरार हुआ । बंसरी को सरनाम की चिंता होने लगी । पुलिसवाले रंगीले को सरकारी गवाह बना देती है ताकि सरनाम को सजा हो जाए, पर होनी को कुछ और ही मंजूर था, सरनाम रिहा हो गया, और रंगीले को झूठी गवाही देने के जुर्म में तीन साल की सज़ा हो जाती है । गर्भवती बंसरी को सरनाम ने अस्पताल पहुँचा दिया गया था, सरनाम बंसरी की चिंता करने लगा सरनाम ही उसे अस्पताल से घर ले आया, बंसिरी के बच्चे को प्यार से गोद में लिया । उसे घर पहुँचाकर उसने कहा - "घर में दिया बती जला ले । मैं चल रहा हूँ रंगीले नहीं है तो अकेला मत समझना अपने को । कुछ जरूरत हो तो मुँह खोल के कहना....जा...भीतर जा ।"(२३)

डाकू, खूनी, बेफिक्र सरनाम पर बंसरी के व्यक्तित्त्व का असर होता है । सरनाम का बंसरी के प्रति सच्चा प्रेम था आखिर सरनाम की उदारता ने बंसिरी को परास्त किया । "अवहेलना, अपमान, और दुख सहन करनेवाली बंसरी एक ऐसे नारी वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है ।"(२४) जिस वर्ग का नारियों को जीने के लिए शरीर का सौदा करना पड़ता है । परिस्थितिवश बंसरी को भी उस पथ की और कदम बढ़ाने पड़े ।

असफल प्रेम बंसरी के दुखद जीवन का मूल कारण था । विपरीत सामाजिक स्थितियाँ, और आपत्तियाँ बंसरी के जीवन को झकझोर देती हैं । बंसरी ने बहुत कुछ सहा, झेला फिर कहीं उसे गृहस्थी का जीवन प्राप्त हुआ ।

बंसरी का जीवन संघर्षमय है । संघर्ष के लिए सदैव तत्पर है । इतनी ठोकरें खाकर आखिर वह रंगीले के बच्चे की माँ बनी है । सिढ़ियाँ सामाजिक परंपराओं से मुक्त होकर बंसरी ने जीवन भर विजय पाई है । यही उसके चरित्र की महानता है । नीति–अनीति, के इज्जत–आबरू के आडम्बरों को आसानी से अपने से दूर रखा है । उसका माँ बनना उसकी जीवन के प्रति आस्था का द्योतक है । बंसरी का चरित्र स्वाभाविक तथा मानवीय है । उसके चरित्र का समग्र रूप उपन्यास में कमलेश्वर ने बड़ी बखूबी के साथ उजागर किया है ।

(९) कितने पाकिस्तान

कमलेश्वर का आधुनिक उपन्यास – 'कितने पाकिस्तान' में लेखक ने अंग्रेज सरकार, इतिहास और कल्पना का मणिकांचन संयोग किया है । १५ अगस्त, १९४७ को भारत ने आज़ादी की खुली हवा, मौसम में चैन की साँस ली । पर साथ-साथ अनगिनत समस्याओं को भी ले आया । देश में जातिवाद, बेरोजगारी, आतंकवाद, भ्रष्टाचार, सामंतवादी, व्यक्ति स्वतंत्रता आदि अनेक प्रश्न उभरे । ये सारे प्रश्न कितने वर्षों से उभरे हैं पर अफसोस आज तक उन प्रश्नों को सुलझा नहीं पाए हैं । ऐसे अन सुलझे हुए प्रश्नों को लेकर हिन्दी साहित्य में कमलेश्वर आए, 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास के बंधे-बंधाए ढाँचे को तोड़ती हुई, इतिहास के अंदर धंसकर लिखी हुई, एवं अंतरराष्ट्रीय फलक को समेटती हुई एक विशाल कृति है ।

कमलेश्वर ने उपन्यास में भारतीय-इतिहास का दर्शन कराया है । उपन्यासकार ने उपन्यास में सतयुग का उदाहरण प्रस्तुत किया है कि सतयुग में राजा रामचंद्र ने क्षत्रिय धर्म का पालन करने और बाह्मण धर्म की रक्षा के लिए शुद्र शंबूक जैसे तपस्वी ऋषि की गर्दन काटकर धड़ से अलग कर दी । यही प्रश्न यहाँ जातिवाद से प्रेरित है, जो वैदिक युग में भी आज की तरह आसक्ति और व्यभिचार-बलात्कार की दास्तान हुई थी । ऋषि गौतम की पत्नी अहल्या के साथ इन्द्र का व्यभिचारी व्यवहार । सुमेरी सभ्यता के पृथ्वी सम्राट गिलगिमेश ने पृथ्वी को भयमुक्ति दिलाने के लिए मुक्ति औषधि खोजना

चाहा । इस सिंधु सभ्यता के संदेश और संस्कृति से देवतागण खफा थे परंतु गिलगिमेश आज भी सागर के अतल में औषधि का अन्वेषण कर रहे हैं । सतयुग, वैदिकयुग तथा आर्यों और उपनिषद के बारे में उपन्यासकार ने खुद अपने विचार प्रस्तुत किए हैं ।

'कितने पाकिस्तान' में इतिहास को बाबरनामा के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है । वर्तमान की सुलगती आग हिन्दू और मुसलमान जातिप्रथा की है । हम इतिहास में झाँकें तो पता चलता है कि इस्लाम तो हिन्दुस्तान से पहले था । इब्राहीम लौदी ने कोई राम-मंदिर नहीं बनवाया था, दूसरी बात इब्राहीम लौदी की दादी हिन्दू थी । आज बाबरी, रामजन्मभूमि के प्रश्न ने राजनैतिक रूप धारण कर लिया है ।

बादशाह अकबर और दारा शिकोह हिन्दुस्तान में मौजूद धर्म और आध्यात्मिकता में इस्लाम की आध्यात्मिक सोच और समीकरण को एक बहुत बड़ा ऐतिहासिक अवसर माना था । उपन्यास में तफशीश के दौरान अदीब ने एक महत्त्वपूर्ण बात स्पष्ट कर दी है । हमारी प्राचीन सभ्यताएँ एक दूसरे की अर्थ व्यवस्था की पोषक एवं पूरक थीं । उसमें नफे की स्पर्धा एवं शोषण शामिल न था, इसका प्रमाण तीन हजार वर्षों की सदियाँ हैं, जिनमें कभी भी चीन भारत में युद्ध नहीं हुआ । इन्सान की बार-बार परछाइयाँ तिरोहित नहीं हुई थीं ।

१८५७ की क्रांति के बाद अंग्रेजों की नीति बदली थी और उन्होंने व्यक्ति प्रदेश और देश को मजहब के नाम पर बाँटना शुरू कर दिया था । उसके बाद इतिहास हमारे सामने है, गाँधीजी ने सब संभाला था । हिन्दुस्तानियों को जन्म दिया । सावरकर जैसे क्रांतिकारी नेता हिन्दूवादी हो गए । उनकी नस्ल ने नथूराम गोड़से पैदा किया, और उसीने गांधीजी की हत्या की । गांधीजी, नहेरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद के रहते हुए भी मुसलमानों के दिलों में नफरत, दिमाग में शक बैठ गया था कि सत्ता मिलते ही धीरे–धीरे नेहरू का सेक्यूलरिजम मूर्छित होता जाएगा ।

उपन्यास के मध्यभाग में अर्दली का कथन है कि भारत और पाकिस्तान अब भी दु:खी हैं । दोनों देश बँटवारे के कारण लंगड़े हो चुके हैं । पाकिस्तान में तो खैरियत की दुआओं के लिए कबीर स्वयं भटक रहा है, और उनके साथ सुरजीत कौर भी अपने बेहोश बेटे की खोई चेतना में भटक रहा है । यह विस्थापन गौरी नस्ल का आभारी है । उन्होंने एशियाई संस्कृतियों पर नरभक्षी होने का कंकाल लगाकर अपने मुँह उजले करने चाहे हैं । यह प्रतिक्रिया अर्दली के माध्यम से स्वयं लेखक ने दी है ।

मनुष्य ने अपने निजी स्वार्थ के कारण – "युद्ध के लिए युद्ध का वरण" जैसा सिद्धांत स्वीकार कर मानव सभ्यता के चरम उत्कर्ष के बावजूद पतन पराकाष्टा की हद पार कर दी है । अर्दली जैसे पात्र के माध्यम से लेखक ने जो अदालती सनसनी खेज विचारों को प्रस्तुत किया वह विचारणीय अवश्य है ।

आज कश्मीर का प्रश्न सुलग रहा है । वहाँ की आवाज का कहना है तो पार्टिशन के वक्त यहाँ से गये मुसाफिर मुसलमान को मुहाजिर कहकर अपमानित करते हैं ।

अदीब की अदालत से इतिहास पुरुषों को प्रस्तुत करके जो विचार पाठकों के सामने रखा है, उसने हमें और आनेवाली पीढ़ी को सोचने के लिए मजबूर किया । इस अदालत में विश्व हिन्दू परिषद और बजरंग दल के नेता भी दस्तक देते हैं और कहते हैं – राम जन्म भूमि पर मंदिर बनके रहेगा – बल्कि हम कृष्ण जन्म भूमि और काशी विश्वनाथ के मंदिर को मुक्त करके दम लेंगे । आज हाहाकर तो पूरी दुनिया में है । "मानवाधिकार का हनन हो रहा है, हिंसा हत्या, कष्ट, उत्पीड़न, यातना, बेईमानी बदकारी के सैलाब उमड़ रहै हैं । खुद भारत में रक्त के तालाब में फूल उगाए जा रहे हैं । लेकिन फिर भी कुछ ऐसा भी है जो शुभ   है ।"(२५)

उपन्यास के समग्र लेखन पर गौर करें तो, सतयुग एवं वैदिक युग में भी वर्णवादी प्रथा का प्रश्न, मुगल शासन में भी अंदरूनी कलह का प्रश्न और इस्टइंडिया कंपनी के प्रारंभ से अंत तक का इतिहास, गोरी नस्ल के आतंक का है । इस नस्ल ने विश्व के तमाम भूखंडों में बँटवारा किया । इनकी राजनीतियों की बदौलत आज विश्व के समग्र भूखंडों पर न जाने कितने पाकिस्तान बने और इनकी नफरत से कितने पाकिस्तान बनेंगे ? यह भी यक्ष प्रश्न है । इन्सान

और इन्सान की कुदरती पहचान के बीच यह हिन्दुस्तान और पाकिस्तान कहाँ से आ जाता है ?

संदर्भसंकेत

१. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास में पुरुष पात्र, डॉ. दुर्गेशनंदिनी प्रसाद, पृ. ६०-६१

२. वही

३. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. २३०

४. हिन्दी उपन्यास प्रेम और जीवन, डॉ. शांतिलाल भारद्वाज-'राकेश'

५. डाक बंगला, पृ. ४६-४७

६. डाक बंगला, पृ. ६७

७. डाक बंगला, पृ. ७६

८. डाक बंगला, पृ. १२२

९. हिन्दी उपन्यास प्रेम और जीवन, डॉ. शांतिलाल भारद्वाज-'राकेश', पृ. २६०

१०. हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास में साठोत्तरी उपन्यास, डॉ. पारूकांत देसाई, पृ. २५२

११. तीसरा आदमी, कमलेश्वर, पृ. ८३

१२. हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास में साठोत्तरी उपन्यास, डॉ. पारूकांत देसाई, पृ. २५२

१३. काली आँधी, कमलेश्वर, पृ. १२१

१४. हिन्दी के मार्क्सवादी उपन्यासों के नायिकाएँ, डॉ. एच. जी. सालुखे, पृ. २४३

१५. बहुचर्चित उपन्यास और उपन्यासकार, डॉ. अमर जायसवाल, पृ. ४५

१६. कमलेश्वर का कथा साहित्य, डॉ. माधुरी शाह, पृ. २०१

१७. हिन्दी के मार्क्सवादी उपन्यासों की नायिकाएँ, डॉ. एच. जी. सालुखे, पृ. २३५

१८. मानव मूल्य एवं स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास, डॉ. बलराज सिहनार, पृ. १५७

१९. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ३८

२०. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ६६

२१. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ६५

२२. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ६७

२३. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. १२०

२४. हिन्दी के मार्क्सवादी उपन्यासों की नायिकाएँ, डॉ. एच. जी. सालुखे, पृ. १२०

२५. समकालीन हिन्दी उपन्यास, डॉ. एन. आर. परमार, पृ. ३०१

तृतीय अध्याय

स्वतंत्रता पूर्व की स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

(१) स्वातंत्र्य पूर्व के उपन्यास : भूमिका

(२) लौटे हुए मुसाफिर

(३) एक सड़क सत्तावन गलियाँ

(४) रेगिस्तान

(५) सुबह दोपहर शाम

भूमिका

स्वातंत्र्यपूर्व के विषय को लेकर लिखे उपन्यासों की श्रृंखला में कमलेश्वर के उपन्यास 'लौटे हुए मुसाफिर', 'रेगिस्तान', 'सुबह दोपहर शाम' और 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' अपना अग्रिम स्थान रखते हैं । स्वातंत्र्य-पूर्व की भारत पाक विभाजन की समस्या पर अनेक लेखकों ने अपनी संवेदनाओं को आलेखित किया ।

कमलेश्वर के उपन्यासों भी कथाभूमि कस्बों से लेकर शहर के विभिन्न क्षेत्रों तक फैली हुई है । यह कथाभूमि ही एक प्रकार से उस वस्तु को प्रक्षेपित करती है । जो समसामयिक समस्याओं, द्वन्द्वों, प्रताड़नाओं, दबावों, अमानवीय तथा क्रूर स्थितियों, कुष्ठाओं और सामाजिक विसंगतियों के विभिन्न बिंदुओं में प्रसारित है ।"(१)

कमलेश्वर की यह अनूठी विशेषता है कि उन्होंने अपने उपन्यासों की पृष्ठभूमि में जीवन का यथार्थ भिन्न - भिन्न रूपों से उभारा है । वस्तुत : कमलेश्वर ने 'लौटे हुए मुसाफिर' में उन अबोध लोगों की कथा को आधार बनाया है । जो केवल अपनी रोजी रोटी के लिए ही संघषरत थे ।"(२) स्वाधीनता से पूर्व भारत के कस्बों में ही क्या संपूर्ण भारत वर्ष में साम्प्रदायिक दंगे व्याप्त थे । जिसके कारण लोगों के समक्ष रोजी रोटी की समस्या विकट हो गयी थी । इनहीं संवेदनाओं को कमलेश्वर ने अत्यंत सूक्ष्मता से पकड़ा है ।

‘‘बडी जल्दी लौट आए इस्मित भाई ! सवारियाँ नहीं थीं ? थीं तो, पर समझ में नहीं आता सत्तार मैं मुसलमान हूँ, शायद इसलिए लोग मेरे इक्के पर बैठते कतराते हैं । ऐसी क्या बात है ?

स्टेशन का रास्ता सुनसान है न । इसीलिए उन्हें ड़र लगता है अरे पूछो, यहीं पैदा हुआ, यहीं रहा-बसा । अब लोग मन ही मन मुझ पर शक करते हैं । समक्ष में नहीं आता यह हो क्या रहा है ? बड़े बुझे मन से इम्तिआर ने कहा था ।"(३)

'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यास के माध्यम से कमलेश्वर ने विभाजन की समस्या को लेकर हिन्दू-मुस्लिम की बस्ती में हुए परिवर्तन की कथा को प्रस्तुत किया है । परिवर्तन के कारणों की खोज एवं परिवर्तन की भयावह प्रक्रियाओं को भी उन्होंने स्पष्ट किया है । कमलेश्वर ने 'लौटे हुए मुसाफिर' में बस्ती के सौ वर्षों का इतिहास चित्रित किया है । आरंभ में सन १९५७ की बस्ती का चित्र अंकित किया गया है । १८५७ के पश्चात दंगों का चित्र भी उभारा है । १८५७ के गदर के पश्चात से उस बस्ती में परिवर्तन होने आरंभ हुए । यह वही बस्ती है जिसने १९५७ में अंग्रेजों से लोहा लिया था । हर कोम और मजहब के लोगों ने कंघो से कंघा मिलाकर गोलियों की बौछार सीनों पर झेली थी ।"(४) मानवीय संवेदनाओं का जज्बा दोनों जातियों की ओर बराबर था । देश प्रेम की भावना के बल पर उसने जो कुछ बन पड़ा वो उन्होंने किया । उन्हें नहीं मालूम था देश कैसे आजाद होगा पर इतना उन्हे मालूम था कि कुछ

करना चाहिए ओर वे जो कुछ कर सकते थे वह उन्हों ने किया था ।"(५) सन् १९४२ के आंदोलन में भी यहाँ के हिन्दू – मुस्लिम युवकों ने हिस्सा लिया था किन्तु सन् १९४५ में ही इसी बस्ती के नागरिकों के दिल में भयानक भूचाल आया । सन् १९४५–४६ और ४७ तीन वर्षों में जो बदलाव आया उसे बड़ी सूक्ष्मतासे अंकित किया । सर्व सामान्य हिन्दू–मुस्लमानों की क्रिया प्रतिक्रियाओं को इसमें शब्दबद्ध किया गया है ।

'लौटे हुए मुसाफिर' में महत्त्वपूर्ण घटनाओं, उन घटनाओं भी प्रतिक्रिया है । शांतिपूर्वक जीनेवाली यह बस्ती नफरत की आग में कैसे जल गई ।"(६)

कमलेश्वर ने 'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यास में समाज के उस शोषित निम्नवर्ग को केन्द्र में रखा है ।नफरत की आग में समाज के उन शोषित उपेक्षित निन्मवर्ग को ही केन्द्र में रखा है । नफरत की आग फैलाने में जिसका सबसे अधिक उपयोग राजनीतिज्ञों तथा धर्मान्धों ने किया है । उस शोषित वर्ग को केन्द्र में रखकर लेखक ने विभाजन भी समस्याकों बिलकुल नये ढंग से देखा है । राजनीति, धर्म, संप्रदाय से मुक्त होकर तटस्थ रूप से तटस्थ दृष्टि से लेखक ने चीकवों की बस्ती में फैलनेवाली नफरत की आग का चित्र खींचा है, पर स्थिति कुछ भिन्न स्तर से उद्धाटित हुई है । चीकवों की बस्ती के लोग स्वाधीनता में विषय में नितांत अनभिज्ञ थे । क्योंकि वे अपने व्यक्तिगत जीवन के संघर्षों से लड़ रहे थे । साम्प्रदायिकता की आंधी ने उन्हें उजाड़ दिया था – "और फिर सन पैतालिस का जमाना आया । एक बूँद खून नहीं गिरा ।

किसी मुहल्ले पर धावा नहीं हुआ । किसी ने किसी को नहीं मारा । किसी ने किसी को गाली तक नहीं दी, मस्जिदों में लड़ाई की तैयारियाँ नहीं हुईं । मंदिरों में ईट पत्थर तक इकठ्ठे नहीं हुए जो रोज़ पीटते थे उन्हें भी किसी ने नहीं पीटा ।

लेकिन भीतर-भीतर एक भूचाल आया था । बड़ा भयानक भूचाल जिससे बस्ती की चूलें हिल गयी थीं । भीतर सब कुछ बिगड़ गया था । दिली हिमारतें ढह गयी थीं । अपनेपन का जज्बा मर गया था । नफरत की आग ने इस बस्ती को निगल लिया था... और भरी पूरी चिकवों की वह बस्ती सबसे पहले उजड़ गयी थी । पता नहीं यह आग कहाँ छिपी हुई थी । नफरत की इस आग की चिनगारियाँ बाहर से आयी थीं... दूसरे शहरों, कस्बों और सूबो से ।"(७)

लेखक ने मानव-मूल की गहन संवेदना को स्पष्ट किया है । १९४७ और १९४८ में अचानक नफरत के जिस ज्वालामुखी का विस्फोट हुआ उसका चित्रण न करते हुए कमलेश्वर उसकी जड़ तक पहुँचते हैं । इस नफरत के ज्वालामुखी का निर्माण कैसे हुआ उसकी खोज करना चाहते हैं । सामुदायिक चिनगारी की खोज के लिए १९३० से ४५ तक के समय को महत्त्व देते हैं । उनकी दृष्टि में तो मनुष्य का मन आलम्बन है, राजनीति उद्दीपन और बस्ती का राख हो जाना यथार्थ ।"(८)

'लौटे हुए मुसाफिर' की अन्य संवेदना है मातृभूमि से अनन्य प्रेम एवं लगाव । 'लौटे हुए मुसाफिर' अन्य उपन्यासों से भिन्न है । क्योंकि कमलेश्वर के मुसाफिर वापस लौटे आते हैं । नफरत की आग में सुलझकर कुछ हमेशा के लिए गये, कुछ बीच रास्ते मे ही रह गये और कुछ वापस लौट आए – तब जब नफरत की आग समाप्त हो गई और वे लौटे हुए मुसाफिर मजदूर बनकर ही आए । लेखक ने हि अपने दृष्टिकोण से विभाजन की कृत्रिमता को ही प्रमाणित करने की कोशिश की है । विभाजन के नाम पर सामान्य लोगों का जो शोषण हुआ उसकी ओर उन्होंने संकेत किया है ।"(९) विभाजन के पश्चात आम आदमी की जो स्थिति हुई उसे लेखक ने अधिक महत्त्व दिया है । भारत – पाक विभाजन ने मुसलमानों के हृदय में अभिलाषाएँ जगा दी थीं । सत्तार भी कभी कभी सोचता है । शायद पाकिस्तान बनने से एक नयी जिंदगी की हदें खुल जायें ।"(१०) इम्तिखार इस घटना की ओर अधिक व्यावहारिक दृष्टि से देखता है । उसे यकीन है कि नया राष्ट्र बनने के बाद भी सामान्य मनुष्य की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होनेवाला है । अगर पाकिस्तान बना भी तो किसी काम नहीं आयेगा । पाकिस्तान में भी हमें इक्का ही हाँकना पड़ेगा ।"(११) सामुदायिक आग ने मुसलमानों के दिलो–दिमाग पर पाकिस्तान का अतिशयोक्ति पूर्ण प्रशंसनीय चित्र राजनीतिज्ञों ने इस तरह से खींचा कि साधारण अनपढ़ इन्सान आकर्षित हुए बिना नहीं रह सकता । यासीन जैसे लोग गरीबों को सब्जबाग दिखा रहे थे । पाकिस्तान बना ही इसलिए है कि हर

मुसलमान यहाँ आराम और चैन से रहे । पाकिस्तान की सरहद पर जमीनें और जायदादें बंट रही हैं कामधन्धे शुरू करने के लिए जिन्ना साहब की सरकार नकद रुपये दे रही है । अंगूर आठ आने सेर बिक रहा है ।"(१२)

उन लोगों में से कोई दिल्ली तक नहीं पहुँच पाये, एक ओर अपनी सारी पूंजी मकान जायदाद बेचकर निकले थे । पाकिस्तान जाने का सपना सपना ही रह जाता है । स्पष्टत: विभाजन के समय समाज का निम्नवर्ग और शोषित वर्ग सविशेष पीड़ित हुआ । उपन्यास भी संवेदना प्रत्येक पात्र द्वारा उभर उठी है । इस बस्ती में जीने वाले प्रत्येक पात्र द्वारा उभर उठी है । इस बस्ती में जीने वाले प्रत्येक पात्र का अपना महत्त्व है । अपनी ममतामयी दृष्टि के कारण नसीबन, भावुक प्रेमी के रूप में सत्तार तथा सामुदायिक बदलावे में आकर बस्ती को उजाड़नेवाला साई बराबर प्रभावित करते हैं ।"(१३)

'लौटे हुए मुसाफिर' का कथानक संक्षिप्त है परंतु उसमें व्यक्त संवेदनाएँ गहन । जहाँ एक ओर नफरत है तो दूसरी ओर प्रेम, देश प्रेम जज्बा अपनी मातृभूमि से प्रेम की भावना, मानवीय प्रेम का मोल, लौटे हुए मुसाफिरों को स्नेह, से उमंग से स्वीकार कर उत्साह से अपना लेना । यही इस उपन्यास की सविशेष विशेताएँ हैं ।

कमलेश्वर के प्राय: सभी उपन्यासों की वस्तु निम्न मध्यवर्गीय समाज के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित है । 'एक

सड़क सत्तावन गलियाँ' (जो गलती से 'बदनाम गली' के नाम से भी छपा है।) 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' 'रेगिस्तान' एवं 'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यासों में व्यक्ति अधिक संकट के कारण कस्बे के सहज जीवन को उपयुक्त समझते हैं और बड़े शहरों के अस्त व्यस्त जीवन को अपनी स्थितियों के अनुकूल नहीं पाते ।

कमलेश्वर उपन्यासों की कथाभूमि जीवन के यथार्थ और वास्तविक रूप में चित्रित होती है । उनके उपन्यासों की कथा भूमि में पात्रों के जीवन की संवेदनाओं को बड़ी सूक्ष्मता से निरीक्षण कर जीवन की यथार्थता भी भूमि में प्रस्तुत किया है, कहीं भी कृत्रिम या आरोपित नहीं होती । उपन्यास का परिवेश पात्रानुकुल होता है ।

कमलेश्वर ने 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास में जिस परिवेश को प्रस्तुत किया है, वह जीवन के यथार्थ धरातल पर अवस्थित है । लेखक ने मैनपुरी कस्बे की जिंदगी को विभिन्न परिप्रेक्ष्य में रखकर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । उपन्यास की कथा एवं उसकी संवेदना स्वाधीनता से पूर्व के भारत से लेकर सन १९४७ के पश्चात के भारत तक फैली हुई है ।"(१४) आजादी के लिए मर मिटने भी भावना प्रत्येक वर्ग में देखी जाने लगी । आजादी की जंग का उत्साह मध्यमवर्ग और निन्मवर्ग के लोगों में अधिकाअधिक देखने को मिला । इन दोनों वर्गों के लोगों की आंखों (नजरों में नए समाज की सुखद कल्पना थी । उनके ख्यालों में नए स्वाधीन भारत का

खूबसूरत चित्र अंकित हो गया था । उस चित्र को जीवन की वास्तविकता का रंग चढ़ाने की धुन उनके मनोमस्तिष्क पर थी । उन्होंने जिस नए समाज की जो कल्पना की थी उस स्थिति का मोह भंग स्वाधीनता के पश्चात ही हो गया । स्वाधीनता का जो चित्र उन्होंने अपने मनो मस्तिष्क में संजोया था वह खंडित हो गया । मास्टर हबीब, संपादक निर्मोही और बाजा मास्टर जैसे असंख्य व्यक्तियों भी अभिलाषाओं की अकाल मृत्यु का साक्षात् दस्तावेज यह उपन्यास स्वतंत्रता के पूर्व और स्वतंत्रता के बाद की मानसिकता का सफल अंकन करता है ।

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास में निम्नवर्ग के खंडित सपनों की संवदेना का दर्द है जहाँ सर्व वर्ग, आर्थिक सामाजिक राजनीतिक एवं धार्मिक इन चारों समस्याओं के बीच घिरा हुआ है ।"(१५) इस उपन्यास में आर्थिक समस्याएँ जितनी गहरी बनी हुई हैं । उतनी ही धार्मिक समस्याओं के मूल धरती में गड़े हुए हैं पैठे हुए हैं । जहाँ व्यक्ति अपने प्रेम को भी भूल जाता है और अपने आपको सामाजिक जीवन की हथकड़ियों से बंधा हुआ पाता है । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' निम्नवर्ग के खंडित सपनों का चित्र उजागर करती है । जहाँ सरनाम जैसा पात्र अपनी जिन्दगी में पाने से ज्यादा खोता है । एक ऐसा व्यक्ति जो जीवन से चोट खाए हुए है जो प्रेम की पीड़ा से घायल है, फिर भी जिसके मन में मित्रता का भाव है उस मित्रता के कर्तव्य को पूरा करने की अदम्य जिजीविषा के साथ-साथ वह अपने आपको भीतरी रूप से और भी

घायल करता रहता है । परिस्थितियों के हाथों से मार खाया हुआ सरनाम, जिसकी घायल संवेदनाओं को लेखक ने इस उपन्यास में उभारा है । निम्नवर्ग का व्यंक्ति रोजी–रोटी के लिए उसे क्या कुछ नहीं करना पड़ता उस अनुभूति का साक्षात चित्र 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' है ।

इस उपन्यास में स्वाधीनता पूर्व और स्वाधीनता के पश्चात की परिस्थितियों का सफल अंकन है । उपन्यास की वस्तु की सूक्ष्म अभिव्यक्ति विशिष्ट है, जिसमें उपन्यासकार ने अनेक संवेदनाओं को उभारा है ।

रामलीला में राम के नाम पर नाटक मंडली अश्लीलता पूर्ण अभिनय कर राम के नाम पर ट्टा लगा दिया । लेखक ने रामलीला और नाटकमंडली का यथार्थ नंगा चित्र खोलकर रख दिया है । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास में उपन्यासकार ने सामान्य व्यक्ति की सामाजिक जिदंगी में फेले क्रूर और घिनौने सच को सामने रखा है । ''सुबह शिवराम की आँख खुली तो देखा सरनाम उसकी चारपाई पर पड़े हैं, और उनका एक हाथ उसके सीने पर है वह कोई नयी बात नहीं थी, उसे अभ्यास हो जाना चाहिए था । चार साल गुजर गये उसी वातावरण में रहते । पहले बेहद उलझन होती थी ।"(१६)

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' मैनपुरी कस्बे की कथा है । 'किन्तु' इसमें आंचलिकता अथवा लोकल कल (क्षेत्रीय वर्ण) जैसी कोई अनुभूति नहीं है । ऐसा न होना इस लघु उपन्यास की कमी नहीं , विशेषता ही है । उपन्यासकार

ने अपनी कथा को अधिक यथार्थ और विश्वास योग्य बनाने के लिए ही मैनपुरी स्थान का नामोल्लेख किया है ।"(१७)

इस उपन्यास में लेखक ने विभाजन से पूर्व की स्थिति का जो वर्णन किया गया है वह तत्कालीन परिस्थितियों का ही चित्रण है । स्वाधीनता के लिए संघर्ष करनेवाले लोगों में राजनैतिक चेतना दृष्टिगोचर होने लगी । निम्नवर्ग कुछ पाने भी आशा से अपने देश की उन्नति और स्वाधीनता देखने की ललक सभी भारतीयों में थी । इनहीं दिनों शहर में एक अनोखे संघर्ष ने जन्म लिया । सन् बयालीस में तरह तरह की बातें फैली थीं ।कई निशान प्रारंभ हुए थे । तिरंगा पहले भी था पर उसने इस बार ज़ोर पकड़ा था और हसिया हथौड़ेवालों से उसकी आये दिन हाथापाई होती रहती थी । बस्ती में नारे गूँजते तरह तरह की टोपियाँ दिखायी पड़तीं । स्कूलों के लड़के गोल बांधकर सड़क पर और गलियों का चककर लगाते रहते । गांधी बाबा की जै जै के नारे लगते ।"(१८)

कमलेश्वर के इस उपन्यास 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' में मानवीय संवेदनाओं, विभिन्न आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक स्थितियाँ अपने आप ही अपने आपको प्रस्तुत करती हैं । परिस्थितियों का ब्योरा एक के पश्चात एक सामने उभरता चला आता है ।कमलेश्वर की यही उल्लेखनीय विशेषता है कि बहुत ही सधे हुए शब्दों में बहुत कुछ कहते जाते हैं ।

उपन्यासकार ने इस लघु उपन्यास में मुख्यत: राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार को अधिकांशत: प्राथमिकता दी है, किन्तु यह प्राथमिकता एक ओर रह जाती है । स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्य पश्चात् के चित्रण में भारत-पाक विभाजन की बिड़म्बना की परिस्थितियों का चित्रित किया है । विभाजन की विसंगतियों के कारण उत्पन्न परिस्थिति को हमारे समक्ष भावात्मक संवेदनाओं के ताने बानों को जोड़कर एक नग्न सत्य को प्रस्तुत किया है ।

'रेगिस्तान' का नायक विश्वनाथ का संपूर्ण जीवन राष्ट्रभाषा को एक रूप में देखने की अभिलाषा से अनुप्राणित था । वह रात दिन चारों दिशाओं को उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम को एक हिन्दी भाषा सूत्र में जोड़ने में लगा रहा । स्वातंत्र्य पूर्व ही भारत वर्ष में हिन्दी का प्रचलन हो जाए इसीलिए उसने अपना संपूर्ण जीवन राष्ट्रभाषा की सेवा, भारतीयों को एक हिन्दी भाषा सूत्र में बाँधने के चक्कर में अपने जीवन को रेगिस्तान बना देता है । जहाँ न किसी की प्रेम भरी बतियाँ न चूड़ियों की खन खन आवाज न पग ध्वनि में पायल की झनकार, अब उसके कानों अगर आवाज आती है तो सिर्फ अ...आ..इ....ई.... बस ।"(१९)

स्वतंत्र भारत की परिवर्तित परिस्थितियों ने विश्वनाथ को हतप्रभ बना दिया । बाज़ार में गांधी की छबी के स्थान पर हीरो हीरोइन की छबियाँ लगी थीं । देश के राष्ट्रगीतों के स्थान पर फिल्मी गीत बज़ रहे थे । यहाँ तक भी हिन्दी के स्थान पर अंग्रेजी भाषा का चलन होने लगा । अ आ इ ई के स्थान

पर ABC आ गए थे A For Apple और बी B For बनीया ट्री Tree आ गया ।

"विभाजन के बाद जो कुछ हुआ वह एक साक्षात्कार था वह किसी परिस्थिति का नहीं बल्कि एक प्रक्रिया का साक्षात्कार था और यह प्रक्रिया थी जीवन के सभी पहलुओं में बढ़ता पतन जिससे स्थापित मूल्यों को ठेस पहुँची थी और कई विपरीत या गलत मूल्य उभरने लगे थे, मूल्यहीन धारणाएँ मूल्य बनते लगी थीं । इस संदर्भ में विभाजन की हिंसक घटनाएँ गौण और तुच्छ लगने लगी थीं और मनुष्य जिन नयी परिस्थितियों से घिरा था वे अधिक विनाशकारी प्रतीत होने लगी थीं ।"(२०)

भारत - पाक विभाजन ने परिवार के सदस्यों को ही बिखेर दिया । बाकर विश्वनाथ का मित्र था । बाकर का संपूर्ण परिवार को बेटा - बहू - बेटी को भारत का नागरिकत्व मिला और सिर्फ बाकर को जबरन गाडी में बिठाकर पाकिस्तान भेजा जा रहा था । यह कैसी विडम्बना । भारतीयों ने भारत की स्वतंत्रता की कामना जरूर की थी किन्तु ऐसी स्वंतत्रता उन्हें कतई नहीं चाहिए थी । ऐसी कामना कदापि न की थी । एक बुर्जुग को इतनी बेरहमी से पकड़कर गाड़ी में बिठाकर पाकिस्तान भेज दिया जाए ।

'रेगिस्तान' का नायक विश्वनाथ आजीवन अकेलेपन के कारागार में कैद हो जाता है । 'रेगिस्तान' में विश्वनाथ के जीवन मे घटित हादसों की व्यथा

की पीड़ा है, दर्द है । अंत में विश्वनाथ की क्या दशा होती है ? वह संपूर्ण भारत वर्ष को हिन्दी भाषा के सूत्र में बांधकर भारतीयों को गूंगा होने से बचाना चाहता था । आज वही विश्वनाथ परिस्थितियों की चोट और असहनीय सदमों से खुद गूंगा बन जाता है । यहाँ तक कि अर्ध विक्षिप्त अवस्था में B For बाकर बनियान ट्री ही बोलता है । मानसिक स्थिति पर हुए प्रत्याघातों का चित्रण ही 'रेगिस्तान' है ।

कमलेश्वर द्वारा रचित एक अन्य उपन्यास जो स्वाधीनता पूर्व की पीढ़ीका को बयान करता है वह उपन्यास है 'सुबह दोपहर शाम' काफी उल्लेखनीय रहा । इस उपन्यास में लेखक ने सुबह दोपहर शाम को अर्थात तीनों प्रहरों को तीन पीढ़ियों के रूप में संयोजित किया है । उपन्यासकार ने स्वातंत्र्यपर्व अंग्रेजों के वख्त का उल्लेख किया है । एक एक वे भारतीय थे जो अपने देश की स्वतंत्रता के लिए अपनी जान हथेली पर रखकर सरफरोशी की तमन्ना से अपने स्वजनों को छोड़कर निकल पड़े थे, तो दूसरी ओर भारतीयों का दूसरा वर्ग अंग्रेजों की चाटुकारी करने में लगा हुआ था । पद और अर्थ की प्राप्ति हेतु अपनी देशभावना को भी तिलांजलि दे दी थी । स्वार्थपरकता में अंधे भारतीय अपनी पदोन्नति में अंधे होकर अपने देश के साथ ही गद्दारी कर रहे थे ।

उपन्यासकार ने भारतीयों के मानस प्रहार किया है । एक ही परिवार में जन्म लेने के पश्चात भी भाइयों की सोच–विचार में आचरण और व्यवहार में कितना धरती आसमान का फर्क आ जाता है ।

'सुबह दोपहर शाम' में सुबह की पीढ़ी में अंग्रेजों के दाँत खट्टे कर देनेवाले राजा साहब एवं उनका विश्वश्नीय जमादार सिपाहसालार बाबा साहब थे । अपने राजा साहब के लिए जो अंग्रेजों से हमेशा भीड़ जाते थे, अपने देश के प्रति प्रेम अपनी भारत भूमि को गुलामी की जंजीरों से स्वतंत्र रखना चाहते थे । बाबा ने राजा साहब की रक्षा हेतु उनके प्राणों को बचाने के लिए अपना घोड़ा राजा साहब को दे दिया था ताकि देश की रक्षा करनेवाला वीर राजासाहब जिन्दा रहकर भारत देश के लिए लड़ सकें और खुद अंग्रेजों की गोलियों के शिकार बन गए । अपने प्राणों की आहुति देकर खुद शहीद हो गए ।

उपन्यासकार ने 'सुबह दोपहर शाम' उपन्यास में दो प्रकार के पात्रों की संरचना कर संवेदनाओं को उभारा है । साथ साथ यह भी स्पष्ट किया है कि देश प्रेमका जज्बा क्या है । यह जज्बा सिर्फ पुरुष वर्ग में ही नहीं मिलता किन्तु उस से कई गुना अधिक नारियों में भी देखने को मिलता था । अंग्रेजों के नाम मात्र से उन खुद्दार देश प्रेमी नारियाँ का खून खौलने लगता था । बड़ी दादी हमेशा अंग्रेजों को लोमड़ी कहकर संबोधन किया करती थी । बड़ी दादी के हृदय में उन अंग्रेजों के प्रति धृणा और नफरत का भाव भरा हुआ था।

अफसोस और दुःख की बात तो यह थी कि उनकी दूसरी पीढ़ी–खुद दादी का बेटा जसवंत जो अपनी बुआ से अंग्रेजों के तलवे चाटना सीखा । जसवंत की बुआ कलावती से मिलकर काफिर बन जाता है । कलावती जो की जसवंत के दिलोदिमाग में अंग्रेजों की हवा भर देती है । तीसरी पीढ़ी में लेखक ने जसवंत की बेटी सन्तो को बताया है । सन्तो बड़ी दादी के सांनिध्य में देश प्रेम की स्निग्धता से स्निग्ध थी । एक प्रकार से वह बड़ी दादी के प्रति चुप ही थी । वही स्वभाव वही तेजी वही देश प्रेम का जज्बा थे अपनापन वही अंग्रेजों के प्रति आक्रोश, धृणा और नफरत थी ।

जसवंत की बेटी सन्तो का ब्याह एक ऐसे देश प्रेमी परिवार से होता है जहाँ सबके मनमें हृदय में देश के प्रति अदम्य प्रेम, सद्भावना का स्त्रोत बहा करता था । कमलेश्वर ने सन्तो की ससुराल के परिवार में भी दो प्रकार की भावनाओं संवेदनाओं को उभारा है एक तो देश प्रेम के आवेश से बना क्रांतिकारी नवीन जो संबंधों के महीन बंधनों को, उसकी स्निग्धता भरी भावना को समझता है । वह सन्तो का क्रांतिकारी देवर है । सन्तो भी ससुराल में उसके सास–ससुर, ननद देवर आदि परिवार के सदस्यों में देश प्रेम का स्त्रोत बह रहा था ।

उस समय की भयंकर बिडम्बना को कमलेश्वर ने आलेखित किया है सबसे बड़ी बिडम्बना यह थी कि जिसे अंग्रेज जाति ने भारतीयों को गुलाम बना रखा था उनकी नीति भी कूट थी–'फुट ड़ालो और शासन करो Devide

& Rule' कर रहे थे । उनहीं के प्रति अधिकांश भारतीयों के ह्रदय में मीतभाव बना हुआ था ।"(२१)

बुआ कलावती और जसवंत अंग्रेजों की चाटुकारी करते थे और समाज में उच्चस्थान प्राप्तकर हवेली, अर्थ और पद प्राप्त कर अपने ही भारतीय बंधुओं पर अत्याचार करते थे । जसवंत अपनी बुआ कलावती की चापलूसी कर अंग्रेजों की रेल में झंडी दिखानेवाला झंडी मास्टर बनता है, तो दो रुपये की अंग्रेजों की नौकरी पाकर वह आसमान में उड़ने लगता है एवं अंग्रेजों की तारीफ के पुल बांधने लगता है । कार्बन पेपर को जादुई पेपर कहकर अंग्रेजों की अककल में बखान करता है । अंग्रेजों का रहन-सहन, उठना-बैठना उन्हें (कुछ भारतीयों को) अच्छा लगता था और अंग्रेजों की शिक्षा एवं ज्ञान का सविशेष बखान करते थे । भारतीयों पर पाश्चात्य रंग चढ़ रहा था ।

उपन्यासकार ने मानवीय संबंधों पर प्रहार किया । आज के खोखले मानवीय संबंधों की टीका भी की है । प्रवीन और नवीन एक पिता की संतानें हैं एक खून दोनों में बह रहा था फिर भी दोनों के बीच विचारों और व्यवहार में काफी फर्क रहा । प्रवीन अपनी जान पुलीस के चंगुल से बचाने के लिए नवीन का संपूर्ण पता देता है । अपने क्रांतिकारी भाई के देशप्रेम को वह गद्दारी कहता है । प्रवीन अपने खून से अपने भाई से गद्दारी करता है । वह अपने देश से गद्दारी करता है । प्रवीन अपने परिवार और संबंधों की भावनाओं को घायल करता है । अपनी जान बचाने के लिए न जाने कितने क्रांतिकारियों की जानें

दाँव पर लगा देता है । वह पुलिस का खबरी बनकर अपनी जान तो बचा लेता है परंतु अपने भाई नवीन के लिए फाँसी का फँदा तैयार करने में कोई कसर छोडता नहीं है । 'इससे पहले कि मिर्जा यादव कानूनी मदद लेकर बात करने आए कि आप किस इल्जाम और जुल्म के बदले में नवीन को गिरफतार करके मार रहे हैं । प्रवीन मार खाकर जलती सलाख से तिलमिलाकर और बीवी बच्चों पर आनेवाली आपदा से डरकर सब कुछ उगल चुका था । प्रवीन ने क्रांन्तिकारियों के अड्‌डे के बारे में अटक अटककर सब कुछ बता दिया जो भी उसे पता था ।"(२२)

प्रवीन पर देशद्रोही का इल्जाम नवीन के साथियों द्वारा लग जाता है । प्रवीन सन्तो और परिवारजनों की दृष्टि से गिर चुका था । प्रवीन के पिता शर्म और लाचारी से दुखी हैं । उनका अपना खून अपना बेटा ही कायर, नामर्द निकला ।

सन्तो ने रणचंडी नवर्दुगा का स्वरूप धारण कर लिया था । फिरंगियों के सामने रौद्र स्वरूप धारण कर लिया था । जो हिन्दुस्तानी अंग्रेजों की गुलामी कर रहे थे-पुलिस की वर्दी डालकर अपने ही भारतीयों पर सितम गुजार रहे थे । उनकी अंतरात्मा को झकझोर दिया यहाँ तक कि उनके हथियार रखवा दिए । सन्तो एक शेरनी की तरह दहाड़ उठती है । उन हिन्दुस्तानी सिपाहियों की आत्मा को झकझोर दिया । वह नवीन को भी चुप करवा देती है और

कहती है चुप रहो, मैं औरत नहीं तुम्हारी भाभी मां हूँ लालाजी, मां अपने बेटे को इस तरह नहीं दे देगी ।"(२३)

'सुबह दोपहर शाम' उपन्यास में कमलेश्वरजी ने जहाँ खोखले मानवीय संबंधों को सामने रखा है वहीं दूसरी ओर यह भी स्पष्ट किया है कि अब भी मानवीय संवेदनाएँ, रिश्ते और प्रेम की गरिमा संबंधों को बनाए हुए है । भाभी सिर्फ भाभी ही नहीं , माँ भी बन जाती है । वह माँ शेरनी बन जाती है, उसकी मौद में जाने का किसीका कलेजा नहीं होता है। उपन्यासकार ने बड़ी विशिष्टता से बना यह संकेत किया है, उसे स्पष्ट किया है कि प्रेम का जज्बा कभी भी सूखता नहीं है । वह निरंतर अपनी गति से अपनी दिशा में बढ़ता रहता है । सन्तो में बड़ी दादी जैसी ही भावना जाग्रत होती है ।

'सुबह दोपहर शाम' तीन पीढ़ियों को दर्शित करनेवाला स्वाधीनतापूर्व की पीठिका धरातल पर संवेदनाओं के तानों-बानों से गुंथा हुआ, देश प्रेम की लौ को जलानेवाला एक सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है ।

उपर्युक्त विस्तृत भूमिका के परिप्रेक्ष्य में अब आगे स्वातंत्र्य पूर्व की स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के आलोच्य उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिकता के सूत्रों-स्वरों का समाकलन कर यह दर्शाने का प्रयत्न किया गया है कि कमलेश्वर ने स्वाधीनोत्तर भारतीय लोगों को स्वातंत्र्य-पूर्व की स्थितियों

से अवगत कराकर उनके प्रकाश में भारत के भविष्य को उज्जवल करने की प्रेरणा प्रदान की है ।

(२) लौटे हुए मुसाफिर

'लौटे हुए मुसाफिर' भारत विभाजन की पृष्ठभूमि में लिखा गया एक सशक्त उपन्यास है ।भारत छोड़ो आंदोलन के पश्चात बम्बई की ए आई सी सी बैठक में गांधीजी ने भारतीयों को 'करो या मरो' का नारा दिया तो सुसंगठित नेतृत्व के अभाव में सामान्य जनता ने इसका अर्थ 'मारो या मरो' सहज ही लगा लिया ।" (२४) भारत विभाजन का यथार्थ चित्रण कमलेश्वर ने 'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यास में चित्रात्मक रूप से अभिव्यक्त किया है । लेखक ने इस उपन्यास में एक छोटी सी बस्ती में विभाजन पूर्व, विभाजन के समय तथा विभाजन के पश्चात जो सूक्ष्म परिवर्तन हुए हैं उनका चित्रण इस लघु उपन्यास का विषय है । उपन्यास का प्रथम वाक्य- "सिर्फ नफरत की आग ने इस बस्ती को जलाया था" से स्पष्ट होता है कि कमलेश्वर स्वतंत्रता के कई वर्षों बाद की बस्ती की अवस्था से उपन्यास का प्रारंभ करते हैं । आज इस उजड़ी हुई बस्ती को देखकर नसीबन का मन रो उठता है ।"(२५) आज भी लगभग वैसा ही है जैसा आज़ादी से पहले था सिर्फ इस बस्ती की उदासी ने जकड़ लिया है । ठहरी शामें होती हैं और रुका हुआ वक्त है ।"(२६)

उपन्यासकार ने बड़ी विशिष्टता से उस बस्ती के व्यक्तियों की मानसिकता को उभारा है । विभाजन पूर्व इसी चिकवों की बस्ती का चित्रण किया है कि "आज इस खामोश बस्ती को देखकर किसी को गुमान नहीं हो सकता कि कभी यहाँ इतनी रौनक बरसती थी और दोनों समुदायों के लोग यहाँ प्रेम और विश्वास से मिल-जुल कर रहते थे, एक दूसरे के त्यौहार में भाग लेते थे राजनीति से बेखबर में लोग एक दूसरे के सुख-दुख में सम्मिलित थे ।"(२७)

भारत विभाजन की पृष्ठभूमि में समूचे देश की जो परिस्थितियाँ थीं उनका बयान करते हुए कमलेश्वर लिखते हैं 'विभाजन हुआ तो पंजाब में खून की नदियाँ बहीं, बंगाल में मारकाट हुई । सूबे के बड़े शहरों में कत्ल हुए और बस्तियाँ जलाकर राख कर दी गईं ।"(२८) भारत विभाजन ने जिस सामूहिक पाशविकता का उदाहरण प्रस्तुत किया उसकी पृष्ठभूमि में अनेक राजनीतिक सामाजिक अथवा वैयक्तिक सत्य झूठे दिखायी देने लगे । भाई अपनी बहनो से उतना प्यार नहीं करते जितना बहनें अपने भाइयों से ।"(२९) स्वतंत्रता बाद भी संक्रमणकालीन परिस्थितियों ने मनुष्य के समस्त अन्तर-बाहय को आंदोलित कर समय और समय के प्रति धारणाओं को परिवर्तित कर दिया ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ देश का वैचारिक पुनर्जन्म हुआ था । आजादी केवल राजनीतिक मूल्य के रूप में स्वीकृत नहीं हुई थी, बल्कि विचारों की एक नवक्रान्ति का सपना भी उससे जुड़ा हुआ था । किंतु वैचारिक पुनर्जन्म के साथ ही एकाएक विभाजन का अभिशाप जुड़ जाता है और तब जब कि हमारी

चेतना एक स्वर्णिम भावोपवाद से स्पंदित हो रही थी कि शरणार्थियों के काफिले आते जाते दिखाई देने लगे ।"(३०) उन काफिलों के दौर में उस भयंकर रक्तपात के बीच आंतरिक रूप से एक विघटन समा गया जो कहीं हमारे दिमागों और दिलों में शरणार्थी बनता चला गया ।"(३१)

वस्तुतः कमलेश्वर ने 'लौटे हुए मुसाफिर' में उन अबोध लोगों की कथा को आधार बताया है । लेखक ने बड़ी स्पष्टता से व्यक्त किया है कि इन्सानों के हृदयों में प्रेम के स्थान पर नफरत की आग भड़काने में सिर्फ अंग्रेज ही नहीं थे, पर भारत में ही रहनेवाले वे विध्नसंतोषी मुसलमान थे, जिन्होंने अंग्रेजों के Divide & Rule की नीति को इख्तियार किया । देश के चारों दिशाओ मे विभाजन की आंधी फैली हुई थी, पर लेखक उस ओर न महत्त्व नहीं देते यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि चिकवों की बस्ती में तो वही पारस्परिक प्रेम पनप रहा था । उस चिकवों की बस्ती में राजनीतिक हवा का प्रवेश तक नहीं था । भारत विभाजन के कारण चारों ओर साम्प्रदायिक दंगे फसाद हो रहे थे पर इस शहर, बस्ती में एक बूंद खून नहीं गिरा । किसी मुहल्ले पर धावा नहीं हुआ, किसीने किसी को नहीं मारा । किसी ने किसी को गाली तक नहीं दी । मस्जिदों में लड़ाई की तैयारियाँ नहीं हुईं । मंदिरों में इंट-पत्थर इकट्ठे नहीं हुए । जो बदमाश रोज पिटते थे उन्हे भी किसी ने नहीं पीटा ।"(३२)

लौटे हुए मुसाफिर में जीवन का यह यथार्थ भिन्न्न स्तर पर उभरकर सामने आया है । स्वाधीनता से पूर्व भारत के कस्बों में ही क्या पूरे देश में साम्प्रदायिकता व्याप्त थी । जिसके कारण समाज में रोजी रोटी की समस्या विकट हो गयी थी । इसी स्थिति को कमलेश्वर ने अत्यंत सूक्ष्मता से पकड़ा है ।"(३३)

बड़ी जल्दी लौट आए इम्तिकार भाई ? सवारियाँ नहीं थीं तो, पर कुछ समझ में नहीं आता सत्तार, मैं मुसलमान हूँ शायद इसलिए लोग मेरे रीक्शे में बैठते कतराते हैं ऐसी क्या बात है ?

स्टेशन का रास्ता सुनसान है न । इसलिए उन्हें डर लगता है । अरे पूछो यहीं पैदा हुआ यहीं रहा, बसा अब लोग मन ही मन मुझ पर शक करते हैं । समझ में नहीं आता यह हो क्या रहा है । बड़े बुझे मन से इख्तिकार ने कहा था ।"(३४)

स्वतंत्र भारत की आंतरिक समस्याएँ भी भयंकर थीं । भारतीय रंगमंच पर मानव जीवन के इतिहास का एक दुखद एवं करुण नाटक खेला गया । आर्थिक सहायता एवं निवास निर्माण के अतिरिक्त उद्योग धंधे भी अनके लिए खोले गये थे फिर भी बेकारी बढ़ती गई, जनसंख्या शिक्षा, पिछड़े वर्ग विकलांग आदि की अनेक समस्याएँ देश की प्रगति को चुनौती दे रही थी ।"(३५) स्वाधीनता के पश्चात मची आपाधापी देश को असमान विकास की ओर मोड़

रही थी ।"सत्ताधारी दल की राजनीति कुबेर का खजाना बन गई थी जो भी जहाँ पहुँचा मालामाल हो गया । देश के बड़े बड़े जमीनदार जो कि स्वाधीनता आंदोलन के दमन में चढ़ चढ़कर भाग ले रहे थे अचानक सफेद टोपी पहनकर देश भक्त बन गये । इस बगुलाई भक्ति ने व्यक्तिगत लाभ की अंधी दौड़ आरंभ कर दी । राजनीति के सूत्र संचालक वे व्यक्ति बन गये जिन्होंने देश की स्वाधीनता में किंचित भी योगदान नहीं दिया ।"(३६)

कमलेश्वर नें 'लौटे हुए मुसाफिर' में विभाजनोत्तर मानवीय घायल संवेदनाओं को चित्रित किया है । एक ओर अनेक विभीषिकाओं से घिरा इन्सान फिर भी नसीबन जैसी नारी प्रेम का दीप जलाए हुए है, इन्सानियत की भावनाओं की मिसाल बनी खड़ी है, तो दूसरी ओर रतन और मकसूद जैसे हज़ारों लोगों ने अपनी आनेवाली पीढ़ी के साथ गददारी की है उसकी कीमत इस देश को चुकानी होगी । कई सत्तार सलमा, बच्चन और नसीबन की कुर्बानियाँ भी इस भूल को सुधार नहीं सकेंगी । कमलेश्वर ने लघु उपन्यास में यहाँ चिकवों की एक बस्ती को मुख्य रूप से चित्रित किया है, तो साथ साथ विभाजन की विभिषिकाओ को भी चित्रित किया है । उनमें हिन्दू, मुसलमान का कोई जातिवाद नहीं था... 'मै' का शब्द ही नहीं था सिर्फ 'हम' थे । कल यहाँ न कोई हिन्दू और न कोई मुसलमान था मात्र इन्सान थे । सन् ४५ के पश्चात अपनी इन्सानियत को भूलकर केवल हिन्दू और मुसलमान मात्र बनकर रह गये उनकी नज़रों में जहर और दिलों मे खाइयाँ उभर आईं । उनका प्रेम,

रोजी , भूत भविष्य और वर्तमान सब पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के साथ बंध गया है । एक उद्दश्य भय हर ओर प्रत्येक क्षण व्याप्त था–

तुमने मुझे बुलाया था ।

नहीं तो ।

तो मैं जाऊँ

जाओ ।

इस तरफ मैं नहीं आऊँगा

सलमा चुप थी

अगर पाकिस्तान बना तो तुम जाओगी सलमा हंस दी पाकिस्तान के नाम से झिझकने ने लगी ।"(३७)

उपन्यास का कथानक कस्बे में गुजारे हुए जीवन के अमूल्य क्षणों की स्मृति है, जो सजीव और साकार से बन गए हैं । किस कदर हिन्दू, मुसलमान मिल–जुलकर रहते थे । इस बस्ती की विधवा नसीबन छोटे मोटे काम करते हुए अपने बच्चों का भरण–पोषण कर रही है । एक साई है जो दिन भर इधर उधर घूमता है, शाम के समय धूनी रमाता है । सत्तार जो पहले किसी सर्कस कंपनी में काम करता था अब इस बस्ती में आकर जम गया है । सलमा जो परित्यक्ता है अपने पिता के यहाँ रह रही है और आर्थिक उपार्जन हेतु बस्ती के जनाना अस्पताल में काम करती है । एक और पात्र बच्चन है जिसकी पत्नी का

स्वर्गवास हो चुका है जिसके दो छोटे छोटे बच्चे हैं जिनको नसीबन माँ से भी अधिक लाड़-प्यार देती है । सायकिल की दुकानवाला रतन भी है । ठाकुर, गुप्ता, जाफरमियाँ चौबे भी हैं । राजनीतिक उथल-पुथल से अनजान अपने सुख-दुख में डूबे थे लोग बड़ी शांति से जी रहे हैं और एक दूसरे के लिए जान देने के लिए तत्पर रहते थे । जब हिन्दूओं की बस्ती से ताजिये गुजरते थे तो उन पर गुलाबों की वर्षा करते थे । औरतें अपने बच्चों को गोद में उठाये ताजियों के नीचे से गुजरती थीं और दौड़ - दौड़कर फेंके हुए मखाने को उठाकर धोती की खूंट से बांध लेती थीं । जब रामलीला का विमान उठता तो मुसलमान औरतें अपने घरों की चिकों से बाहर आकर मूर्तियों का श्रृंगार दर्शन करतीं । धार्मिक पर्व अवसरों में दोनों जातियों में संप था । राजनीतिक विद्रोह में भी उनका संगठन रहता था । बस्ती के लोगो ने मिलकर अंग्रेज अफसरों को जान से मार डाला । राधेश्याम और यूनूस दोनों को बस्ती में से पकड़ गए थे । सन ४२ में चिकवों के लड़कों ने बड़ा उधम मचाया था सरकार की नाक में दमकर दिया था ।

इसी चिकवों की बस्ती में जुम्मनताई रहता था । जिसकी कोठरी के सामने सदा धूनी लगी रहती थी । स्टेशन के कुली इक्के टांगेवाले और फेरीवाले यहाँ जमा होते थे । जुम्मन ताई की यही कोठरी इस कथानक का केन्द्र है जहाँ से कहानी का विस्तार होता है । यहाँ बैठकर एक दिन इख्तिकार

कहता है ‘‘जिन्ना साहब, किधर से मुसलमान हैं, सुना नमाज नहीं पढते ।" साई ने उसे रोका था–तुझे क्या लेना देना, तू अपना इक्का जोत ।"(३८)

परंतु 'लौटे हुए मुसीफर' में यह स्थिति भिन्न स्तर से उद्‌घाटित हुई है । चिकवों की बस्ती के लोग स्वाधीनता के विषय में नितान्त अनभिज्ञ (अज्ञात) थे क्योंकि वे अपने व्यक्तिगत संघर्ष से ही लड़ रहे थे । साम्प्रदायिकता की आंधी ने उन्हें उज़ाड दिया था ।"(३९) साम्प्रदायिक की आग से ही कथानक एक नया मोड़ ग्रहण करता है । नफरत की चिनगारी धीर–धीरे फैलती है । सलमा का पति मकसूद और अलीगढ का सियाजी कारकुन यासिन आ जाते हैं और साई तीनों मिल जाते हैं मस्जिदों में बैठक होने लगती है । लोगों के मन में हिन्दुओं के प्रति, कोंग्रेस तथा गांधीजी के प्रति नफरत की आग फैलती जाती है । प्रतिक्रिया स्वरूप बस्ती में संघ का प्रवेश होता है । नफरत की चिनगारियाँ धीरे धीरे फैलती हैं ।यासीन और मकसूद आग फैलाने का काम करते हैं, संघी भी उसमें लगन से जुटे हैं ।"(४०) परिणाम स्वरूप सब तहस नहस होने लगा । जहाँ दोनों जातियों के हृदय में प्रेम पनपता था, आज उन्हीं हृदयों में से नफरत की आग के शोले निकल रहे थे । नफरत, धृणा का लावारस उस बस्तीमें बहने लगा । दिली इमारतें ढहने लगीं । सर्कस के घोड़ों की जीन कसनेवाले सत्र्तर को ताई ही दूसरे कस्बे से अपने कस्बे में लाया था । सत्तार कहीं से पाकिस्तान बनने की खबर ले आया था और सोचता था कि शायद गरीब मुसलमानों को वहाँ रोजगारकी कमी नहीं रहेगी । इस कस्बे में

आकर सत्तार का मन सलमा नामकी लड़की की ओर आकर्षित होता है । वास्तव में सलमा विवाहित है परंतु परित्यक्ता हो जाने से वह भी लाचार बेबसी सा जीवन गुजार रही थी ।

सत्तार और सलमा का यह प्रेम प्रसंग बस्ती में चर्चा का मुख्य विषय बन गया था । 'प्रेमचंद पूर्वकालीन सामाजिक जीवन पिछड़ा हुआ था । अशिक्षा के कारण अनेक सामाजिक कुप्रथाएँ समाज की प्रगति को रोकती रहीं । जाति-पाँति के कड़े बंधनों के कारण एक प्रकार का तनावपूर्ण वातावरण समाज में था । लोगों के अविकसित तथा अनुदारपूर्ण दृष्टिकोण के कारण नर-नारी के मुक्त प्रणय की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी । विवाह में भी लड़के - लड़की का मन ही पूछा जाता था । माता-पिता की ओर से ही विवाह निश्चित किया जाता था । ऐसी परिस्थिति में नारी पुरुष के स्वच्छंद प्रेम को समाज की मान्यता मिलता असंभव ही था ।"(४१) लोकमानस की संकीर्णता के कारण सत्तार और सलमा का प्रेम पनप नहीं पाता है । सलमा का पति वापिस लौट आता है और कस्बे में आकर साम्प्रदायिक दंगे-फसाद करवाता है । परिणाम स्वरूप कल तक के दोस्त, हिन्दू मुस्लमान एक दूसरे को अविश्वास की नज़रों से देखने लगते हैं । सांइ इन साम्प्रदायिक दंगों की और भी हवा देता है । इस आग को और भी भड़काने की कौशिश करता है ।अब दोनों जातियों में अपने हिन्दू और मुसलमान होने का अहसास बढ़ता जा रहा है । हिन्दू अपने आपको ज्यादा हिन्दू समझने लगे हैं और मुसलमान अपने आपको ज्यादा

मुसलमान ।"(४२) चिकवों की बस्ती में एक ओर मौलाना का भाषण लोगों के दिलो – दिमाग की दूरियाँ बढ़ाता है तो दूसरी ओर संघ के अधिकारी विशाल सभा को संबोधित करते कहते थे । हिन्दू राष्ट्र ने आज अपना तीसरा नेत्र खोला है वह सब इसमें भस्म होगा जो विदेशी है । वीर भोग्या वसुंधरा और वीर वही है जो हिन्दू है ।"(४३) साम्प्रदायिक वैमनयस्य के कारण यासीन और ताई बच्चन को अपनी जाल में फँसाकर पुलिस के हवाले कर देते हैं । बच्चन के दो छोटे बच्चों को नसीबन अपने घर में पनाह देती है । उन्हें अनाथश्रम में जाने नहीं देती । भारत – पाक विभाजन प्रत्यक्षत: कोई युध्ध नहीं था किन्तु यह युध्ध भी विभीषिका से भी अधिक दारुण था । उसमें मानवीय करुणा और पीड़ा के अलक्षित, अन–चीन्हे सन्दर्भ और संवेदनाएँ थीं । साम्प्रदायिक धृणा, विद्वेष हिंसा पीड़ा और अत्याचार के चित्र तथा धृणा और द्वेष के इस मरुस्थल में प्रेम सौहार्द, त्याग और विश्वास और मानवता में आस्था जागृत करनेवाली घटनाओं एवं कोमल मानवीय भावों का चित्रण है ।"(४४) नसीबन एक ऐसी नारी पात्र है जिसके हृदय में सभी इन्सानों के प्रति प्रेम और आत्मीयता का जज्बा है । वह सत्तार को भी उसकी विकट परिस्थिति में अपने यहाँ आसरा देती है । धीरे–धीरे एक सैलाब सा उठता है 'जिसमें बस्ती की चूलें हिल रही थीं । दिली इमारतें ढह रही थीं । एक उबलता हुआ नफरत का दरिया नीचे ही बह रहा था । शक और डर सबके दिलो में समाए हुए थे ।"(४५) दूसरी ओर हिन्दू संघटन काफी तेज था । सभी

अपनी–अपनी लाठियाँ लेकर बस्ती में मुसलमानों को डरा धमका रहे थे । यहाँ तक कि अकेली मुसलमान औरत नसीबन को भी नहीं छोड़ते, पर नसीबन ने डटकर सबका मुकाबला किया, सारे हिन्दू भाग गए । इसी के साथ जुड़ा हुआ है मोह भंग का एक अध्याय । वह त्यागी पीढ़ी जो १४ अगस्त को रात के ग्यारह बजकर उनसठ मिनट तक बहुत संयमी, आदर्शवादी, स्वप्दर्शी, सच्चरित्र और साधु थी एक मिनट बाद ही स्वार्थ लोलुप अत्याचारियों में बदल गयी । चारों तरफ एक नया राजनीतिक वर्ग पनपने लगा जो जोंक की तरह जनता का रक्त चूसने लगा और अपने लिए सुविधाएँ बटोरने में लग गया । स्वार्थपरता, जातिवाद बेईमानी का जो दौर चला उसने भारतीय मानस को जबरदस्ती मोहभंग की स्थिति में खड़ा कर दिया ।"(४६) तत्पश्चात तो उपद्रव की एक बाढ़ सी आ गई । दोनों कोमों में पूर्णतः अलगाव हो गया । पाकिस्तान का अलगाव भारत से हुआ । मुसलमान खुशियाँ मनाने लगे । बच्चन ने अपने बच्चों को बुलवाया । नसीबन के पास जो कुछ रुपये और चांदी थी, सत्तार के हाथों बच्चों के साथ बच्चन को भिजवा दिया । नसीबन भीतर ही भीतर खून के आँसू पीकर रह गई । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश में एकाएक अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गई थीं । शिक्षित वर्ग बेरोजगारी की श्रेणी में आने लगा । देश सुधार के लिए जो योजनाएँ सरकार ने बनाई थीं वह ईमानदारी के अभाव तथा पूँजीपातियों के एकाधिकार के कारण विफल हो गई । सरकारी कार्यालय रिश्वत के अड्डे बनने लगे थे । भाई भतीजावाद के कारण अयोग्य व्यक्ति

अच्छे पदों को प्राप्त करने लग थे ।"(४७) देश के विभाजन के कारण सामाजिक तथा आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न होने लगी थीं । भारत-पाक विभाजन के कारण कस्बों में भगदड़ मच गई थी । लोग अपना समान बाँधकर पाकिस्तान की ओर प्रयाण करने लगे । चिकवों की बस्ती खाली हो गई, नसीबन मस्जिदों की सीढ़ियों पर बैठी वीरान बस्ती को देखती रही । दोपहर को सत्तार ने बताया कि वह भी जा रहा है । इख्तिकार के जाने की सूचना से एक अर्थहीन मुसकराहट से नसीबन हँसकर रह गई । सारी बस्ती में दो ही चिराग जल रहे थे एक नसीबन का और दूसरा ताई का । कभी कभी दोनों साथ बैठते पुरानी बस्ती को याद करते । बीते दिनों को याद करते और गुम सुम उठकर अपने अपने घर की ओर चले जाते ।

भारत देश को आजादी मिल चुकी थी । उसके साथ जीवन का नया संदेश खुशियाँ भी लाई थी । सिंचाई के नए साधनों के विकास के लिए पाताल कुएँ बन रहे थे और नए-नए लोग यहाँ आने लगे थे । बस्ती आबाद हो रही थी । शहर में नई नई चिमनियाँ लग गई थीं, जो धुँआ उगल रही थीं । एक नया जोश नई उमंग एक नई ताजगी भरी हवा, एक नई रोनक वातावरण को पुनर्जीवित कर रही थी । बाहर के अनेक मजदूर वर्ग यहाँ के कारखानों में काम करने आने लगे थे ।

एक दिन शाम को ऐसे ही कई लोग आए और मस्जिद का पता पूछने लगे । नसीबन के बताने पर उन्होंने कहा यहीं कहीं हमारे मकान थे । हम यहाँ

काम करने आये हैं । जो लोग पाकिस्तान जाने के लिए निकले थे पाकिस्तान बनने के बाद भारत के कोने कोने से जितने भी धनवान थे वे जल्दी से जल्दी अपना इंतजाम करके चले गए । गरीबों का कोई रहनुमा नहीं था ।"(४८)

मोहभंग तोड़कर वे लोग निकल तो गए थे पर घरों को ऐसे छोड़ गये थे जैसे वे कभी वापस आयेंगे ।"(४९) पाकिस्तान की ओर जो लोग रवाना हुए वे पाकिस्तान पहुँच तो नहीं पाए लेकिन जहाँ तक पहुँचे वहीं अपना डेरा डाला । जो नई युवा पीढ़ी पाताल कुओं में काम करने आये वे याद करके अपने आशियानों को ढूँढ रहे थे । वस्तुतः कमलेश्वर ने 'लौटे हुए मुसाफिर' में उन अबोध लोगों की कथा को आधार बनाया है । जो केवल अपनी रोजी–रोटी के लिए ही संघर्षरत थे परन्तु साम्प्रदायिकता की लहर में वे बह गये । जो न पाकिस्तान जा सके न ही वापस अपने कस्बे में लौटे सके, अंत में जो लौटकर आये वे मजदूर बनकर ही आये ।"(५०) चिकवों की बस्ती छोड़कर जो बच्चे अपने माँ–बाप के साथ गए थे वे बच्चे अब जवान होकर लौटे थे । क्षणभर में ही पुरानी पहचान उभर आयी यादों पर पड़ी धूल की पर्त साफ हो चुकी थी । नसीबन की खुशियाँ का ठिकाना न था । वह उन्हें खिलाने पिलाने की व्यवस्था में व्यस्त हो गई ।

'नसीबन खुशी के मारे रो पड़ी । वे सब बच्चे बशीर बाकर रमज़ान वगैरह जवान होकर लौटे थे ।"(५१) भटके हुए मुसाफिरों में कुछ मुसाफिरों ने अपनी मंजिल पा ली थी और कुछ बैगाने होकर भटके हुए थे ।

(३) एक सड़क सत्तावन गलियाँ

कमलेश्वर का प्रथम उपन्यास 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' है, जो प्रकाशक की भूल के कारण ‘बदनाम गली' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था । उपन्यासकार के रूप में यह कमलेश्वर का प्रथम प्रयास था, जो इतना सफल है कि कमलेश्वर को उपन्यासकार के रूप में सुप्रतिष्ठित कर देता है ।

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास आकार-प्रकार में लघु होने के बावजूद विस्तार में वह काफी बड़ा है और गहराई इसकी इतनी ज्यादा है कि उसकी थाह पाना मुश्किल है । इसकी दूसरी विशेषता यह है कि इसमें पात्रों की संख्या अधिक है और उन सभी पात्रों के बारे में कुछ न कुछ प्रामाणिक जानकारी दी गयी है, फिर भी पढ़ते समय ऐसा नहीं लगता कि पात्रों के साथ किसी प्रकार का अन्याय हुआ हो । प्रेमचंद के उपन्यासों की भाँति पात्रों की भरमार है पर साथ-साथ यह भी सत्य है कि पात्र कहानी में उपन्यास में उलझे नहीं है और न ही मुख्य कहानी से दूर हटे हैं ।

उक्त उपन्यास में छोटे शहर या कस्बे की बिलकुल नज़दीक से देखी जिंदगी, वहाँ के लोगों के दुख-दर्द आशाएँ निराशाएँ, और हत्याएँ क्या नहीं है । इस छोटे से उपन्यास में जितने लोग उतनी तरह की जिन्दगियाँ हैं उनकी, फिर भी उनमें कोई ऐसी एकसूत्रता है जो उन्हें आपस में जोड़े रखती है । सरनामसिंह और रंगीले शिवराज और बाजा मास्टर, बंसरी और कमला, प्रायः

सभी इस सूत्र से बँधे हुए हैं क्योंकि सब को सब किसी–न–किसी रूप में उस वर्ग के सदस्य हैं जो सताये जाते रहे हैं और प्रायः गुमराह भी किए जाते हैं ।"(५३)

कमलेश्वर ने 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास में जिस परिवेश को लिया है वह जीवन के यथार्थ धरातल पर अवस्थित है । उतर प्रदेश के मैनपुरी कस्बे की जिंदगी को विभिन्न परिप्रेक्ष्य में रखकर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है । उपन्यास की वस्तु स्वाधीनता से पूर्व के भारत से लेकर सन १९४७ के पश्चात के भारत तक फैली हुई है । आजादी के लिए लड़नेवाले मध्य और निम्न वर्ग के लोगों ने जिस नये समाज की कल्पना की थी उस स्थिति का मोहभंग स्वाधीनता के पश्चात् ही हो गया । स्वाधीनता की लड़ाई में भारत के निम्नवर्गीय एवं मध्यमवर्गीय हिन्दूओं और मुसलमानों ने संगठित होकर एक जुट होकर अंग्रेजों के सामने स्वाधीनता की लड़ाई लड़ी । दोनों समुदायों ने एक दूसरे के हाथों में हाथ देकर आज़ादी की जंग लड़ी, अपने लक्ष्य पर डटे रहे । परिणाम स्वरूप भारत की स्वाधीनता का स्वप्न साकार हुआ । भारत जैसे भूभाग को दी गई स्वतंत्रता अंग्रेजों की विवशता थी, न कि उनके द्वारा कोई दिया गया दान भारत में एक नए युग का आरंभ हुआ ।"(५४) स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में एकाएक अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गई थीं । शिक्षित वर्ग बेरोजगारी के कारण बेचैनी महसूस करने लगा था । देश सुधार के लिए जो योजनाएँ सरकार ने बनाई थीं, वह ईमानदारी के अभाव तथा पूँजीपतियों के

एकाधिकार के कारण विफल हो गईं । सरकारी कार्यालय रिश्वत के अड्डे बनने लगे थे। भाई भतीजावाद के कारण अयोग्य व्यक्ति अच्छे पदों को प्राप्त करने लगे ।"(५५) जिस नए समाज की कल्पना इन लोगों ने की थी उस स्थिति का भ्रम स्वाधीनता के पश्चात खत्म हो गया । प्राय: सभी वर्गों ने अपनी इच्छानुसार, अपनी शक्तिअनुसार सपने संजोए थे । वे सभी सपने चकनाचूर हो गए । उपन्यास के अनेक पात्रों ने सुंदर कल्पनाओं के घरौंदे बनाए थे - उनमें मास्टर हबीब, संपादक निर्मोही और बाजा मास्टर जैसे असंख्य लोगों की आकांक्षाओं की टुटन, घरौंदे बिखर जाने की वेदनाओं का उमड़ती व्यथाओं का दस्तावेज 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' है । कमलेश्वर ने स्वाधीनता पूर्व और पश्चात के निम्न मध्यवर्ग के समाज की मानसिकता का सफल अंकन किया । निन्म मध्यमवर्ग समाज कितनी विषमताओं से घिरा हुआ है । उस समाज के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं व्यक्तिगत जीवन का बडा ही संवेदनात्मक चित्र इस उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है ।

यह उपन्यास उत्तर प्रदेश के मैनपुरी कस्बे की कथा है । ''किन्तु इसमें आंचलिकता अपना लोकल कलर (क्षेत्रीय वर्ण) जैसी कोई अनुभूति नहीं है, ऐसा न होना इस लघु उपन्यास की कमी नहीं, विशेषता ही है । लेखक ने अपनी कथा को अधिक यथार्थ और विश्वास योग्य बनाने के लिए ही मैनपुरी स्थान का नामोल्लेख किया है ।"(५६) यह कथन पूर्णतया सत्य है क्योंकि स्थान विशेष को विश्वसनीयता बनाये रखने के उद्देश्य से है । मैनपुरी का

नामोल्लेख किया गया है किन्तु इस एक स्थान के माध्यम से स्वतंत्रता पश्चात के सम्पूर्ण भारत की जनता की समस्याओं और संवेदनाओं को चित्रित किया गया है । इस संबध में अन्य लेखक का कथन की द्रष्टव्य है । इस उपन्यास में "स्वाधीनता से पहले और बाद की परिस्थितियों का जो चित्र मिलता है, वह सूक्ष्म अभिव्यक्ति भी विशिष्ट है । कम्यूनिस्ट, कोंग्रेस कस्बे में व्याप्त साम्प्रदायिकता रामलीला और नाटक मंडली, समाचार पत्रों की दयनीय स्थिति, ड्राइवरों के व्यस्त जीवन का तनाव और प्रेम में टूटते बिखरते जीवन का यथार्थ के विश्वसनीय परिपेक्ष्य में चित्रित किया है ।" (५७) कमलेश्वर ने व्यक्ति के जीवन से जुड़े यथार्थ को पेश किया है । प्राय: प्रत्येक व्यक्ति की जिंदगी में संघर्ष है । सरनाम, रंगीला बंसरी, शिवराज, बाजा मास्टर, हबीब डॉ. लालचंद्र आदि व्यक्तियों के माध्यम से जीवन के संघर्ष का आकलन किया है । सरनाम लालसिंह से कहता है-"यह सब मै नहीं जानता । मैं आदमी मजबूर-आदमी की लड़ाई हंमेशा दुसरी जगह से देखता हूँ जिस लड़ाई की और आपका ध्यान है, वह फैक्टरियों से भरे कानपुर, बम्बई या अहमदाबाद में हो सकती है, यही नहीं । यहाँ सब जीने के लिए संघर्ष कर रहे हैं । मालिक और मजदूर, वकील और मुहर्रिर दुकानदार और नौकर सभी एक गांव में हैं और उस गाँव के चारों और एक दूसरी तरह का तूफान उमड़ रहा है ।"(५८)

उपन्यास का प्रमुख पात्र सरनामसिंह है, किन्तु साथ साथ रंगीले और शिवराम के खंडित व्यक्तित्व को भी खोजा गया है । इसी प्रकार बंसी और

कमला के खंडित जीवन को लेखक ने बखूबी उभारा है । साथ ही साथ मैनपुरी की मण्डी का चित्रण भी किया गया है । जब तक मंडी में व्यापार के सौदे वगैरह होते थे तब मैनपुरी में चारों ओर रौनक ही रौनक दिखाई देती है । मोटर पकड़ने के लिए आते हुए इक्केवालों की सवारियाँ मोटर अड्डे के तख़्त पर ज़मा हुआ ड्राइवरों और किन्नरों का झमेला । मंडी की नाड़ी धीमी पड़ते ही पूरी बस्ती उदास हो जाती है । तब वहाँ के लोगों के गोल के गोल बैठते हैं । "कव्वाली ग़ज़ल रसिया के शौकीन मोटर के अड्डों पर और आल्हा के शौकीन तम्बाकूवाले आदतियों के यहाँ जमा हो जाते हैं, मोटर अड्डो पर खास मज़मा रहता है ।"(५९)

मंडी का धर्मादा सालभर इकट्ठा होता, फिर इसी समय के दौरान रामलीला की मंडली रामलीला करने आती । बाजा मास्टर ग्रामीण प्रजा को राम की आरती सुनाते हैं । श्री रामचंद्र कृपालु भजु मन हरन भव भय दारुणम् ।"(६०) सम्मोहनकारिणी आरती से ग्रामीणों को मंत्रमुग्ध कर देते हैं । भक्ति का वातावरण छा जाता है ।

बाजा मास्टर और शिवराम अपनी आप बीती और सुख – दुख की चर्चा एक दूसरे से करते हैं । शिवराम की भी अपनी एक कहानी है – मैनपुरी में साधु सर्वदानंद ने एक छोटी सी कुटिया बनाई, वहाँ पीपल का पेड़ निकल आया । जिसे लोग पवित्र मानते हैं । तद्पश्चात एक सेठ को अनेक वर्षों के पश्चात् पुत्र प्राप्ति हुई । ग्रामवासियों की श्रध्धा में बढ़ोतरी हुई । धीरे-धीरे

वहाँ एक अच्छा खासा आश्रम बन गया । गुरुपूर्णिमा के दिन भण्डारे का इन्ताजाम होता । भक्त यथा शक्ति दान दक्षिणा अर्पण करते और साथ साथ अपने आवारा सिरफिरे बच्चों को गुरु की शरण में रख जाते । अंध विश्वास का साम्राज्य था । शिवराम की बात कुछ और थी वह बड़ा सीधा लड़का था । उसके पिताजी ने गुणानंदजी को बालक समर्पित करते हुए कहा 'आपके चरणों में उध्धार है, हम पातकियों के घर में इसका विकास कैसे होगा । महाराज अपने चरणों में सरन देकर विद्या दान दें.... संस्कृत पढ़ पाए वेदशास्त्र ।"(६१) उन छोटे से किशोरों का प्रतिदिन का कार्यक्रम निश्चित ही था ।भजन कीर्तन होता, धुन लगती । शिवराम का महत्त्व बढ़ गया था । सरनाम अपना प्रतिबिंब शिवराम में देखता है।

शिवराम गाँव जाकर जब वापस लौटता है तो आश्रम का वातावरण बदला हुआ सा प्रतीत हुआ । अचानक एक दिन अड्डे पर शिवराम की मुलाकात सरनाम से हो जाती है और वहा सदा के लिए आश्रम का त्याग कर देता है । तेरह वर्षीय किशोर शिवराम को सरनाम की पनाह मिल जाती है और सरनाम शिवराम को अपने छोटे भाई की तरह ही संभालता है ।

सरनाम की अपनी दास्तान है । सरनाम और मंगल की डकैती की टोली थी । सरनाम दो-तीन दिन भी छुटियाँ ले लेता और कहीं न कहीं डकैती डालता । इसी तरह एक बार सुनार के यहाँ डकैती हेतु वे लोग गए जहाँ उसके एक साथीदार की नज़र बंसरी नाम की लड़की पर अटक जाती है । सरनाम

अपने साथी की चंगुल से बंसरी को बचा लेता है, एक ओर पुलिस आ जाती है, दुसरी और सरदार को गोली लग जाती है, साथ साथ गाँववालो का घेरा गहरा होते ही वह सरदार को लेकर नदी में कूद जाता है । कोर्ट कचहरी में शनाख्त में बंसरी सरनाम को पहचानने से इनकार कर देती है । सरनाम के हृदय में बंसरी के प्रति अजीब मादक अनुभूति होती है । इस अनूभूति ने सरनाम को रोमांचित कर दिया था । उसकी सूनी जिंदगी में बंसरी बहार बनकर आने लगी थी ।

समय की गति तेज़ होती है । समय गुजरता गया एक दिन अचानक सरनाम को बंसरी मेले में मिल जाती है । कहाँ है आजकल, कुछ काम धंधा- बंसरी ने पूछा, वहीं हूँ... दोनों का मिलना, बातें करना और मेले के बंद होने के पश्चात् आधी रात भर दोनों का सामीप्य और प्रेम, जब बंसरी गई .... तब थके हुए शरीर में कुछ सनसनाहट भर गई थी ।"(६२) विधाता को, नियति को कुछ और ही मंजूर था । मेले के आखरी दिन सरनाम पहूँच नहीं पाता जब पहूँचा तब बंसरी न थी, खाली मैदान ही नज़र आया । एक बार फिर अनायास सरनाम ने बंसरी को रामलीला में देखा, किन्तु बंसरी ने देखा अनदेखा कर दिया, खुशियाँ हाथ ताली देती हुई निकल गईं ।

सरनाम का एक जिगरी मित्र रंगीला था । सरनाम ने उसे काफी सहायता की थी । रंगीला झूठी गवाहियाँ कोर्ट में देता था जिससे वह सबकी नज़र में आ गया था । समयानुसार रंगीला अपने रंग बदलता । सरनाम अपने

जिगरी दोस्त से बंसरी की और उसकी प्रेमकथा को बताता नहीं है हृदय में ही दु:खी हो रहा था । रामलीला देखने रंगीला उसीके साथ आया हुआ था उसी समय आश्रम के बालकृष्ण की लीला की चर्चा चल रही थी । बालकृष्ण लीला में.. दया हुई भगवान की, जन्म सफल हुआ, बालकृष्ण ने स्तनपान किया धन्य हो गई माईं, धन्य धन्य आवाजें उठीं । युवती मदहोश होकर अलग हो गई ।"(६३) बाललीला में वासना की क्रीड़ा होने लगी । अंधग्रामवासियों ने धन्य धन्य कहा किन्तु वास्तविकता का अनुभव होते ही बाललीला वालों की अच्छी धुलाई हो गई थी । मैनपुरी कस्बे में गेंदा कवि भिन्न-भिन्न कवियों के दोहे सुनाकर अच्छी आमदनी कर लेता था । सरनाम इन सभी व्यक्तियों की वास्तविकता जानता था । मैनपुरी कस्बे का कोई व्यक्ति ऐता न था जिसे सरनाम न जानता हो । कस्बे के लोगों के सामने वह अपनी दयनीय स्थिति बताकर अपने झूठी गलत, काली करतूतें छिपाए रखता । गेंदा कवि लाचार, असहाय, बेबस नारियों को सहारा देकर उनका विश्वास जीतकर उनका सौदा करनेवालों मे से था । रंगीला गेंदाकवि से चारसौ रुपये में नारी का सौदा करता है । गेंदाकवि कहता है बंसरी तेरी किस्मत खुल गई। बंसरी का नाम सुनते ही सरनाम के पैरों तले की ज़मीन खिसक जाती है वह फिर भी अपने मित्र से बंसरी के विषय में कुछ नहीं कहता । सिर्फ अपना मित्र धर्म अदा करता है । एक ओर सरनाम का प्रेम धराशायी हुआ तो दूसरी ओर रंगीले का जीवन आबाद होता है, उसका जीवन सँवर जाता है । बंसरी अपने भूतकाल के

प्रेमप्रकरण को भूल जाना चाहती है किन्तु वह सरनाम के प्रेम को उसके गरिमा पूर्ण स्पर्श को भूल नहीं पाती है । सरनाम की तरह उसने भी चुप्पी धारण कर ली थी ।

कमलेश्वर ने 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास में अनेक पात्रों की कहानी को, उनके प्रेम प्रसंगों को व्यक्त किया है । बाजा मास्टर लीला नामक स्त्री से प्रेम करता था । दोनों पात्र विवाह के पवित्र बंधन में बांध जाते हैं, किन्तु समाज को उनका यह बंधन स्वीकार न था । उनके जीवन में अनेक विषमताएँ आती हैं । अंत में लीला का स्वर्गवास हो जाता है । लीला की अकाल मृत्यु ने बाजा मास्टर को बदहवास कर दिया था । ऐसे नाजुक क्षणों में मास्टर हबीब बाजा मास्टर का साथ देता है ।उस समय (स्वतंत्रता) स्वाधीनता संग्राम बड़े जोरों से चल रहा था । मास्टर हबीब के साथ बाजा मास्टर उसी भारत के स्वतंत्रता के आंदोलन से जुड़ जाता है । दोनों की मित्रता घनिष्ठता में, प्रेम में, आत्मीयता में परिवर्तत हो जाती है । उपन्यासकार ने बड़ी विशिष्टता से बनते बिगडते रिश्तों को उभारा है । एक ओर लेखक ने दु:ख–दर्द एवं पीड़ा का अंकन किया है तो दूसरी ओर स्वतंत्रता प्राप्ति की सक्रिय हलचल का चित्रण किया है तो तीसरी ओर अंध विश्वासियों की धर्म मंडलियों का आतंक है, त्रासदी है । सरनाम इन धर्म मंडलियों का दृढ़ विरोध करता है । कस्बे का वास्तविक यथार्थ चित्र उपस्थित करते हुए सरनाम डॉक्टर से कहता है –''इन धर्म मंडलियों से लड़िये, डॉक्टर साहब जो यहाँ के मजदूरों

को सोचने समझने का मौका नहीं देती, इन ओझा और पाखंडियों से लड़िये जो मजदूर की पसीने की कमाई चाट जाते हैं । ऊँची जाति के लोगों से लड़िये जो आदमी बनने नहीं देते । मंडीवालों से लड़िये जो मुनाफे के लिए बरसात में गल्ले को गोदामों में बंद करके बाहर भेजने के लिए रखते हैं, जिला बोर्ड चुंगी के अफसरों से लड़िये जो बदमाशी करते हैं ।"(६४) आज़ादी के पश्चात ऐसे भारत की कल्पना किसी भी भारतीय ने न की थी । परिस्थितियाँ बदल गई थीं स्वतंत्रनता प्राप्ति का जो सुंदर सपना अनेकों भारतीयों ने देखा वह तहस–नहस चकना चूर हो गया था ।

सरनाम डकैती के केस से बच गया था, पर पुलिसवाले रंगीले को सरनाम के विरुध्ध गवाही देने के लिए खडा कर देते हैं । उस समय बंसरी गर्भवती थी । रंगीले को रुपयों की जरूरत भी थी । विधि का विधान कुछ और ही था । जज रंगीले को पहचान लेता है । रंगीले अपनी मित्रता को कुछ रुपयों की लालच में आकर दाँव पर लगाने गया था। वह सरनाम को सज़ा दिलवाने के आशय से कोर्ट से झूठी गवाही देने चला तो गया किन्तु खुद वह शिकंजे में फँस जाता है । जजसाहब रंगील को झूठी गवाही के आरोप तले तीन वर्ष की सज़ा सुनाते हैं । सरनाम के चरित्र की निखालसता उपन्यासकार बताता है । सरनाम अपने गद्दार मित्र की गद्दारी को भूल कर अपना मित्र धर्म अदा करता है । बंसरी की गर्भावस्था के दौरान वह कितनी बार उसकी सेहत के समाचार लेता रहता है । यहाँ तक की रंगीले की अनुपस्थिति में

प्रसूता बंसरी के अस्पताल का बिल भी सरनाम अदा करता है, एवं उसे अस्पताल से उसके घर तक छोड़ आता है, उसे सांत्वन ना देते हुए कहता है – रंगीला नहीं है अकेला मत समझता कुछ जरूरत हो तो मुँह खोल के कह देना–जा भीतर जा । हलकी रोने की आवाज पता नहीं बंसरी क्यों रो पडी ।"(६५) उपन्यासकार ने इस तरह की परिस्थितियों के कारण संबंधों में परिवर्तन का उद्‌घाटन किया है । आज के इस जीवन में रिश्तों के अर्थ बदल रहे हैं जो विश्वसनीय लगता है । वे सारे बंधन आर्थिक भूमिका पर बदलते बिगड़ते हैं । हमारे सारे जीवनच्रक को प्रभावित, संचालित और नियमित करनेवाली महाशक्ति आर्थिक केन्द्र है । कमलेश्वर के उपन्यास में आज के क्रूर और नग्न सत्य का अंकन आज की सामाजिक स्थिति की अनुरुपता लिये हुए है । कमलेश्वर ने घटनात्मक सच्चाई की जगह मानवीय सच्चाई का अन्वेषण किया है । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' में उपन्यासकार मैनपुरी का निवासी रहा है । बस का अड्‌ड़ा वहाँ पड़े तख्त और स्वाधीनता के पहले ही प्राइवेट बसों का पर काम करनेवाले ड्राइवरों, क्लीनरों के जीवन को उन्होंने निकट से देखा है, उन लोगों के जीवन को उन्होंने निकट से देखा है, उन लोगों के जीवन को बारीकी से समझा है । प्रत्यक्ष अनुभव से संबध्ध कथा भूमि के प्रति उपन्यासकार का एक विशेष प्रकार का संवेदनशील दृष्टिकोण हो जाता है । यह अनुभावना कथा को अधिक सशक्त बनाने में समर्थ होती है, इस

उपन्यास में कमलेश्वर ने कस्बे के लोगों की जिंदगी को विविध रूपों में चित्रित किया है ।"(६६)

कमलेश्वर सामाजिक दायित्व का निर्वाह एवं सोद्देश्यता उनके उपयासों की प्रमुख विशेषताएँ हैं । छोटे शहर की स्थितियाँ-परिस्थितियाँ बड़े शहरों से किस प्रकार भिन्न हैं । यह 'एक सडक सत्तावन गलियाँ' का रचनाकार बखूबी जानता है । कमलेश्वर ने अपने लघु उपन्यासों 'तीसरी आदमी' 'लौटे हुए मुसाफिर', 'समुद्र मे खोया हुआ आदमी', 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' आदि के पात्रों को कस्बे से महानगर की ओर प्रयाण करते हुए दिखलाया है । कस्बाई जीवन के प्रति लगाव होने के कारण ही 'लौटे हुए मुसाफिर' में उन्होंने युवा पीढ़ी को पुनः कस्बे की ओर लौटे हुए दिखलाया है । इन विचारों के साथ-साथ तरह-तरह के कोमल और कठोर भावों को भी इस उपन्यास में पर्याप्त कुशलता के साथ अभिव्यक्त किया गया है । आदमी में जितनी भी तरह की अच्छाइर्या और बुराइयाँ हो सकती हैं उन्हें आत्मसात करते हुए उसके भीतर के धृणा और प्रेम, हिंसा और अहिंसा आदि भावों को जिस तीव्रता के साथ इस उपन्यास में अभिव्यक्त किया गया है । वह दूसरे हिन्दी उपन्यासों में प्राय: कम ही देखने को मिलता है ।

उपन्यासकार ने 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास में स्वातंत्र्य पूर्व एवं स्वतंत्रता पश्चात् के समय को समेट लिया गया है । भारतीयों ने स्वतंत्रता पूर्व अनेक सुखद स्वप्नों को देखा था पर स्वाधीनता पश्चात् के भारत के चित्र

ने उनको विचलित कर दिया । कमलेश्वर ने आम इन्सान की आर्थिक विषमताओं को बड़े पैमाने पर प्रस्तुत किया है । स्वतंत्र भारत के एक नागरिक की स्थिति कितनी विकट है । सरनाम जो ड्राइवरी करता है पर उस पेशे से उसका सही रूप सें जीवन यापन नहीं होता और वह गुमराह हो जाता है, डकैतियाँ डालता है। रंगीले का जीवन भी अस्त व्यस्त है, दुखद जीवन है । अपने जीवन का यापन करने के लिए वह कोर्ट में झूठी गवाहियाँ देता है। स्वतंत्र भारत की पुलिस दावे करती है । उसके लिए झूठे गवाह खड़े करती है । गैंदा कवि के द्वारा लेखक ने नारी की विषम परिस्थितियों की ओर इंजित किया है । नारी की दयनीय स्थिति को उजागर किया है ।

लेखक ने 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास के शीर्षक द्वारा भी काफी कुछ कह दिया है । स्वतंत्रता पश्चात् भारतीयों का जीवन एक विकट पथ–‘सड़क' जैसा बन गया । जहाँ अनेकों प्रकार की गलियाँ हैं भ्रष्टाचार, व्यभिचार, मुनाफाखोरी, जातिवाद, करचोरी रूपी अनेक प्रकार की गलियों में इन्सान गुमराह हो गया । सरनाम के पात्र के द्वारा लेखक ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि इन्सान में इन्सानियत तो होती ही है । सरनाम के शायद कर्म गलत थे पर हृदय की गहराइयों से वह एक सच्चा वफादार विश्वसनीय मित्र है, वह वफादार प्रेमी भी है । बंसरी को वह अत्यधिक चाहता है, उसे बेशुमार प्रेम करता है पर परिस्थितिवश वह उसे प्राप्त नहीं कर पाता है। बंसरी और उसके अपने प्रेम को सदैव के लिए वह किसी के समक्ष व्यक्त कर उसके सफल

दाम्पत्य जीवन के लिए प्रेम को हृदय में दफना देता है । समग्रत लेखक ने अपने आदर्श विचारों की प्रस्थापना सरनाम के पात्र द्वारा की है । उपन्यासकार कमलेश्वर का यह प्रथम उपन्यास है जो सभी मायने में श्रेष्ठ उपन्यास है ।

लेखक ने देश के अन्तर प्रदेशों में सांस ले रही जिन्दगी, स्वतंत्रता-पूर्व उनकी आशाओं-आकांक्षाओं और अविरत संघर्ष के बाद उसकी निराशा, टूटन और किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति को दर्शाने का सफल प्रयास किया है ।

(४) ‘रेगिस्तान'

सामाजिक उपन्यासकारों में कमलेश्वर का स्थान लघु उपन्यासों की श्रेणी में श्रेष्ठ रहा है । कमलेश्वर सामाजिक चेतना को चित्रित करने में सर्व सक्षम रहे हैं । अनेक उपन्यासों की श्रृंखला में उनके कुछ उपन्यासों में भारत पाकिस्तान विभाजन की पूर्वपीठिका को और कुछ में आजादी के पश्चात् की पीड़ा एवं छटपटाहट को अंकित किया गया है । अंग्रेजों के सामने उठाई गई क्रांतिकारियों भी आवाज़ और उनकी कुर्बानी को कमलेश्वर कैसे भूल सकते हैं । ‘सुबह दोपहर शाम' मे कमलेश्वर ने अंग्रेजों और भारतीफ क्रांतिकारियों की टकराहट, देशवासियों की भावना एवं देशप्रेम के जज्बे को शब्दों से बयान किया है । 'रेगिस्तान' उपन्यास में गांधीजी के साथ अहिंसा की लड़ाई लड़नेवाले नवयुवकों की भावना के अतिरिक्त विशेषतः यह परिलक्षित होता है कि गांधीजी की आवाज में अटूट विश्वास का सुर था और उस विश्वास की डोर से बंधे कितने ही नवजवानों ने अपने आपको देश की सेवा के लिए समर्पित कर दिया था ।

भारत अनेक राज्यों में विभक्त है, प्रत्येक राज्य की राज्यभाषा भिन्न है, किन्तु गांधीजी यह चाहते थे कि उस भिन्नता को दूर कर समूचा भारत एक राष्ट्रभाषा हिन्दी से बँधकर एक हो जाए । समग्र भारत में जैसे सत्य और अहिंसा की चेतना फैल गई थी, उसी प्रकार राष्ट्रभाषा हिन्दी समग्र भारत के

लोंगों के मनोभावों और चेतना को व्यक्त करने की सशक्त संचार भाषा बन जाए ।

'रेगिस्तान' उपन्यास का नायक विश्वनाथ राष्ट्रभाषा हिन्दी का महत्त्व समझकर ही उसने अपना संपूर्ण जीवन राष्ट्रभाषा की उन्नति एवं प्रचार के हेतु राष्ट्रभाषा के विकासपथ में जोड़ दिया । उपन्यासकार ने आजादी के पूर्व का एवं आजादी के पश्चात का चित्र उपन्यास में अंकित किया है । बदलाव की स्थिति सहज-सरल मनुष्य की सहनशीलता से बाहर की बात है । मानवीय अनुभूतियाँ जो अभिव्यक्त नहीं हो पाती हैं । कुछ ऐसे माहौल, वातावरण की मानसिकता इन्सान के मानस की कैसी स्थिति बना देती है, कैसे मोड़ पर इन्सान को ला खड़ा कर देती है उसका बयान खुद कमलेश्वर ने किया है । गांधीजी के शब्दों पर उनकी अभिलाषा को पूर्ण करने में समग्र जीवन होम कर देनेवालों में विश्वनाथ भी है ।

आजादी के बाद आम इन्सान की जो दुर्दशा हुई है, वह किसी से छिपी नहीं है । लेकिन वास्तविकता यह है किस इस आजादी के लिए अथवा मुक्ति के लिए सामान्य आदमी ने भी अपनी तरह से अपनी सीमाओं के भीतर यह लड़ाई लड़ी है और उसका त्याग देश के लिए किसी भी त्याग से कम श्रेयस्कर नहीं है ।"(६७) 'रेगिस्तान' का नायक विश्वाथ जो कि गांधीजी द्वारा निर्दिष्ट नकशेकदमों पर चलना चाहता है अपने देश की खातिर कुछ भी कर गुजरने के

सपनों को संजोकर अपना मार्ग नियत करता है । वह गांधीजी के बनाए मार्ग पर राष्ट्रभाषा के प्रचार में जीवन समर्पित करता है ।

'रेगिस्तान' उपन्यास में नायक विश्वनाथ के लक्ष्य, उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उसके उत्साही, आशावादी कदमों की एवं उसके कदमों के साथ साथ ताल से ताल मिलाने हिन्दी वर्गों की गूंज है । वह गूंज जीवन के प्रथम चरण में, जवानी में श्रेष्ठ लगती है । विश्वनाथ के समग्र जीवन में स्वरों की गूंज अनेक महत्त्वाकांक्षाएँ भर देती है, उसका जीवन बिना मधुपों के गुंजित हो जाता है । समय कभी भी एक रफ्तार से नहीं चलता । वह अपनी गति और सपाटी बदलता रहता है । समय और परिस्थितियों के करवट लेते ही वही स्वरों की मीठी मधुर गूंज उसके जीवन का हाहाकार बन जाती है । समग्र देश को हिन्दी भाषा के सूत्र में बाँधनेवाला विश्वनाथ का जीवन प्रेमसूत्रता के अभाव में जीवन सफर में नितांत एकेला पड़ जाता है । रह जाता है तो भयानक सूनापन खालीपन जहाँ सिर्फ उसकी तन्हाइयाँ हैं और हिन्दी भाषा के स्वर अ आ इ ई..... की गूँज मात्र ।

जवानी के जोश में देश के लिए कुछ कर गुजरने की भावना ने विश्वनाथ में नई उमंग का संचार कर दिया । उस समय जब देश में कोंग्रेस का नेतृत्व था, स्वाधिकार प्रगति का आंदोलन चल रहा था । गांधीजी के नेतृत्व में एक बहुत बड़ी शक्ति तरंगित हो उठी थी । सत्य अपना पूरा मूल्य चाहता है । सत्य के धरातल पर पूरा देश एक होने लगा ।"(६८) उसी देश को एक राष्ट्रभाषा की

डोर से बाँधने के लिए विश्वनाथ ने अपना जीवन लगा दिया । किन्तु उस समय - आजादी से पूर्व भाषा के प्रश्न को लेकर दोनों सम्प्रदायों हिन्दू मुसलमान के बीच कटुता थी । सरकारी नीति के कारण उसमें और वृध्धि ही हुई । कट्टर हिन्दू राष्ट्रवादियों ने संस्कृत निष्ठ हिन्दी को हिन्दुस्तान की और कट्टर मुस्लिम राष्ट्रवादियों ने अरबी, फारसी निष्ठ उर्दू भाषा को पाकिस्तान की राजभाषा बना दिया । किन्तु राजभाषा बना देने के पश्चात की उर्दू पाकिस्तान की जनभाषा नहीं बन पाई और ना ही हिन्दी ।"(६९)

अपने भारतदेश के लिए गांधीजी की इच्छा को पूर्ण करने के लिए नायक विश्वनाथ भारत के भिन्न भिन्न राज्यों को एक सूत्र में बांधने की रौ में निकल पड़ा । उसके पिता का यह स्वप्न था कि उनके पुत्र विश्वनाथ ने मिडिल की शिक्षा प्राप्त करली है तो वह किसी सरकारी दफतर में अफसर बन जाए । किन्तु विश्वनाथ ने अपने पिता लाला बनवारी का स्वप्न (मोहभंग) भंग कर दिया । देश सेवा की ओर प्रयाण किया, उसने राष्ट्रभाषा प्रचार के लिए चारों दिशाओं को हिन्दी भाषा के सूत्र में बांधने के लक्ष्य में अपने कदम बढ़ाये । अपनी मराठी, गुजराती, मलयालम, तामिल, तेलुगु, बंगला, असमिया, पंजाबी, उड़िया कश्मीरी, डोगरी, कन्नड आदि भाषाओं का हिन्दी के सूत्र से बाँधने में लग गया ताकि देश गूंगा न रह जाए... । इन भाषाओं को हिन्दी के सूत्र में बांधने के अभियान में वह किसी के स्नेह सूत्र से बंध न पाया कोई हमसफर न बना सका, ना कोई हमदर्द, हमराज था कि यहाँ कुछ पलों के लिए दिल

खोलकर अपनी वेदना को अभिव्यक्त कर पाता .... अफसोस इसी बात का रहा, भाषाएँ, राज्य, देश गूंगा न रहे उसी कार्यक्षेत्र में कर्मयोगी बना रहा पर उसका ही जीवन गूंगा रह गया । विश्वनाथ का कोई अपना स्नेही न था । उसके इंतजार मे पलकें बिछाके बैठनवाली नारी न थी उसकी जिंदगी में न किसी कलाइयों की चूड़ियों की आवाज उसके कानों में न गूंजी न किसी के कमसीन पाँवों के पाजेब की मधुर रूमझूम ध्वनि ही सुनाई दी; न किसी आँचल की ठंडी सुहावनी छाँव पाई, न किसी कोमल हाथों भी अँगुलियों ने उनके सिर को सहलाया । प्रेम की तमाम अनुभूतियाँ से विरक्त ही रहा । सिर्फ एक ही ध्वनि कानों मे गुंजती थी अ... आ.... इ... ई ।"(७०)

राष्ट्रभाषा हिन्दी मंदिर के उद्‌घाटन के लिए आवश्यक चीजों की खरीददारी से वापिस लौटते बखत पथ में विश्वनाथ जीवन की कुछ कुछ बातें पुनरावृत (कलोजअप) के रूप में उभरती हैं । पुरानी स्मृतियों के मधुर चित्र एक के पश्चात एक उभरकर सामने आते हैं । जीवन के कुछ क्षण कुछ यादें ऐसी होती हैं जिन्हें इन्सान बड़े प्रेम से सहेजता है, जिसे वह कभी भुला नहीं सकता । पक्की सड़क पर बढ़ते कदम, जिस्म को झुलसा देनेवाली गर्म-गर्म हवा, आँधियों का रूप धारण करके सरसराहट सी आवाजें सुनाती है पर विश्वाथ तो कालीकट की यादों में खोया हुआ था । कालीकट की पुरवाइयाँ उसे जैसे सुना रही हों अ... आ.... इ.... ई...क.... र कर... घ.... राम खाना खा, अब घर चल, राम अब घर चल बायाँ दायाँ बाँया अब घर चल ।

आवाज की मदहोशी में कभी–कभी विश्वनाथ मीलों इसी तरह चला जाता था । अब घर चल ये आवाजें घेर लेती हैं । जब ये आवाजे घेर लेती हैं तो कदमों के साथ संगीत की ध्वनि उठती है और वह लगातार चलता जाता है ।"(७१)

भाषाओं को जोड़ने के लिए राष्ट्रभाषा का महत्त्व स्थापित करने की उत्सुकता में यह जाना ही नहीं कि अपना घर जीवन में कितनी अहमियत रखता है । उस बख्त तो विश्वाथ को कालीकट, कोचीन के घुमड़ते और इठलाते बादलों में बनते–बिगड़ते अक्षरों को देखते रहने की आदत बन गई थी । सूरज की नरम और लुकती–छिपती रोशनी में गोटेदार किनारीवाले बादलों के अंदर वर्णमाला के वर्ण उभरते प्रतीत होते । नारियेल के पेड़ों से गुजरती हवा भी आती तो लगता था हवा कह रही है, राम खाना खा, राम पाठशाला चल ।"(७२) एक और विश्वनाथ अपने पथ की ओर अग्रसर हो रहा है, तो दूसरी ओर पूल के बगूले के समान उठती हुई यादों के बवडंर अपने दृश्यों को बदलता जा रहा है ... कितनी और यादें हैं इस साठ बरस लम्बी जिंदगी में ।"(७३)

विश्वनाथ बस अड्डे पर पहुँचे, जहाँ पहले से ही दो बारातें पेड़ के नीचे विश्राम कर रही थीं । दुल्हन छुई मुई की तरह बैठी हुई थी । विश्वनाथ को अपनी सुशीला भाभी की यादों ने घेरे लिया । विश्वनाथ का गुजरा हुआ वखत याद आने लगा, दुल्हन सुशीलाभाभी के साथ गाड़ी के फर्स्ट कलास में बिताया

हुआ अविस्मरणीय समय यादों की निधि थी । ताऊ जी ने ही उसे भाभी के साथ बिठाया था ताकि बहू को कोई तकलीफ न हो । घुंघरूओं की तरह उनकी हल्की हँसी कितनी सुंदर थी, आप तो कालीकट कोचीन में थे । ये शब्द कानों में मधुर संगीत की तरह गुंज रहे थे, लाल होठों की मुस्कराहट आंखों में चमक उठी जो सिर्फ देवर के रूप में विश्वाथ ने देखी थी । आज भी वह उतनी ही अपनी सी लगती है, कितना अपनापन । विश्वनाथ को सोंघी सोंघी महक आ रही थी जैसे गर्मी के दिनों में सुराही के पानी में होती है । प्यासी-सी तृप्ति ।"(७४)

विश्वनाथ को भाभी की सुंदरता में भी अ... आ.... इ... ई ही दिख रहा था । विश्वनाथ को उनकी भवों में ई की मात्रा खिंची हुई लगी, कानों की लबें छोटे ३ की तरह लग रही थीं । गर्दन पर बंधा हुआ जुड़ा कस्तुरी की तरह महक रहा था । नरम पतली गर्दन पर रेश्मी रोयें चिपके हुए थे । ब्लाउज की किनारी लहर के भीगे किनारे सी लग रही थी ।बगलों के पास पसीने से भीगा ब्लाउज का टुकडा छोटे से पानी भर बादल की तरह छलक रहा था, खुली हुई आधी पीठ केले के पते की तरह फैली थी सब तरह से फूटती गंध से वह बेहाल हो गया जैसे पके हुए गैँहू के खेत में उतर गया हो ।"(७५)

विश्वनाथ के ताऊजी चंदनलाल ने उनके पिता लाला बनवारीलाल की समग्र ज़मीन जायदाद तो ऐंठ ही ली, साथ-साथ सुशीला के रिश्ते को अपने लड़के के साथ जोड़ दिया ।उस समय विश्वनाथ अ...आ...इ... ई की जंजीरों

से पकड़ा हुआ था । किन्तु आज विश्वनाथ की वे पुरानी स्मृतियाँ ताजी हो गई थीं, क्या आदमी और औरत इतने अपने होते हैं ।"(७६) रोज सुबह प्रथम रश्मि की रेश्मी किरणें आती रहीं और वह अपनी मुँह पढ़ी लाइन भी गुनगुना नहीं पाया... उठ जाग मुसाफिर भोर भई अब रैन कहाँ जो सोवत है ।"(७७) विश्वनाथ अपने आपको इसी उद्देश्य की पूर्ति में पूरी तरह से व्यस्त कर दिया जिसके परिणाम स्वरूप पाठशालाएँ खुलती गईं । आवाजें आती रहीं ... अ... आ... इ... ई ।

विश्वनाथ उन स्मृतियों से जाग पड़ा, बस अड्डे के पास से सामान खरीदा और वापिस अपने पथ की ओर अग्रसर हुआ चिमनियों से धुँआ निकल रहा था । विश्वनाथ महसूस कर रहा था कि धुँआ भी प...ल..व.. भ... म बोल रहा है । जूतों मे से किरकिच की ध्वनि आ रही थी ।"(७८) विश्वनाथ दूरदराज प्रान्तों में जाकर हिन्दी का प्रचार करता रहा और हिन्दी इलाकों से ही हिन्दी मिटती गई । चलते चलते विश्वनाथ को दाखिनी राजकीय नुसरत की कुछ पंक्तियाँ याद आ गई थीं ।

''पन क्या करुँ ए शाह में कई बात बेसमान हूँ

अच्छा तो घर ऐसा नहीं जो बर सोए राहत भरी ।"(७९)

विश्वनाथ का भी ऐसा कोई ठौर ठिकाना घर द्वार नहीं था जहाँ वह दो पल के लिए चैन की सांस लेकर आगे बढ़ते रहते विश्वनाथ दक्षिणी छात्रों को पढ़ाते

और उन्हें नुसरत की कही पंक्तियाँ समझाते जो उनके जीवन को स्पर्श करती यों उनके जीवन की मंडया पर वह बेल चढ़ ही नहीं पाई । विश्वनाथ को अफसोस हो रहा था कि उसने यह धूनी क्यों रमाई ? किसके लिए उन्होंने जीवन में क्या पाया, हंसा उड़ चला देश विराना ।"(८०) जीवन में खालीपन विराने के अलावा उनके पास रह क्या गया था ?

विश्वाथ के जीवन में अगर कोई अपना था तो वह उसकी चचेरी बहन मुन्नी, छोटी है किन्तु बड़ी सचोट जीवन की यथार्थ की दार्शनिकता को जानती है, वह बडी शालीनता से कहती है भइया आखिर उम्र बढ़ेगी तब क्या करोगे ?"(८१) विश्वनाथ का जीवन ही गूंगा हो गया था । अक्षरज्ञान धरा का धरा ही रह गया पीड़ा की छटपटाहट से वह कहना चाहता था

"गांधी बाबा क्या तुम इसीलिए हमें होम गए ।"(८२) विश्वननाथ मन ही मन व्यथित हो रहा था, उसकी जिंदगी उससे हिसाब माँग रही है, क्या पाया? क्या खोया ? सिर्फ मुन्नी उसकी अपनी है और उसका जमाई जगदीश । जो बड़े अधिकार से सामान बाँधकर भइया विश्वनाथ को अपने साथ ले जाना चाहता है परंतु विश्वनाथ के जीवन में उम्मीद शेष थी । जगदीश तो वापिस लौट गया पर विश्वनाथ के जीवन के हाहाकार करते दु:ख को न देख पाया । विश्वाथ ने कभी महसूस की नहीं किया सुख क्या है ? उसकी अनुभूति कैसी होती है ? जीवन में यदि सुख न मिला तो दु:ख भी क्यों मिला ? ईश्वर का यह कैसा दस्तुर है ? जिस हिन्दी के लिए समूचा जीवन समर्पित

कर दिया, लेकिन यहाँ तो यह वास्तविकता थी कि पीछा करते ही पाला पड़ गया । विश्वनाथ का जीवन ही खानाबदोश जैसा बन गया जहाँ भी हिन्दी का मंदिर खोलना होता वही वह चल पड़ता । विश्वनाथ के अपने जीवन में यदि किसी से अटूट प्रेम किया तो वह है हिन्दी राष्ट्रभाषा को ही ।

हिन्दी भाषा के मंदिर की स्थापना करने के लिए बाकर मिस्त्री ने ही सर्वाधिक योगदान दिया था । बाकर बेचारा जड़ से उखड़ा हुआ आदमी था, उसीने भूमि का इंतजाम किया था । विश्वाथ में अब जोश उत्साह ओर उमंग का अभाव स्पष्ट रूप से दिख रहा था ।

देश की परिस्थितियाँ बदल चुकी थीं । "विभाजन एक परिस्थिति मात्र थी जब कि विभाजन के बाद जो कुछ हुआ वह एक साक्षात्कार था । वह किसी परिस्थिति का नहीं, बल्कि एक प्रक्रिया का साक्षात्कार था और यह प्रक्रिया थी जीवन के सभी पहलुओं में बढ़ता पतन, जिससे स्थापित मूल्यों को ठेस पहुँची थी और कई विपरीत या गलत मूल्य उभरने लगे थे मूल्हीन धारणाएँ मूल्य बनने लगी थीं । इस संदर्भ में विभाजन की हिंसक घटनाएँ गौण और तुच्छ लगने लगी थी और मनुष्य जिन नयी परिस्थितियों से घिरा था वे अधिक विनाशकारी प्रतीत होने लगी थीं ।"(८३) विभाजन के पश्चात देश की कैसी दशा हो गई ? आजादी के पश्चात गांधीजी की छबि और भारत माता की तस्वीर बाजार में से ही ओझल हो गई थी । उसके स्थान पर हीरो हीरोइनों की तस्वीरें आ गई थीं, बड़ी मुश्किल से विश्वनाथ ने सामान एकत्रित किया था ।

विश्वनाथ एक ओर हिन्दी मंदिर की स्थापना करना चाहता था, दूसरी और देश के लोग जैसे अपनी बोली ही भूल गए थे । सभी कर्मचारी वर्ग हिन्दी के स्थान पर अंग्रेजी बोल रहे थे । बाकर को अंग्रेजी का ज्ञान ही न था, विश्वनाथ को अंग्रेजी के शब्द बिच्छू डंक के समान चुभ रहे थे । उसने मन ही मन सोचा कि वह अंग्रेजी भारत देश में और वह भी अपने शहर में नहीं चलने देगा । अंग्रेजी भाषा को खदेड़ने के लिए वह भूख हड़ताल करेगा, सत्याग्रह करेगा, किन्तु अफसोस विश्वनाथ मानसिक और शारीरिक दोनों तरह से दुर्बल हो चुका था ।

वर्षों के पश्चात विश्वनाथ के कदम अपने घर की ओर उठे थे जो कभी उसका था, जहाँ उसके बाबूजी ने प्राण त्यागे थे । विश्वनाथ ने गृह प्रवेश करते देखा तो बड़ी ग्लानि हुई । भाभी का रूप रंग बदल चुका था । धरती आसमान जैसा फर्क हो चुका था । भाभी की सूनी कलाइयाँ, सूनी माँग अब वह पहले जैसी लहरियाँ भी नहीं पड़ रही थी .... की मात्रा भी तरह कसी हुई मौंहे भी गेहूँ की बाली की तरह छितरा गई थी । कस्तुरी की तरह कसा और महकता हुआ उनका जूड़ा भी बर्तन मांजनेवाले जूने की तरह बदरंग और उलझा हुआ था । नहर की किनारें की तरह भीगी हुई ब्लाउज की किनारी भी आज गीली ही थी उम्र की लहर सूख गई थी ।"(८४) हिन्दी मंदिर की जमीन सुशीला भाभी ने दी थी । विश्वनाथ ने धन्यवाद किया, भाभी ने जवाब दिया, बेकार धरती और बेकार औरत की कोई औकात नहीं होती लाला, कितना देती है

धरती, कितना करती है औरत लेकिन हासिल कुछ भी नहीं ।"(८५) सुशीला भाभी को मन ही मन असहय पीड़ा हो रही थी कि विश्वनाथ का न घर बसा न नामवेला अपने हिन्दी का वंश चलाया, वह भी न चला, उसे साँप सूँघ गया ।"(८६) भाभी की कही बात बड़ी सचोट थी कि जो निस्वार्थ सेवा में लगे रहते हैं उन्हें क्या मिलता है- "लाला जो स्वारथ छोड़ के लगन से काम करते हैं उनके हाथ यही आता है । तुम्हारे गांधीजी के हाथ क्या आया ? क्या तुम्हारे गांधीजी पछताते हुए नहीं गए ? पर उन्हें जो करना था लगन से कर गए । पछताने की क्या बात ।"(८७)

भाभी की छोटी-छोटी और सीधी-सीधी बातें इतनी सच्ची और मर्मभरी थी कि विश्वाथ के मन में घर करती जाती हैं गांधीजी की बातों की तरह । विभाजन की स्थितियाँ विश्वाथ के मानस को उद्वेलित करती थीं । विभाजन काल की अनेक घटनाएँ दुखद त्रासदी फैला गईं । अपनी मिट्टी से विस्थापितों के उजड जाने का एक पक्ष तो भौतिक था । उसकी जमीनन जायदाद सब छूट गये और एक नयी अन्जान जगह पर जाकर उन्हें जीवन यापन के कठिन संघर्ष में जूझना पड़ा । किन्तु इसका एक भावात्मक लगाव बना ही रहा । भले ही वे शारीरिक रूप से दूसरे देश में जाकर बसने को मजबूर हुए । कम से कम उस पीढ़ी के लिए जिसने विभाजन को भोगा वह स्थिति काफी त्रासदायक रही । इस पीड़ा को वे आजीवन भोगते रहे ।"(८८) विभाजन के कारणों के सम्बन्ध में दूसरा दृष्टिकोण अंग्रेजी नेताओं की अव्ययहारिता और अदूरदर्शिता को

जिम्मेदार ठहरानेवाली है । इसके समर्थकों के अनुसार कुछ कांग्रेसी नेताओं की अदूरदर्शिता तथा सत्ता के प्रति व्यक्तिगत आकर्षण के कारण विभाजन हुआ । जिसका शिकार अनेक परिवारों के सदस्य हुए । जिनमें बाकर एक है । बाकर को जबरदस्ती पाकिस्तान भेजने के लिए पुलिस उसके पीछे बनी हुई थी । इस गहरी विडम्बना के कारण वह अपना मानसिक संतुलन खो देता है । उसने जरूरी कागज ओर पासपोर्ट को भी फाडकर जला दिया । बाकर विश्वनाथ को पहचान नहीं पाता । बाकर के पुत्र करीम को हिरासत में ले लिया गया । पुलिस वाले अंततः बाकर को बड़ी मुश्किल से पकड़ ही लेते हैं और उसे पाकिस्तान भेजा जाता है । विदा होते समय सिर्फ सलाम ही बोल पाया, जवाब में विश्वनाथ ने 'गुडबाई' कहा । करीम व उनके बाल बच्चे अपने बाबा बाकर से मिलने आकुल व्याकुल हो रहे हैं, बाकर को मोटर में बिठा दिया जाता है ।

कुछ दिन पूर्व उर्दू के प्रसिध्ध शायर जोश मलीहाबादी ने रेडियो पाकिस्तान को एक इन्टरव्यू दिया जिसके काण उन्हें पाकिस्तान में काफी कठिनाइयाँ झेलनी पडी । इस इन्टरव्यू में जोश साहब ने अपनी मिट्‌टी से उखड़ जाने की पीड़ा की अभिव्यक्ति की । हम तरस गये उन गलियों को जहाँ कि हम खेलते थे, जहाँ हमारे बुजुर्गो की हड्‌डियाँ हैं । हम अपने बुजुर्गों के बनाये घरों को देखने को तरसते हैं । अगर हम याद में आह भरते हैं तो जुर्म समझा जाता है, गद्दार करार दिये जाते हैं । ये तमाम तबाहियाँ पाकिस्तान बनने से ही

तो हुई हैं ।"(८९) उन्होंने भारत विभाजन की तबाही का जिम्मदार जिन्ना साहब को ठहराते हुए कहा, उन्होंने देश को नहीं बाँटा, बल्कि-आदमी आदमी को बांट डाला । आशिक यहाँ माशुक हिन्दुस्तान में । बेटा वहाँ है, बीवी यहाँ है । भाई वहाँ है तो फुफीजान यहाँ एक मुसीबत में ही जात है । कोई मर जाता है तो हम बेखबर नहीं होते । हम उनके आखिरी दीदार भी नहीं कर सकते, इस कमनसीबी ने अमीनगी ने सियासत को तबाह कर दिया ।"(९०)

मोहन राकेश की 'मलवे का मालिक' कहानी में भी इसी विभाजन की त्रासदी को बताया गया है । गनीमियां सात वर्ष के पश्चात अपने बेटे चिरागदेन से मिलने आता है । विभाजन की विभीषिका में बाप अपने बेटे और बेटे की बहू पोतियों से दूर हो गया । बुढ़ापे में बेटा बाप की लाठी बनता है किन्तु विभाजन ने कितने की माता-पिता को उनकी संतानों से दूर कर दिया । उनके बुढ़ापे को ग्रहण लगा दिया । उन्हें आपाहिज बना दिया, बेसहारा बना दिया । कमलेश्वर ने भी विभाजन की विभीषिका को कहानियों में चित्रित किया है ।

बाकर के चले जाने के पश्चात विश्वनाथ हिन्दी मंदिर की कोठरी में लौटा, वहाँ बाकर की आवाजें गूंजती थीं .. अ.... आ... आलिफ ब .... बरगद ... ब बाकर । विश्वनाथ को यह अनुभूति हो रही थी, जैसे स्लटें चीख रही हैं । अक्षरज्ञान की पोथियों को दबाते विश्वनाथ के कहा-ब बनियान ट्री । दोस्त की बिदाई की प्रतिक्रिया विश्वनाथ के जेहन में हथौड़े की भाँति चोटें कर जख्मी कर गई । अब विश्वनाथ सबसे अंग्रेजी में ही बोलता था । जब तीन

दिन तक विश्वनाथ नजर न आया तब श्यामलाल ने हिन्दी मंदिर का दरवाजा तोड़ दिया । विश्वनाथ बिलकुल अस्पष्ट तथा खोखली आवाज निकली आ.. आलिफ । बेहोश विश्वनाथ को अन्ततः अस्पताल में भर्ती कर दिया ।

(५) सुबह दोपहर शाम

कमलेश्वर ने अपनी औपन्यासिक यात्रा में अनेक उपन्यास लिखे हैं, जिनमें कुछ उपन्यासों की पृष्ठभूमि स्वतंत्रता पूर्व की है । ऐसे उपन्यासों में उनका सर्व प्रथम उपन्यास 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' है ।इसके अतिरिक्त इस दृष्टि से 'रेगिस्तान', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'सुबह दोपहर शाम' आदि उपन्यासों के नाम उल्लेखनीय हैं, जिनकी कथा वस्तु-चेतना, भारत की स्वतंत्रता पूर्व की है । 'सुबह दोपहर शाम' उपन्यास में अंग्रेजों के समय की गुलामी एवं भारतीयों को मानसिकता को बड़ी मार्मिकता से रूपायित किया गया है । उस समय कुछ भारतीय ऐसे भी थे जो अंग्रेजों की चाटुकारी करनेवाले थे । उनके समक्ष अपने घुटने टेककर कुछ पाने की लालसा लिए हुए थे । उनमें से खास तौर से जमींदार थे । लालच के विष ने देशभक्ति की गरिमा को, भावना को ठंडा कर दिया था । अंग्रेजों ने भारतीयों को लालच और अच्छे पद देकर उनकी देशभक्ति को निचोड़ ही डाला था । दो रुपये की नौकरी प्राप्त करने के लिए देश के गद्दारों का साथ देकर अपने ही देश के

शहीदों की कुर्बानी को बट्टा लगानेवाले भारतीयों के कुत्सित कर्म को चित्रित इस उपन्यास में चित्रित किया गया है ।

आलोच्य उपन्यास में अंग्रेजी शासन के सन १८५७ के समय की परिस्थितियों का अंकन किया है । अंग्रेजों से पूर्व मुस्लिम आक्रांताओ ने भारतीयों के जीवन को काफी कष्ट प्रद और यातनामय बना दिया था । मुस्लिम आक्रांता सामाजिक दृष्टि से पिछड़े थे और अंग्रेज लोमडी जैसे तेज तर्रार थे । मुस्लिम आक्रांओं ने भारत को लूटा किन्तु वह धन भारत में ही रहा । वे विधर्मी थे, फिर भी हिन्दू प्रजा के साथ घुल-मिल गए एवं राज्य करने के साथ-साथ भारत में बस गए । फिरंगी भारत को लूटने, भारतीयों पर हुकूमत करने आए थे । उन्होंने हिन्दू मुस्लिमों को अंदर ही अंदर लड़ाकर राज्य किया । इस पृष्ठभूमि पर विचार करते हुए एक लेखिका ने लिखा है -

"सन् १८५७ का युध्ध निर्णायक था ।यह पहला स्वाधीनता संग्राम था जिसे हिन्दुओं और मुसलमानों ने एक जुट होकर भारत की स्वाधीनता के लिए लड़ा । अंग्रेजों ने उसे सैनिक विद्रोह का नाम देकर उसके महत्त्व को कम करने का प्रयास किया, लेकिन भारतीयों ने तन-मन से इस गदर को अपने पहले स्वाधीनता संग्राम के रूप में देखा ।"(९१) उपन्यासकार ने उपन्यास की भूमिका में लिखा है, "स्वातंत्र्य पूर्व की तनाव परिस्थितियों का सजीव अंकन 'सुबह दोपहर शाम' उपन्यास में है । अंग्रेजी राज्य ने भारतीय जनमानस में व्याप्त राष्ट्रीयता की भावना, स्वतंत्रता प्राप्ति में क्रांतिकारियों की भूमिका और

तत्कालीन परिस्थितियों का प्रतिबिंब तो है ही, साथ–साथ ग्रामीण व्यवस्था और गाँवों मे फैले संस्कारों की मार्मिक प्रस्तुति भी है ।"(९२)

उपर्युक्त भूमिकानुसार उपन्यास की कथा स्वतंत्रता–प्राप्ति के पूर्व एक देश प्रेमी शहीद के परिवार की कथा है । उस परिवार की तीन पीढ़ियों का चित्र प्रस्तुत किया गया है । उस परिवार की प्रथम पीढ़ी बड़े बाबा किस कदर अंग्रेजों के समक्ष डटे रहे और जमकर उनका मुकाबला करते रहे । उनकी वीरता, देशप्रेम एवं धरतीमाता के प्रति उनकी अदम्य प्रेम भावना के बखान करते बड़ी दादी थकती न थी । बड़े दादा के शहीद हो जाने के पश्चात उस देश भक्त वीर की पत्नी बड़ी दादी ने अपने बेटे से बड़ी–बड़ी उम्मीदें सँजोए रखी थी । एक दिन उनका बेटा अपने पिता की मृत्यु का हिसाब उन अंग्रेजो से जरूर लेगा । उन अंग्रेजों का अकड़ को नोंच लेगा । बड़ी दादी की उम्मीद थी कि जैसा पति में देशभक्ति का जज्बा था वैसा ही तेज जज्बा बेटे में भी होगा नियति को कुछ और ही मंजूर था । अफसोस बड़ी दादी की सभी उम्मीदें, अभिलाषाएँ धरी की धरी ही रह गईं । उनका बेटा उनकी उम्मीदों में रंग न भर सका । बड़ी दादी धीरज से बैठी रही कि एक पीढ़ी नागवार हुई तो क्या ? दूसरी पीढ़ी तो जरूर तेज निकलेगी, पर वैसी खून की रवानगी पोते में भी न देखी । बड़ी दादी अपनी सारी उम्मीदों को छोड़कर बैठ गई । बड़ी दादी को अपने पति की देशभक्ति पर नाज़ था, उन्हें बार–बार यादें दस्तक देती थीं कि उनके पति किस कदर (बड़े बाबा) अपने राजा साहब की रक्षा के लिए अनके

साये की तरह रहकर उनकी हिफाज़त करते रहे । जरूरत पड़ने पर बड़े बाबा राजा साहब के साथ-साथ उनकी रक्षा हेतु चार घुड़सवार भी तैनात रखते थे, खुद भी अनके साथ साये की तरह रहते । बड़ी दादी को गर्व था कि उसके पति ने राजा साहब के प्राण बचाने के लिए अपना घोड़ा उन्हें दे दिया और खुद अंग्रजों के सामने गोलियाँ बरसाते-बरसाते शहीद हो गए । तभी तो बड़ी दादी कहती थी - मैं तो सदा सधवा हूँ, मेरा आदमी शहीद हुआ है ।"(९३)

'सुबह दोपहर शाम' उपन्यास के प्रमुख चरित्र-बड़ी दादी के पात्र को उपन्यासकार ने विशेष से उभारा है । बड़ी दादी का रोम-रोम प्रकृति से जुड़ा हुआ था । प्रकृति की बदलती हुई ॠतुऐं प्रकृति के बदलते तेवर को देखकर ही दादी को ज्ञात हो जाता था कि प्रकृति अपना रूप बदलने जा रही है । बड़ी दादी पक्षियों और जानवरों की भाषा समझ जातीं, यहाँ तक कि बैठकर उनसे बातें भी करती थी । जब घर का भेदी लंका ढाये, परिवार के सदस्य हों तो फिर कहना ही क्या ? घर के सभी सदस्य बड़ी दादी से डरे-डरे, सहमे सहमे रहेते थे । उनकी देशभक्ति की भावना के कारण अंग्रेजों के प्रति अपने को वे बड़ी दादी से छुपाते, लेकिन उनकी गहरी बातें बड़ी दादी से कभी छुपी न रहती थीं । पक्षी उनके अपने राज़दार थे, वे बड़ी दादी को संदेश दे जाते। बड़ी दादी का स्वभाव सबसे निराला था, वह सत्य के पथ पर चलनेवाली अंग्रेजों के प्रति तीव्र धृणा उनके हृदय में थी । वह अंग्रेजों का तीव्र विरोध करनेवाली नारी थी । राष्ट्र प्रेम, सत्य की कसौटी पर बड़ी दादी की संतान खरी न उतरी तो

उन्होंने अपने ही खून, अपनी ही बेटी के साथ सारे रिश्ते नाते तोड़ लिए । बड़ी दादी ने अपनी बेटी कलावती का ब्याह फर्रुखाबाद के नवाब के दरबारी के लड़के के साथ करवाया था । उनका दामाद गाज़ीपुर के अंग्रेजी खज़ाने का खजानची था । जब गदर हुआ तो उसने अंग्रेजों के खज़ाने को लूट लिया एवं अपनी हवेली में दो अंग्रजों को पनाह देकर उनकी जान भी बचाई । एक ओर बइमानी तो दूसरी और वफादारी दिखाई । तद्‌पश्चात सबकुछ बदलता गया । बड़ी दादी की जागीर और जमींदारियाँ अंग्रेज सरकार छीनती चली गई और दामाद को तमंचे और तलवारें मिलती गईं । अंग्रेजों की दया की बदौलत उनकी बेटी (कलावती) बिना तिलक के रानी ओर दामाद बिना तिलक के राजा कहलाने लगे ।

जसवंत बड़ी दादी का पोता एक बार कलावती बुआ के घर गया था । उनकी हवेली, हवेली की चकाचौंध देखकर जसवंत की आँखें चुधियाँ गई थीं । जब बड़ी दादी को ज्ञात हुआ तो उन्होंने घर में ऐलान कर दिया था कि – कलावती अब कलावती नहीं कलंकवती है । उनके घराने से उनकी हवेली से हमारा कोई लेना–देना नहीं है ।"(९४) जसवंत के माता पिता में हिंमत न थी कि बड़ी दादी के सामने यह कह सकें कि जसवंत को अंग्रेजों के यहाँ रेलगाड़ी को हरी झंडी दिखाने की नौकरी मिली है और प्रतिमास दो रुपये की तनखाह मिलेगी । जसवंत को फर्रुखाबाद से संदेश मिला था, पर बड़ी दादी से बात छिपाई जा रही थी । बड़ी दादी ने तो प्रकृति को अपनी बाँहों में समेट लिया

था, अपने प्रेम की डोरी से उन्हें बाँध दिया था । कौए उनको बता जाते हैं । एक ओर बड़ी दादी के लक्ष्य में समाया हुआ देशप्रेम, पति की भारतमाता के प्रति दी गई कुर्बानी और उन्हीं का पोता जसवंत गद्दार निकला । असहय दु:ख-पीड़ा से बड़ी दादी का कलेजा मुँह को आ जाता है । बड़ी दादी का पोता जसवंत नौकरी पाने के लिए अपने गद्दार और देश द्रोही फूफी की चापलूसी कर अपनी आत्मा को भी रेहन रख देता है ।

अंग्रेजों के दाँत खट्टे करनेवाली एक पीढ़ी का जैसे अंत हो गया नई पीढ़ी का जमीर ही नहीं है उन्हें किसी से प्रेम और लगाव नहीं है । अगर प्रेम, आत्मीयता है तो बस नौकरी और रुपयों से यही एक कड़वा सत्य था । दूसरी पीढ़ी और खुद जसवंत भी अंग्रेजों का गुलाम बन गया । इस प्रकार छोटे से बड़े भारतीय नौकरी पेशा वर्ग, जमींदार और शेठ-साहुकारों की यह दशा हो गयी थी कि रूह गुलाम । नमक हराम । जिस धरतीमाता की गोद में पले बड़े हुए उसी से ये लोग दगा करते हैं, बड़े-बड़े बंगलों, हवेली में रहनेवाले अंग्रेज अधिकारियों और बीवी बच्चों के नाम पर उनके पैरों पर नाक रगड़-रगड़कर रिश्वत के माल मलीदे उड़ानेवाले भारतीय नौकरी पेशा गुलामों की कमी नहीं रही ।"(९५) बड़ी दादी अंग्रेज हकूमत की कट्टर विरोधिनी है, उनके खून के कतरे कतरे में देश प्रेम है । उनके रोम-रोम में राष्ट्र प्रेम समाया हुआ है । बड़ी दादी जसवंत से कहती है- "देख जसवंत रोटी तो कुत्ता भी खाता है, जो टुकड़ा फेंक दो उसे ही खा लेता है । पर मानुष रोटी - रोटी में भेद करता है ।

तू रोटी का भेद भूल गया है .... जैसे तेरी बुआ भूल गई थी । तेरी बुआ इसी पेट की जाई है ... पर मेरी कोख उसे जनम देकर चौदह वर्ष काली पड़ गई । वह अपने आदमी के साथ अंग्रेज बहादुर की रोटी तोड़ने लगी... उसकी तड़क भड़क हवेली पैसा, तलवार तुझे ज्यादा सुहाने लगी ? खैर छोड़ मुझे कुछ नहीं कहना है जो जी में आए कर जाके–आँधी बीत जाए–आसमान खुल पाए–तू चला जा ।"(९६) अंग्रेजों ने जहाँ हिन्दू मुस्लिमों को लड़ाया वहाँ उनहीं परिवारों के सदस्यों में भी अलगाव कराया । उनके पारिवारिक प्रेम, आत्मीयता, एकता को तोड़ दिया । अंग्रेजों ने एक ही नीति अपनी 'डिवाइड एण्ड रुल' अलग करो और राज करो । इसलिए बड़ीदादी का विद्रोही हृदय उन्हें लंगूर कहता, वह अंग्रेज लंगूरों को ललकारती थी । उनकी ललकार में शेरनी जैसी गर्जना थी, पर अफसोस की उनकी सारी अपेक्षाएँ अपनी संतान में ही धरी की धरी रह गईं । समग्र अभिलाषाएँ दम तोड़ रही थीं । उनका वात्सल्य युक्त हृदय चीत्कार कर कहता है । १९५७ में तेरे बाबा शहीद हुए.... तब तेरा बाप तीन साल का था । तैतालीस बरस उसे पाला है, यही सोचकर कि ये जिएगा तो फूले फलेगा । यह आँगन किलकारियों मे चहकेगा और किसी दिन इस कोख का जाया कोई माई का लाल अपने बाबा की मौत का बदला लेगा । महाराज साहब की गढ़ी की दीवार में जो अंग्रेजी गोला लगा था ... उनका हिसाब चुकता करेगा ।"(९७)

भारत में अंग्रेज शासकों के साथ पाश्चात्य सभ्यता के आगमन और प्रचार के कारण, पाश्चात्यों की चमक दमक से भारतीयों की आँखें चौंधिया गईं । पाश्चात्य सभ्यता के प्रति उनके मनमें स्वाभाविक आकर्षण का निर्माण हो गया । उन्हें अपनी संस्कृति अखरने लगी, परंतु भारतीय परंपरा को वे छोड़ भी नहीं सकते थे और पाश्चात्य सभ्यता को पूर्णतः ग्रहण भी नहीं कर सकते थे । दोनों संस्कृतियों की टकराहट के कारण समाज में अस्थिरता निर्मित हो गई थी । समाज में इस धैर्य को बनाए रखने के लिए परिवार को बनाए रखना आवश्यक था ।" (९८) उच्चवर्ग क्रमशः खोखला होता जा रहा था । सामन्तवादी मूल्य टूट रहे थे । हीनता ग्रंथि से पीड़ित उच्चवर्ग अंग्रेजों के रहन सहन का अंधानुकरण कर तथा झूठी प्रशंसा से राय बहादुर या राव बहादुर जैसे खिताबों को बटोरने में लगा था ।"(९९) बड़ी दादी आंतरिक रूप से टूट चुकी थी । बड़ी दादी जसवंत के साथ उसकी बहू को भी भेज देती है । मूल से ज्यादा व्याज प्रिय होता है, उससे भी दादी मुँह मोड़ लेती है लेकिन जवसंत की बेटी सन्तो बड़ी दादी से चिपकी रहती है । अपनी बड़ी दादी के प्रत्येक कार्य कलाप और गतिविधियों पर नज़र रखती है और अपने आपको उसी के अनुरूप ढाल लेती है, उनके नक्शे कदमों पर उनकी लीक पर यह चलती है । सन्तो को भी अंग्रेजों की जीहजूरी पसंद नहीं थी और नाहीं पिता की अंग्रेजों की गुलामी भरी नौकरी । अंग्रेजो ने क्या दिया...? दो रुपये की नौकरी की दासता और उननके द्वारा दी गई रहने को छोटी सी गुमटी । बडी दादी तंग

आकर निराश होकर जंगल में चली जाती है । जंगल के हिंसक पशु उनके अपने हमजोली बन जाते है, वे अपनी हिंसकवृत्ति भूल जाते हैं । बड़ी दादी को जो पारिवारिक प्रेम, अपनापन, विश्वास, वफादारी जो अपनों से न मिला वही प्रेम अपनापन हिंसक पशुओं से उनको मिला । बड़ी दादी निर्मोही बनी अपने जीवन का शेष समय उन्हीं पशु पक्षियों के बीच गुजारना चाहती है । परिस्थितियों के साथ मनुष्य की आंतरिक प्रवृत्तियाँ उभरती हैं, मनुष्य विवश-सा उनके साथ बहता जाता है ।"(१००)

बड़ी दादी का स्थान अब जसवंत की माँ ने ले लिया था । वह अब बड़ी दादी जैसी ही बातें करती है । बड़ी दादी के जिस्म की खुश्बू अब उनमें आने लगी थी । सन्तो अपनी दादी से लिपटकर बड़ी दादी के स्पर्श की अनुभूति ग्रहण करती है । स्पर्श और खूश्बू हृदय की गहनतम गहराइयों तक सरलता से पहुँच जाते हैं ।परिवार के सदस्यों से आदत हुई बड़ी दादी की संवेदनाओं मे सन्तो का छोट मासूम हृदय घायल होता है । उसने बडी दादी की भावनाओं में सदैव मातृ भूमि और देश प्रेम की गरिमा की अनुभूति पाई । इन्सान परिस्थितियाँ के समक्ष कितना बौना बन जाता है । चाहते हुए भी वह कुछ भी नहीं कर पाता है । उस बेबसी के आलम में इन्सान इस परिवेश को एवं परिवार को खुद से काट देता है । अगर अपने ही जिस्म का कोई अंग सड़ने लगता है तो चिकित्सक उसे काट देता है । हृदय भी वही करता अपने आपको उस प्रेम बंधन से आज़ाद कर देता है, काट लेता है, तोड़ देता है ।

सन्तो तटस्थ है, अच्छे–बुरे को सत्य, असत्य, गुलामी, आजादी, देशभक्त और गद्दारों को पहचानने की अद्‌भुत शक्ति उसे बड़ी दादी के स्पर्श से ही प्राप्त हुई थी । समय गुजरता जाता है, सन्तो अपनने बचपन की दहलीज लाँघ कर ब्याह की दहलीज पर पहुँच गई । सन्तो का ब्याह ऐसे ही देश भक्त क्रांतिकारी के घर में हुआ । वह प्रवीण से वैवाहिक सूत्र में बँध जाती है । सन्तो को अपनी ससुराल से गाढ़ा अपनापन मिला । वह अनुभव करती है सारी आवाजें जैसे इतनी अपनी हो गईं – पलक झपकाते ही सारी ननदें उसी तरह वैसे हँसती है जैसे बहनें हँसती थीं, हँसी की आवाज में कोई नहीं ।"(१०१) सन्तो की इन्हीं भावनाओं और अपनेपन के कारण ससुराल में वह चहेती बन गई । प्रेम में गजब की शक्ति होती है । प्रेम रूपी शस्त्र से किसी पर भी विजय हासिल की जाती है । बड़ी दादी के प्रेम के समक्ष हिंसक पशुओं ने अपनी हिंसकता छोड़ दी । बड़ी दादी से मिली प्रेम की प्रेरणा के कारण अम्माजी और बाबा उसे इतने अपने लगने लगे कि अपने आपको भी सन्तो भुला बैठी थी, जहाँ उसने अपने बचपन के इतने वर्ष गुजारे थे । अम्मा घर की समूची जवाबदारियाँ उसे सौंपकर निश्चित हो गई थी । बाबूली सन्तो को सविशेष दुलार देते नई बहू । यह पूरबवाली बड़ी दीवार देख ले बेटा । इसी दीवार ने हमारी धूप रोक रखी है । बरसों से इसी हवेली का मुकद्दमा चल रहा है उसी की तारीख है आज....।"(१०२)

उसके ससुराल के घर की दीवार में एक छोटी सी खिड़की लगी हुई थी जो बंद थी । सन्तो मन ही मन में ईश्वर से प्रार्थना करने लगी, उसकी प्रार्थना ईश्वर ने सुन ली । बाबूजी खुश होकर आकर कहते हैं–मुकद्दमा हम जीत गए ।"(१०३) वास्तव में प्रार्थना में कितनी शक्ति है सच्चे हृदय से जब आत्मा की आवाज़ निकलती है, जो परमात्मा तक पहुँच जाती है । उसकी पवित्र प्रार्थना परमात्मा अवश्य सुनते हैं । तभी हवेली की खिड़की खुली और हवेली चीखी कि हमें कम मत लगाना बड़ी अदालत जाऊँगी वहाँ भी न हुआ तो विलायत तक दौड़ी दौड़ी जाउँगी हाँ ।"(१०४) बुजुर्गों ने सही फरमाया है, 'घर का भेदी लंका ढाए ।' सन्तो अपने दोनों परिवारों में गद्दार मिले । मायके में कलावती फूफी और फूफाजी और ससुराल में अम्मा की जीजी, दोनों पक्षों में गद्दार–नमक हराम थे । अंग्रेजों की दासता का रंग भारत के उच्चवर्गीय जमींदार शेठ साहुकार एवं नौकरी पेशा वर्ग पर बहुत गहरा प्रभाव जम चुका था और वे अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए अंग्रेजों के तलवे सहलाने में लेश मात्र भी झिझक का अनुभव नहीं करते थे ।

सन्तो को पगफेरे की रस्म के लिए जब मायके भेजा जाता है, उस समय उसके बचपन का साथी मित्र सूरज उसे लेने आता है ।(१०५) सन्तो के पिता जसवंत अंग्रेजों के तलवे चाट चाटकर अच्छे पद पर अधिष्ठित हो गए थे । जिस रेलगाड़ी से सन्तो जा रही थी उसी रेल को क्रांतिकारियों ने रोक दिया । उसी रेल में अंग्रेजों का खज़ाना भी जा रहा था, उसी पर क्रांतिकारियों की नजर

थी । क्रांतिकारियों में स्वतंत्रता के लिए पूरा उत्साह था । यहाँ तक कि अपनी जान न्यौछावर करने के लिए भी वे तैयार थे, फिर भी उनका रहस्यमय जीवन उनके मन मस्तिष्क को उद्वेलित कर डाला था ।"(१०६) लेखक ने इसे सूरज के पात्र द्वारा व्यक्त किया है । हाँ सब जगह बटोर बटोर कर दिल्ली पहुँचाया जाता है ।"(१०७) सन्तो का देवर नवीन क्रांतिकारी था । उसने सोचा मेरे देवर नवीन पर आफित न आन पड़े । खजाना लूटने के कारण अंग्रेजों की शंका क्रांतिकारियों में से एक नवीन पर भी था, वे उसके भाई प्रवीण को पकड़ ले जाते हैं । अंग्रेजों ने प्रवीण का मुँह खोलने के लिए उससे उगलवाने के लिए उस पर जबरदस्त दबाव और यातनाएँ दीं । इसी सिलसिले में घर के सभी सदस्य नवीन से रिश्ता तोड़ देने की बात सोचते हैं । किन्तु उसी समय सन्तो की साफ और गहरी आवाज आती है कोई कुछ भी कहे नवीन लालाजी हमेशा हमारे रहेंगें और इस घर के रहेंगे ।"(१०८) सन्तो की आत्मा में मानो बड़ी अम्मा की आत्मा ने बसेरा कर लिया था । वह अम्मा जैसे शब्द बोलने लगी । बड़ी दादी की तरह अंग्रेजों को विलायती कुते, लाल बंदर जैसे शब्दों से बुलाने के पीछे जो आक्रोश था, उस आक्रोश में अपने देश प्रेम अपनी मातृभूमि के लिए प्रेम का जज्बा था । सन्तो का आक्रोश देख बड़ी दादी की प्रतीति होती थी । सन्तो को अपने देवर के प्रति सविशेष प्रेम और लगाव था । घर के सभी सदस्य उसके अपने थे । बाबा का प्रेम की बडी दादी जैसा ही था । प्रवीण को सदैव यह डर लगा रहता की कहीं अंग्रेज हमारी हवेली और जायदाद को छीन

न लें । बाबा प्रवीण की नियति सम गए थे, उन्हें अपने बेटे से ही नफरत होने लगी और बड़े आवेश, जोश, आक्रोश से भभक उठे थे । तुम्हें अपनी हवेली की पड़ी है यह देश सबकी हवेली है इसके लिए कौन सोचता है ।"(१०९) सन्तो को तो गर्व होता है कि वह एक क्रांतिकारी की भाभी है और सच्चे देशभक्त उसके ससुर हैं । कमलेश्वर ने सन्तो के नारी पात्र को मुख्यतः गृहस्थी के आधार स्तंभ के रूप में चित्रित किया है । आदर्श हिन्दू आदर्श दम्पती, आदर्श रमणी के रूप में नारी का गृहिणी रूप ही श्रेष्ठ रूप है ।"(११०) सन्तो का यही रूप उसके ससुराल की हवेली को स्वर्णतुल्य बनाए हुए है, जहाँ खुशियाँ ही खुशियाँ हैं । सन्तो की ओर से शुभ समाचार सुनने ही घर में खुशी की लहर बह चली । सन्तो के पैर भारी हैं, यह शुभ समाचार सुनते ही उसके पिता भी झण्डियाँ लपेटकर सीधे घर पहुँच जाते हैं और अपनी पत्नी को शुभ समाचार देते हैं । माँ अपनी बेटी की गोद भरी हुई देखना चाहती है । सन्तो की माँ का हृदय तो उछलने लगा । वह जल्द से जल्द सन्तो को अपने यहाँ बुलाना चाहती थी । अपनी पत्नी की इच्छा सुन सन्तो के पिता के तो पसीने उतरने लगे । अंग्रेजों की नौकरी ने उन्हें मानसिक और शारीरिक रूप से जैसे अपाहिज ही बना दिया था । वे अपने अंग्रेज अफसर की नजरों में नहीं आना नहीं चाहते, क्योंकि यह खबर आग की तरह फैल गई थी कि सन्तो का देवर बड़ा क्रांतिकारी है । जसवंत को अपने परिवार के सदस्यों के प्रेम से भी बढ़कर अपनी नौकरी से लगाव है । सन्तो की माँ

अपना ठोस निर्णय सुनाती है । सन्तो यह अंग्रेजों की दी हुई गुमटी में न आएगी और ना ही तुम्हारी रेल में .... ।"(१११)

गोद भराई की रस्म हुई, दिन महीने गुजरे, सन्तो ने सुंदर बेटे को जन्म दिया । दोनों घरों में खुशियाँ छा गईं । दो मास पश्चात जब नवीन अपने भतीजे को देखने आया तो बाबू की रुह तक काँप गई । आत्म केन्द्रित बाबू सन्तो की गोद भराई की रस्म भी अपने घर करना नहीं चाहते थे । अंग्रेजों ने उनके खून से समग्र संवेदनाओं को ही मानो निचोड़ दिया था । उनकी रगों में मानो स्वार्थ का ज़हर फैल गया नवीन जैसा देशप्रेम, अपनों के लिए आत्मीयता उन गद्दार लोगों में कहाँ ? नवीन अपने भतीजे को बेहद प्यार से देखता है, उसे बहुत प्रेम करता है । नवीन कहता है अपने देश में माँ बनना कितना सकारथ है ।"(११२) सन्तो नवीन से होली में आने का वादा ले लेती है पर ऐसी छह होली के त्यौहार आए और चले गए किन्तु नवीन न आया । सन्तो ने रंगों को छुआ तक नहीं, यहाँ तक कि किसी के संग होली त्यौहार मनाया नहीं । वह अपने देवर लालाजी की प्रतीक्षा में बैठी रही । अनायास वे इंतजार की घड़ियाँ खत्म हो जाएँगी ? किसे ज्ञात था ? नवीन लालाजी आ पहुँचे । नवीन के घर में पैर रखते ही संपूर्ण घर में उमंग और उत्साह छा गया । बड़े से लेकर छोटे सभी घर सदस्यों की जुबाँ पर लालाजी का नाम था । होली के रंगों के साथ प्रेम का रंग भी इस कदर घुल गया था कि किसी को पहचानना

मुश्किल था । उसी रंग में भंग पड़ा–हवेली की खिड़की कब खुली (बुआ के घर की) और कब बंद हुई किसी को पता न चला ।(११३)

फिरंगियों कि फौज आकर खड़ी हो गई । फिरंगी इन्सपेक्टर चीखा–नवीन कहाँ है ? मौके की नजाकत देख सन्तो नवीन से कहती है । ऐ बिरजू चल अंग्रेज अफसरों लिए पानी ले आ, खड़ा क्या है ? चल जा–सन्तो नवीन को डांटकर रसोई में भेज दिया । सन्तो ने नवीन को पीछे के रास्ते से भेज दिया । सन्तो पानी की बाल्टी भर लाती है और शेरनी की तरह चिंघाड़ी, उसकी चिंघाड से फिरंगी पैर पटककर पीछे हट गए । जब प्रवीन की मूँछ हटाने को कहा तो वही सन्तो प्रवीन के आगे आकर खडी हो कर चीखी, ऐ फिरंगी बाबू मूछों को हाथ मत लगाना । मैं तुम्हारा खून पी जाऊँगी । ये मेरे मरद की मूँछे हैं, कहते हुए उसने अंग्रेज इन्सपेकटर का हाथ पटक दिया था । पानी से मुँह धोते ही प्रवीन का चेहरा साफ हो गया था । इन्स्पेक्टर भीतर ही भीतर भभक रहा था, इस अपमान को सह न पाया । दूसरे दिन ही प्रवीन को थाने की मुलाकात लेनी पडी । फिरंगियो के जुल्मों के सामने प्रवीन ने घुटने टेक दिए । सन्तो की आँखों से बहते आँसू मोम की तरह जम गए जो आसू प्रवीण के लिए बह रहे थे वे थम गए । आँसुओं के जमे हुए मोम को बीच में इसकी पुतलियाँ चिनगारी की तरह छिटक रही थीं ।"

छिटक रही थीं ।"(११४)

लानत है तुम पर

यह तुम अपने पति से कह रही हो ?

देखो–तुम मेरा सुहाग जरूर हो, लेकिन

देश के लिए कलंक हो ... (११५)

सन्तो के भीतर एकाएक दो साँसें चल रही थीं । एक उसकी अपनी थी, एक बड़ी दादी की, असली मुक्ति सुख सुरग–नरक में नहीं है, वह इसी धरती पर है ।(११६)

जसवंत बड़ी दादी को जंगल से ले आए थे । उनके साथ उनका जिस्म ही था मन न था । अंतिम क्षणों तक दादी अपनी बात पर टिकी रही । अंग्रेजों की दी हुई गुमटी में पैर न रखा । अंतिम संस्कार भी सन्तो के हाथों ही पूर्ण हुआ था । आज बड़ी दादी की आत्मा ने सन्तो के शरीर में प्रवेश किया । देशप्रेमी ह्दय से बड़े भावुक होते हैं, क्रांतिकारी अंग्रेजों के लिए बने हुए होते हैं । नवीन को जैसे ही यह ज्ञात हुआ कि प्रवीन को थानेदार ले गए हैं, वह फौरन अपने घर आ जाता है । अपने भाई से मिलने पर प्रवीन ने मुँह फेर लिया । वह नवीन से मिलना ही नहीं चाहता था । प्रवीन की नजर में क्रांतिकारी आंतकवादी हैं । नवीन अपने देश की आवाज के लिए खून का कतरा–कतरा बहाने के लिए तत्पर है, पर अंग्रेजों के सामने घुटने टेकने का सोच भी नहीं सकता । अपनी जान को हथेली में लेकर अपने भाई से मिलने

आता है । उसे यह पता चल चुका था कि फिरंगी यहीं पर आ रहे हैं, किन्तु अपने भाई की ईमानदारी को साबित करने के लिए वह अपने प्राणों पर खेलने के लिए तैयार हो जाता है । बंधुत्व की भावना से नवीन खिंचा चला आया । सन्तो ने बिजली की तरह कौंध कर कहा लालाजी तुम किस मोह में पड़े हो ? खतरा मत उठाओ । भाग जाओ ।"(११७)

पलक झपकते ही सन्तो ने नवीन का हाथ पकड़ा और उसे लेकर छत पर भागी थी । छतवाले कमरे में नवीन को बंद कर दिया और दरवाजे से लगी वहीं खड़ी रही । फिरंगियों के चिल्लाने पर भी वह वहाँ से टस से मस न हुई, डट कर वहीं, खड़ी रही । चाहे गोली चलाओ जो चाहे करो । इन्सपेकटर के चिल्लाने पर हिन्दुस्तानी सिपाही दरवाजा तोड़ने आगे बढ़े । सन्तो ने अपनी धोती खोल दी, शरम करो तुम तो हिन्दुस्तानी हो । तुम्हारी आँखों में अपनी बहनों माँ के लिए कुछ तो इज्जत होगी । तुम हिन्दुस्तानी होकर फिरंगी की चाल चलने लगे, दरवाजे पर चोटे बढ़ गई थीं ।"(११८)

सन्तो शेरनी की तरह चिंघाडी ठीक है दरवाजा तोड दो पर सोच लो मेरे तन पर एक भी कपड़ा नहीं होगा । देख पाओगे अपनी बहन को नंगा ।"(११९) सन्तो दुर्गा बनी हुई थी वह नवीन पर चीखी–

चुप रहो मैं औरत नहीं तुमारी भाभी माँ हूँ लालाजी, माँ अपने बेटे को इस तरह नहीं दे देगी ।"(१२०)

सन्तो की आवाजने हिन्दुस्तानी सिपाहियों की आत्मा को झकझोर दिया । वे वापिस लौट गए । इन्सपेकटर ने हिन्दुस्तानी सिपाहियों को खूब धमकाया । नवीन ने उस फिरंगी इन्सपेकटर को वही ढेर कर दिया । बाबूजी ने कहा

यह बहू नहीं एक बड़ी दादी पैदा हुई है ।"(१२१)

'सुबह दोपहर शाम' उपन्यास में कमलेश्वर ने शीर्षक के द्वारा तीन पीढ़ियों की ओर संकेत कर दिया है । जो पीढ़ी बेगारद निकली, पर सन्तो और नवीन के पात्रों के द्वारा यह बताना चाहा है कि सारे हिन्दुस्तानियों ने फिरंगियों की गुलामी को स्वीकार नहीं किया था । राजा साहब, बड़े दादा, बड़ी दादी, सन्तो के ससुर बाबूजी, सन्तो की ननद मंजू जैसे अनगिनत हिन्दुस्तानी ऐसे थे जो कभी फिरगियों से डरे नहीं ।

अंग्रेजों की सत्ता के सामने कितने ही भारतीय कुत्ते की तरह दुम हिलाते रहे, अपने घुटने टेक दिए । अपनी मातृभूमि, देशप्रेम के जज्बे को बढ़ने ही नहीं दिया । अपनी आत्मा को बेच दिया, अपने हथियार डालकर खुद अपने आपको गुलामी की जर्जीरों में जकड़ दिया और अपने तन मन को बंदी बना दिया । खुद्दारी की जिंदगी जीना ही नहीं जानते थे । उपन्यासकार ने संपूर्ण निष्ठा से यह बताने का भरसक प्रयत्न किया है कि सभी भारतीय एक जैसे न थे ।

जिन्होंने कुछ भी पाने की लालसा कभी न रखी वे तो कुर्बानी के वेदी पर डटे खडे थे ।

उपन्यास के प्रारंभ मे बड़ी दादी ही उपन्यास में छायी हुई है । सन्तो के ब्याह के पश्चात सन्तो का चरित्र मुख्य और महत्त्वपूर्ण बन गया है । अपनत्व का जज्बा भाभी माँ के समान होती है । नवीन की माँ ने अपने क्रांतिकारी पुत्र को घर में प्रवेश देने से इन्कार कर दिया पर उसी घर की बहू पराई जनी ने देवर को अपना बेटा बना दिया । विचार साम्य के कारण ही सन्तो नवीन से अपनत्व का अनुभव कहती है । इस माध्यम से कमलेश्वर बताना चाहते हैं कि देश की विषम स्थितियों मे भी हिन्दुस्तानियों का खून पानी नहीं बना था । उसमें भी शोखी थी, उस खून में रवानगी थी देशप्रेम की रौ सन्तो और नवीन में थी । वस्तुतः संपूर्ण उपन्यास में स्वतंत्रता पूर्व की स्थितियों का बड़ी मार्मिकता और स्वाभाविकता से अंकन किया गया है ।

संदर्भसंकेत

१. कमलेश्वर पृ. १९९

२. कमलेश्वर पृ. २०८

३. लौटे हुए मुसाफिर ५७

४. लौटे हुए मुसाफिर पृ. ५

५. लौटे हुए मुसाफिर पृ. ७ और ८

६. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य पृ. १८६

७. लौटे हुए मुसाफिर पृ. ४

८. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य पृ.१८६

९. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य पृ.१८७

१०. लौटे हुए मुसाफिर पृ.३२–३३

११. लौटे हुए मुसाफिर पृ.३५

१२. लौटे हुए मुसाफिर पृ. ९९

१३. भारत विभाजन और हिन्दी कथा–साहित्य पृ. १८८

१४. कमलेश्वर पृ.२०२

१५. कमलेश्वर २०३

१६. एक सड़क सत्तावन गलियाँ पृ.४८

१७. डॉ. घनश्याम मधु – हिन्दी लघु उपन्यास पृ. १६३

१८. एक सड़क सत्तावन गलियाँ पृ.

१९. रेगिस्तान

२०. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य पृ.७८ डॉ. प्रेमिला अग्रवाल

२१. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य १६९

२२. सुबह दोपहर शाम १५१ पृ. १५१

२३. सुबह दोपहर शाम १५१ पृ. १५९

२४. भगवतीचरण वर्मा की उपन्यास चेतना – डॉ. श्रीमती इन्दु शुक्ला पृ. ३

२५. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य – डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ. १८२

२६. लौटे हुए मुसाफिर – कमलेश्वर पृ.९

२७. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ. १८२

२८. कमलेश्वर मधुपसिंह पृ.

२९. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य – डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ ३४

३०. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य – डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ ३२

३१. नयी कहानी की भूमिका कमलेश्वर पृ ११

३२. 'लौटे हुए मुसाफीर' - कमलेश्वर पृ

३३. कमलेश्वर - मयूरसिंह पृ. २०५

३४. लौटे हुए मुसाफिर-कमलेश्वर पृ. ५७

३५. हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना

३६. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना

३७. लौटे हुए मुसाफिर - कमलेश्वर पृ २०

३८. लौटे हुए मुसाफिर - कमलेश्वर पृ.२६

३९. कमलेश्वर - मयूरसिंह पृ २०७

४०. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य-डॉ. प्रेमिला पृ. १८४

४१. हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी - डॉ. रेखा कुलकर्णी पृ.६३

४२. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य-डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ. १८४

४३. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य-डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ. १८४

४४. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य-डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ. २२

४५. लौटे हुए मुसाफिर-कमलेश्वर पृ. १२६

४६. नयी कहानी भी भूमिका - कमलेश्वर पृ.६०

४७. हिन्दी उपन्यास सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप – डॉ. प्रभाशर्मा, पृ. २१

४८. लौटे हुए मुसाफिर – कमलेश्वर पृ.१००

४९. लौटे हुए मुसाफिर – कमलेश्वर पृ. १०१

५१. कमलेश्वर – मधुपसिंह – पृ.२०८

५२. लौटे हुए मुसाफिर – कमलेश्वर पृ.१०१

५३. कमलेश्वर – मधुकरसिंह पृ.१८४

५४. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना पृ. २८

५५. हिन्दी उपन्यास सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप – प्रभाशर्मा

५६. कमलेश्वर – मधुपसिंह पृ. २०२

५७. हिन्दी लघु उपन्यास – डॉ. घनश्याम मधुप पृ. १६३

५८. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – कमलेश्वर पृ.

५९. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – कमलेश्वर पृ. ०८

६०. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – कमलेश्वर पृ. ०९

६१. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – कमलेश्वर पृ. १९

६२. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – कमलेश्वर पृ. ४०-४१

६३. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – कमलेश्वर पृ. ५१

६४. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – कमलेश्वर, पृ. ११३

६५. एक सड़क सत्तावन गलियाँ – कमलेश्वर पृ. ११५

६६. कमलेश्वर – मधुकरसिंह पृ.२०८

६७. कमलेश्वर – मधुपसिंह पृ. १६८

६८. हिन्दी उपन्यास एक अंतर्यात्रा – डॉ. रामदरश मिश्र पृ. ६ और ३

६९. भारत विभाजन और हिन्दी कथा – साहित्य – डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ. २८

७०. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. १८

७१. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. १८

७२. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. १९

७३. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ६२

७४. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ३७

७५. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ३८

७६. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ४६

७७. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ४८

७८. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ४९

७९. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ५०

८०. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ५१

८१. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ३६

८२. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ५२

८३. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य – डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ. ७८

८४. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ६९

८५. रेगिस्ता – कमलेश्वर पृ. ६९

८६. रेगिस्ता – कमलेश्वर पृ. ७०

८७. रेगिस्तान – कमलेश्वर पृ. ७१

८८. भारत विभाजन और हिन्दी साहित्य– डॉ. प्रेमिला अग्रवाल पृ. २१

८९. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य – डॉ. प्रमिला अग्रवाल पृ.२१

९०. भारत विभाजन अभिशाप था – जोश मलीहाबादी पृ. १३

९१. अमृताल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना – डॉ. शोभा पालीवाल २१

९२. 'भूमिका' 'सुबह दोपहर शाम' – कमलेश्वर

९३. ‘सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. ११

९४. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर, पृ १०

९५.   स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना पृ १३५

९६.   सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर ५६

९७.   सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ.१८

९८.   हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी – डॉ. रेवा कुलकर्णी

९९.   हिन्दी उपन्यास की परंपरा में साठोत्तरी उपन्यास – डॉ. पासकान्त देसाई पृ.६०

१००. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास और युग चेतना – डॉ. जवाहर लालसिंह ९४

१०१. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. ८९

१०२. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. ९२

१०३. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. ९८

१०४. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. ९८

१०५. प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना – डॉ. अमरसिंह लोधा पृ.१३५

१०६. भगवती चरण वर्मा की उपन्यास चेतना – डॉ. इन्दु शुकला पृ.३०

१०७. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. १०९

१०८. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. ११७

१०९. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. ११३

११०. हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी, पृ. ५४

१११. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ ८५

११२. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. १५

११३. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. १३५

११४. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. १३५

११५. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. १५३

११६. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ. १५७

११७. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ १५९

११८. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ १५९

११९. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ १५९

१२०. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ १५९

१२१. सुबह दोपहर शाम – कमलेश्वर पृ १६०

चतुर्थ अध्याय
स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

(१) स्वातंत्र्योत्तर कालीन विभिन्न परिस्थितियाँ :

(अ) आर्थिक परिस्थितियाँ

(ब) सामाजिक परिस्थितियाँ

(क) राजनीतिक परिस्थितियाँ

(ड) सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ

(२) स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

(अ) समुद्र में खोया हुआ आदमी

(ब) डाक बंगला

(क) तीसरा आदमी

(ड) काली आँधी

(इ) कितने पाकिस्तान

(१) स्वातंत्र्योत्तर कालीन विभिन्न परिस्थितियाँ

प्रस्तुत अध्याय में स्वातंत्र्योत्तर कालीन आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक-धार्मिक आदि विभिन्न परिस्थितियों का निरूपण कर उनके परिप्रेक्ष्य में कमलेश्व के आलोच्य उपन्यासों में प्रतिबिंबित सामाजिकता के स्वरों-तत्त्वों का विवेचन-विश्लेषण एवं निष्कर्ष-प्रतिपादन किया गया है ।

कमलेश्वर के उपन्यासों में जहाँ स्वाधीनता पूर्व की परिस्थितियों का चित्रण किया गया है वहाँ कुछ उपन्यासों में स्वाधीनता पश्चात की परिस्थितियों का अवलोकन भी प्राप्त है । 'रेगिस्तान' का 'बाकर' जो स्वाधीनता के पश्चात की भारत पाक विभाजन की परिस्थिति का शिकार बना, जिसकी प्रतिक्रिया विश्वनाथ के चरित्र पर पड़ी । विश्वनाथ विभाजन के हादसे की प्रतिक्रिया के कारण अर्ध विक्षिप्त बन गया । कमलेश्वर का अन्य उपन्यास 'लौटे हुए मुसाफिर' में भी भारत-पाक की विडम्बना की शिकार युवा पीढ़ी बनी, जिनको सुंदर अपना पाकिस्तान और अपने रोज़गार के ऊँचे ख्वाब दिखाए गए । वे लोग-युवा पीढ़ी पाकिस्तान तो क्या दिल्ली भी पहुँच नहीं पाए ।

कमलेश्वर के उपन्यासों में दोनों प्रकार की परिस्थितियाँ - स्वाधीनता पूर्व और स्वातंत्र्योत्तर परिस्थितियों के चित्र मिलते हैं ।

(अ) आर्थिक परिस्थितियाँ

भारतीयों ने स्वाधीन भारत के अनेक सुनहरें सपने देखे थे, पर देखते-देखते ही परिस्थितियों का रंग बदल गया । विपरीत परिस्थितियों का चित्र देखकर भारतीयों के होश उड़ गए । रोजी-रोटी की तलाश में भारतीयों को अनेक विषमताओं का सामना करना पड़ा । भारत के स्वाधीन होते ही अनेक अवसरवादी, भ्रष्टाचारी लोग आगे निकल आए और आर्थिक स्वाधीनता का यंत्र अपने कब्जे में कर लिया । राजनीति में भाई-भतीजावाद, भ्रष्टाचार, अत्याचार आदि फैलने लगा ।

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' उपन्यास में उपन्यासकार ने श्यामलाल के पात्र के द्वारा स्वाधीन भारत के एक बेरोजगार नागरिक के जीवन की विडम्बना का चित्र अंकित किया है । रोजी रोटी एवं ऊँची ख्वाहिशों के कारण आर्थिक उपार्जन की उम्मीद लिए श्यामलाल दिल्ली महानगर में आता है । महानगर में इन्सान अनेक समस्याओं का शिकार बना हुआ है, आर्थिक उपार्जन हेतु उसे अनेक संघर्ष करने पड़ते हैं । महानगर रूपी समुद्र में श्यामलाल और उसका परिवार खो जाता है ।

कस्बाई जीवन और महानगरीय जीवन में लेखक ने बड़ी जद्दोजहद-कोशिश के साथ यह बताया है कि दोनों जिंदगी में धरती-आसमान का फर्क है । कस्बाई जीवन में एक दूसरे के प्रति अपनापन, आत्मीयता बनी रहती है,

तो महानगरीय जीवन में अपनापन, आत्मीयता की अनुभूति कहीं भी नहीं होती है । वहाँ एक शोषण की अनुभूति अवश्य होती है । प्रत्येक इन्सान बस दौड़ रहा है सिर्फ उनकी इच्छाएँ जरूरतें भिन्न-भिन्न हैं । सभी इन्सान एक दूसरे को (मुस्कान) से छल रहे हैं । कहीं भी संकोच ग्लानि नहीं है । महानगरीय जीवन में यह अनिवार्य बन जाता है कि जितने आप करनेवाले होंगे उतना वे अच्छे-से जीवन यापन कर सकते हैं । इस कारण नारियाँ भी आर्थिक उपार्जन हेतु कहीं न कहीं, कोई न कोई छोटी मोटी नौकरी ढूँढ़ ही लेती हैं । श्यामलाल की बेटी तारा दिल्ली में आकर अपने लिए नौकरी ढूँढ़ लेती है हालाँकि तनख्वाह सिर्फ ४० रु. प्रति मास मिलती है, साथ साथ नारी होने कारण उसका शोषण भी होता है । तारा को नौकरी की आवश्यकता थी उसीके चालीस रुपयों पर उसके परिवार-घर के सभी सदस्यों का जीवन यापन हो रहा था । तारा की मजबूरियों के कारण वह शोषण का शिकार बनती है । हरवंश की वासना का शिकार बन जाती है - कुँवारी माँ बन जाती है । तारा का सद्‌भाग्य कि हरवंश तारा के साथ ब्याह कर लेता है ।

महानगरीय जीवन में श्यामलाल का परिवार बिखर कर रह जाता है । श्यामलाल का बेटा बिरेन समुद्र में खो जाता है । 'नेवी' वाले बिरेन की मृत्यु का मुआवज़ा देने से इन्कार कर देते हैं । उपन्यासकार ने आर्थिक विषमता की ओर अधिक ध्यान केन्द्रित किया है । कमलेश्वर ने कुछ विषमताओं को काफी सुलझे हुए रूप से उभारा है । वहाँ के सरकारी अफसर लोग किसी मध्यवर्गीय

या निम्नवर्गीय परिवार की बदहाली को न सुनते हैं और न देखते हैं । श्यामलाल का छोटा सा कुनबा आर्थिक विषमता के कारण आर्थिक समुद्र में एक-एक कर बिखर जाता है । आर्थिक सुदृढ़ता, आर्थिक उपार्जन न होने के कारण घर का खर्चा चलना भी मुश्किल बन जाता है । तारा अपनी माँ को अपने पास बुलाकर आया जैसी जिंदगी देती है । आज के युग में इन्सानों के रिश्ते अर्थ पर केन्द्रित हो गए हैं ।

श्यामलाल का पुत्र बिरेन अपने पिता की आर्थिक परिस्थितियों के कारण ही जल्द से जल्द पढ़ाई खत्म कर नौकरी पर लगकर अपने परिवार को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाना चाहता है । अपनी कॉलेज की पढ़ाई करने की जिजीविषा होते हुए भी नौकरी करने के लिए बाध्य हो जाता है । बिरेन की बहन भी अपनी पढ़ाई जारी नहीं कर पाती है । उम्र से पहले ही काफी समझदारी उसमें आ जाती है । आर्थिक विषमताओं ने एक हँसते-खेलते परिवार को आर्थिक समुद्र में डूबो दिया ।

कमलेश्वर के एक और उपन्यास 'तीसरा आदमी' में भी लेखक ने महानगरीय विडम्बना का साक्षात्कार करवाया है । महानगरीय भीड़ में अनेक परिवार कितनी बेबसी भरी जिंदगी जीने के लिए मजबूर-लाचार हो जाते हैं । महानगर में एक नहीं अनेक विषमताओं से इन्सान घिरा हुआ है । महानगर में रोजीरोटी तो येन केन प्रकारेण मिल जाती है, नहीं मिलता है तो आवास, सिर छिपाने के लिए छत नहीं मिलती है । लेखक ने महानगर की ओर दौड़ती हुई

इन्सान की मानसिकता को भी उभारा है । आर्थिक उपार्जन समस्याओं की ओर भी लेखक अभिमुख हुआ है । दिल्ली महानगर में आर्थिक समस्या एवं आवास समस्याएँ मुंह फैलाए खड़ी हैं । 'तीसरा उपन्यास' में लेखक इन्हीं समस्याओं की ओर अभिमुख हुआ है । 'तीसरे उपन्सास' में लेखक ने एक एनाउन्सर को जीवन की विषमता भरी जिंदगी का चित्रण किया है । दिल्ली महानगर में अच्छी तनख्वाह मिलेगी इस लालच से 'मैं' नरेश अपना तबादला दिल्ली करवा देता है, बिना सोचे समझे कदम उठा देता है । दिल्ली में आते ही वह प्रथम तो आर्थिक विषमता का शिकार बनता है ।

संक्रांति का युग पार करके आए हुए भारतीय अभी भी आर्थिक कशमकश में उलझे हुए हैं । आधुनिक युग में दाम्पत्य-जीवन इनहीं आर्थिक कशमकश में बिखरता जाता है । नरेश एनाउन्सर और चित्रा ब्याह के पश्चात दिल्ली में आ जाते हैं और आर्थिक विषमताओं के शिकार हो जाते हैं । नरेश अपना तबादला दिल्ली में करवाता है, फिर भी तनख्वाह में बढ़ोत्तरी नहीं होती है । आर्थिक रूप से उनका दाम्पत्य-जीवन बिखर जाता है । उनके दाम्पत्य जीवन में बड़ी कभी भी न भरी जाए ऐसी दरार पड़ जाती है । दोनों पति-पत्नी की दशाएँ विपरीत हो जाती हैं । सुमन की पहचान से चित्रा को नौकरी मिल जाती है । अनेक संघर्षों के साथ संघर्ष करती उन्हें झेलती हुई वह अपने बच्चे का लालन पालन करती है । आर्थिक विषम परिस्थितियों के कारण

ही वह अपने दूसरे बचचे को जन्म देने में झिझकती है । और जन्म नहीं पाती ।

उपन्यासकार कमलेश्वर ने 'तीसरा आदमी' उपन्यास के माध्यम से यह बताने की कोशिश की है कि दाम्पत्यजीवन के विघटन में 'अर्थ' महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है । 'अर्थ' इन्सान के जीवन यापन के लिए महत्त्वपूर्ण है । आर्थिक स्थिति की नाजुकता से, कमजोरी से बेबस इन्सान हर कदम पर समझौता करता हुआ आगे रहता है ।

'डाकबंगला' कमलेश्वर का प्रतीकात्मक उपन्यास है । इस उपन्यास में उपन्यासकार ने एक स्वच्छंद नारी की दास्तान को शब्दबद्ध किया है । 'डाकबंगला' की नायिका इरा अपनी अधिक स्वच्छंदता से अपना जीवन अपने ही हाथों से मसलकर रख देती है । इरा जो विमल से प्रेम करती है, अपने प्रेम के कारण, विमल के लिए वह अपने परिवार एवं घर को त्याग देती है । इरा और विमल दोनों आर्थिक विषमताओं के शिकंजे में फँस जाते हैं । विमल बेरोजगार है अत: इरा नौकरी की तलाश में रहती है और उसे मिस्टर बत्रा के यहाँ नौकरी मिल भी जाती है । जो दूसरी ओर उसका प्रेम उसका प्रेमी विमल शंका कुशंका के चक्रवात में घिरा हुआ उसे हमेशा के लिए छोड़कर चला जाता है । इरा को बत्रा की ओर से हमदर्दी–सहानुभूति मिल जाती है तो दूसरी ओर उसकी आर्थिक विषमता से उसे छुटकारा दिलाता है । इस जिंदगी में अनेक कश्मकशों ने उसे घेर रखा था ।

कमलेश्वर ने 'डाकबंगला' उपन्यास में यह स्पष्ट करने की बेहतरीन कौशिश की है कि आर्थिक विषमताओं से दूसरी अनेक समस्याएँ उभरती रहें । निम्न मध्यवर्ग की नारी हो या चाहे मध्यवर्ग की नारी हो जब आर्थिक रूप से असहाय होती है, दयनीय स्थिति होती है तो समाज के ठेकेदार वर्ग, पुरुष वर्ग उसकी परिस्थितियों का संपूर्ण फायदा उठाने में जरा भी कसर छोड़ते नहीं हैं । समय की सताई हुई नारी, समय की मारी नारी, किसी भी पुरुष की वासना का शिकार बन जाती है । उसकी बेबसी उसे कहीं का नहीं छोड़ती । बत्रा इरा को छोड देता है और उसके स्थान पर डॉ. आना है जो इरा के पिता की उम्र की है फिर भी इरा उसे स्वीकार कर लेती है । उसे संरक्षण की आवश्यकता थी । पुरुष प्रधान समाज में नारी अपनी विडम्बनाओं से समझौता करती हुई चलती है । इरा भी अपनी विवश परिस्थितियों के कारण बाध्य हो जाती है । इरा का जीवन 'डाकबंगला' बनकर रह जाता है । जैसे मुसाफिर आते हैं कुछ समय के लिए और फिर चले जाते हैं । उसका (इरा) जीवन 'डाकबंगला' बन जाता है । आर्थिक विवशता नारी के जीवन को रौंद कर रख देती है । उपन्यासकार कमलेश्वर ने बड़ी विशिष्टता से यह स्पष्ट किया है कि अन्य सारी विषमताओं की जड़ आर्थिक परिस्थिति है । अर्थ के अभाव में नारी का जीवन भ्रष्ट हो जाता है ।

कमलेश्वर के अन्य उपन्यासों में 'काली आँधी' की पृष्ठभूमि राजनीति की बनी हुई है । मालती राजनीति के क्षेत्र में जग्गीबाबू की सहायता से अनेक

मंजिलों को हासिल करती हुई प्रधानमंत्री बन जाती है । मालती और जग्गीबाबू का दाम्पत्य जीवन विघटित हो जाता है । जग्गीबाबू की आर्थिक स्थिति सामान्य है वह होटल में मेनेजर ही बने रहते हैं । अर्थ की सत्ता एवं शक्ति कितनी अधिक होती है । इसी बात का बयान करता हुआ कथानक कमलेश्वर की सफलता भी सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

(ब) सामाजिक परिस्थितियाँ-चेतना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज के साथ उसका चोली दामन का रिश्ता है । कमलेश्वर के लघु उपन्यास सामाजिक उपन्यासों की श्रेणी में रखे जाते हैं । कमलेश्वर का उपन्यास - 'समुद्र में खोया हुआ आदमी, तीसरा आदमी, डाक बंगला 'काली आँधी' 'कितने पाकिस्तान', समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हुए उपन्यास हैं । जो समाज के विभिन्न वर्गों की दास्तान को बयान करते हैं । कमलेश्वर के उपन्यासों की विशिष्टता है कि जहाँ वे अपने उपन्यासों में निम्नवर्ग एवं निम्न मध्यवर्ग के चित्रों को मुखरित करते हैं, साथ-साथ यह प्रतीति करवाते हैं कि महानगरीय जीवन से कस्बाई जीवन में कितना आनंद एवं मधुरता है, कस्बों में आज भी अपनापन, विश्वास, भाईचारा महसूस होता है ।

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' कथानक की पृष्ठभूमि निम्न मध्यवर्ग की है । श्यामलाल का पात्र निम्न मध्यवर्ग का प्रतिनिधित्व करता है । श्यामलाल खुद और उसका परिवार दिल्ली महानगरीय समुद्र में खो गया है । महानगरीय समुद्र की धाराओं के थपेड़ों ने श्यामलाल के समग्र परिवार को खंडित कर दिया । आर्थिक विषमता के कारण श्यामलाल समाज के रीत रिवाजों के खिलाफ जब समाज का प्राणी मानव जाता है तो अनेक प्रश्न खड़े हो जाते हैं । श्यामलाल की बेटी तारा का कुँवारी माँ बनना यह सबसे बड़ा दोष माना जाता है । आर्थिक परिस्थिति के कमजोर होने से व्यक्ति को समाज में रहना उसके लिए मुश्किल बन जाता है । समाज के नियमों का उल्लंघन होते ही वह परिवार सबकी नज़रों से उतर जाता है ।

उपन्यासकार ने जीवन के कटु यथार्थ को (खोलकर) पेश किया है । रिश्तों के खोखलेपन को खोलकर रख दिया है । तारा अपनी माँ की विवशता को पेश करती है अपनी माँ को अपने बच्चों की आया बनाकर रख देती है यहाँ तक की घर की नौकरानी को भी निकाल देती है । और अपनी माँ से काम करवाती है । अगर वह चाहती तो एक आया का प्रबंध अपने बच्चों के लिए कर सकती थी, किंतु वह अपनी माँ की विपरीत परिस्थितियों को भुनाती है । और एक माँ अपनी ही बेटी के घर में आया बनकर रह जाती है ।

श्यामलाल लोहे की फेकटरी में चोकीदार बनकर रह जाता है । पति–पत्नी एक शहर में होते हुए भी साथ रह नहीं सकते हैं, आर्थिक परिस्थिति

के असर से श्यामलाल का सामाजिक जीवन, दाम्पत्य–जीवन विघटित हो जाता है । कमलेश्वर ने एक बेबस बेरोजगार अर्थविहीन बाप की बेबसी का चित्र प्रस्तुत किया है । वह बेबस बाप न अपने बच्चों को कॉलेज की उच्च शिक्षा दे पाया, न समाज में सही स्थान बना पाया । लाचार बच्चे अपने परिस्थितियों के साथ समझौता कर लेते हैं । बिन्नी अस्पताल में नर्स का कोर्स करने चली जाती है । बिरेन की माँ रम्मी अपने बेटे की मृत्यु का मुआवजा लेने सरकारी दफतरों के चक्कर लगाती है ।

उपन्यासकार ने निम्न मध्यवर्ग के एक बेबस इन्सान की कथा पर, यथार्थता पर प्रकाश डाला है । जीवन की वास्तविकता को बड़ी सरसता और सहज़ता से प्रस्तुत किया है मनुष्य के जीवन का चक्र यही है । उसकी यथार्थता यही प्रस्तुत करती है कि आज के खोखले संबंध अर्थ पर ही अवलंबित हैं – आधारित हैं ।

'तीसरा आदमी' उपन्यास में लेखक ने मनुष्य की कश्मकश को उभारा है । कमलेश्वर के 'तीसरा आदमी' उपन्यास में महानगरीय जीवन जीता निम्न मध्यवर्ग कितनी जद्दोजहद करता है । 'तीसरा आदमी' का नायक अपनी तनख्वाह में इजाफा हो इसलिए इलाहाबाद से दिल्ली आता है । किंतु यह नायक नरेश इल्हाबाद से दिल्ली तक के सफर में इतना पीसा जाता है कि उसका दाम्पत्यजीवन ही विघटित होता जाता है । महानगरीय जीवन उसके दाम्पत्यजीवन के लिए अभिशाप बन जाता है । महानगर में सबसे प्रथम अग्रिम

विषमता आवास भी है, साथ साथ महानगरीय जीवन एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार के लिए अनेक विषमताओं को आमंत्रित करता है । नरेश और चित्रा का जीवन महानगरीय आपाधापी में बिखर कर रह जाता है । आर्थिक विषमता एवं आवास की समस्या के कारण नरेश और चित्रा के रिश्तों में दरार पड़ जाती है ।

आज के युग में तीसरे आदमी का प्रवेश बड़ी आसानी से हो जाता है । समाज में यह तीसरा आदमी सभी उन समस्याओं के साथ होने से प्रवेश कर जाता है जिससे सामाजिक जीवन में एवं दाम्पत्यजीवन में परिवर्तन आ जाता है । आज के युग में दाम्पत्य जीवन का विघटन एक साधारण सी बात बन गई है । पुरुषप्रधान समाज में नारी की स्थिति अति दयनीय है । नारी का कसूर हो या न हो नारी को ही दोषित ठहराया जाता है । उसके दामन पर ही दाग लगाए जाते हैं, नारी पर प्रहार करने का मौका मिल जाता है, चारों ओर से नारी को कुचला जाता है । परिवार में भी नारी को सहना पड़ता है, अगर अर्थ उपार्जन हेतु उसे अपने घर की चौखट से बाहर कदम रखे तो वासना लोलुप इन्सानों के काम का शिकार बनती है । समाज के पदाधिकारी रक्षक ही भक्षक बन जाते हैं । 'तीसरा आदमी' की नायिका चित्रा अपने दाम्पत्यजीवन में आवास की विषमता का शिकार बनती है । चित्रा और नरेश इलाहाबाद से दिल्ली आकर सुमन के साथ उसकी एक कोठरी में रहते हैं । शंका-कुशंका का शिकार चित्रा बनती है । चित्रा महानगरीय जीवन में इन सभी विषमताओं से गुजरती है ।

नौकरी पाने के लिए सिफारिश का पत्र अनिवार्य है । व्यक्ति की काबिलियत नहीं देखी जाती है । देखा जाता है तो सिर्फ यह कि वह किस इन्सान की सिफारिश लेकर आया है । समाज के सभी क्षेत्रों में भ्रष्टाचार फैला हुआ है । नरेश तनख्वाह में इजाफे की आकांक्षा से दिल्ली आता है किंतु वह उसी पर ही रह जाता है ।

नरेश और चित्रा समाज में सामाजिक जीवन जी नहीं पाते हैं । एक सफल परिवार बना नहीं पाते हैं । समाज में पुरुष का स्थान सर्वोच्च है, परिवार में भी पुरुष प्रधान होता है । नरेश अपनी पत्नी चित्रा को नौकरी छोड़कर घर की चार दिवारों में रखना चाहता है । पूना से वह चित्रा को पत्र लिखता है कि तुम अब यहाँ सब कुछ छोड़ छाड़कर चली आओ । नरेश चित्रा के व्यक्तितत्त्व को निखरने नहीं देना चाहता है । उसका अहम उसे छोड़ता नहीं है । चित्रा के निखरे व्यक्तितत्त्व से नरेश को जलन-सी होने लगती है । चित्रा और नरेश के दाम्पत्यजीवन में पड़ी दरार और भी गहरी होती जाती है ।

उपन्यासकार ने 'तीसरा आदमी' उपन्यास में आज के आधुनिक युग की विषमताओं को आज की कश्मकश भरी जिंदगी जीते हुए इन्सान की दास्तान को चित्रित किया है ।

'डाक बंगला' कमलेश्वर का एक लघु उपन्यास है । इस उपन्यास के कथानक में नारी की दयनीय स्थिति के दर्शन होते हैं । उपन्यास की नायिका

स्वच्छंद प्रेम में विश्वास रखती है । इसी कारण विवाह के बंधन से पूर्व ही वह बिरेन को समर्पित हो जाती है । इरा जो इस उपन्यास कि नायिका है, वह अपने प्रेमी बिरेन के प्रेम में अपनी मान–मर्यादा का उल्लंधन करती है । उपन्यासकार ने एक ओर उन नारियों की स्थिति की ओर अपनी कलम चलाई है जो प्रेम और विश्वास को सर्वस्व समझती है । तो दूसरी ओर बिरेन के पात्र के द्वारा समाज में जो बेरोजगारी व्याप्त है उसीकी ओर भी अपने विचारों को व्यक्त किया है ।

आज भी युवा पीढ़ी पढ़–लिखकर अच्छी नौकरी की तलाश करने में जुट जाती है । बिरेन का चरित्र बेरोजगार व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है । आज की युवा पीढ़ी नौकरी न मिलने पर हताश और मायूस हो जाती है । अपने आप पर से उसका विश्वास उठ जाता है । विवशता एवं असफलता उसके आत्मविश्वास पर कुठाराघात करती है । वह युवा सँभले उससे पूर्व ही वह बेजार हो जाता है और उसमें पलायनवादिता आ जाती है । परिस्थितियों से जूझने की अशक्ति के अभाव के कारण वह परिस्थितियों से, समय से मार खाया हुआ त्रस्त युवा अपनी जवाबदारियों से विमुख हो जाता है । बिरेन भी अपनी परिस्थितियों से त्रस्त होकर भाग खड़ा होता है ।

इरा के जीवन में कदम–कदम पर कसौटी होती है । बिरेन के प्रेम एवं विश्वास से बँधा हुआ रिश्ता कमज़ोर होकर टूट जाता है । बिरेन इरा को छोड़कर चला जाता है । तद्पश्चात इरा का जीवन एक डाक बंगले जैसा हो

जाता है । मुसाफिर आते है सुस्ता लेते हैं, और फिर वापिस अपनी मंजिल की ओर चल पड़ते हैं । इरा लगातार यह महसूस करती है कि पुरुष प्रधान समाज में नारी को लूटा खसोटा जाता है । उसके अस्तित्त्व और व्यक्तित्त्व को कुचलने का भरसक प्रयास करते हैं । पति चाहे बूढ़ा ही क्यों न हो पर उसकी छत्र छाया में नारी सुरक्षित रहती है । नारी सिर्फ पुरुष के उपभोग का साधन मात्र बन गई है । वास्तव में उसका भी अपना अलग वजूद है, उस वजूद को समाज में बनाए रखने के लिए उसे लगातार संघर्ष करना पड़ता है ।

आर्थिक विषमता से घिरी नारी की समाज में रहते हुए प्रत्येक कदम कदम पर समझौता करने पर विवश कर दिया जाता है ।आज के संक्रांति युग में जब इन्सान अनेक विषमताओं से गुजर रहा है, लेकिन वह सुखी नहीं है । आधुनिक युग में विवाह की जड़ों में दीमक लग गया है । प्रेम और विश्वास के अभाव ने वैवाहिक जीवन की बुनियाद को हिला दिया है । ध्वंस कर दिया है । 'डाक बंगला' उपन्यास में आज के युग में मानव कितनी विडम्बनाओं से घिरा हुआ है कि वह इन्सान सही मायने में जिंदगी जीना ही भूल गया है ।

'डाकबंगला' उपन्यास में पुरुष प्रधान समाज से चोट खाई हुई इरा की जिंदगी से यह बताने का किया गया है ।

'काली आँधी' उपन्यास की पृष्ठभूमि राजनीति के धरातल पर अवतरित है । इस उपन्यास में लेखक ने अपने स्वानुभव को अभिव्यक्त किया है ।

राजनीति का खेल कैसे खेला जाता है ? एवं राजनीति पक्ष के दाँव-पेच को प्रपंच एवं उठापटक के क्रूर खेल को अंकित किया है ।

उपन्यास की नायिका मालती अपने पति जग्गीबाबू की प्रेरणा से राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश करती है और लगातार सफलता की सीढ़ियाँ सर करती हुई चली जाती है । सफलता पाने के लिए बहुत कुछ त्याग करना अनिवार्य बन जाता है । राजनीति की अंधी दौड़ में मालती अपने पति और प्यारी सी छोटी बच्ची का त्याग कर देती है । पारिवारिक जिंदगी का त्याग करती है । अपनी बच्ची को मातृ स्नेह से वंचित रखती है । समाज में राजनीति के क्षेत्र में वह सफल रहती है । परंतु एक अच्छी पत्नी जो अपनी जवाबदारियों का निर्वाह करे एवं एक अच्छी ममतामयी माँ नहीं बन सकती है । "अपने उद्देश्य की पूर्ति के हेतु मालती किसी भी चीज का इस्तेमाल कर सकती है । वह जानती है कि किसका इस्तेमाल किस वक्त किया जाय, यानी जरूरत आने पर वह सही वक्त से परिस्थितियों, मूल्यों, संबंधों, सर्वनामों सबको । निःसंकोच चेक के साथ में भुना सकती है ।(१)

कमलेश्वर ने 'काली आँधी' लघु उपन्यास के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि सफलता की आँधी अच्छे-अच्छे गुलिस्तान को उजाड़ कर रख खेती है । जैसे मालती की सफलता ने उसके पारिवारिक जीवन को उखेड़ कर रख दिया । उपन्यासकार का सूक्ष्म निरीक्षण दाद माँग लेता है । आज के आधुनिक युग में समाज के द्वारा तय किये गए संबंध सिर्फ नाम मात्र कहने तक ही

सीमित रहे हैं । "मालती की यह तीव्र इच्छा थी कि जग्गीबाबू होटल बंद कर कमेटियों के मेम्बर बनकर फायदा उठाए किन्तु - "मैं -- पति हूँ फायदा उठानेवाला गैर आदमी नहीं "(२)

एक ओर मालती महिलाओं की मीटिंग में महिलाओं को संदेश देती है कि हमारा प्रथम कर्तव्य परिवार और पति एवं बच्चों की सही तरह से परवरिश की जाए तो दूसरी ओर उसका ही परिवार छिन्न-भिन्न हो गया था । जग्गीबाबू स्पष्टवक्ता हैं, वह सबको खरी-खरी सुना देते हैं । वे एक संवेदनशील इन्सान हैं; उनकी बातें तथ्यपूर्ण हैं वे कहते हैं - "तुम लोग सिर्फ चीजों का इस्तेमाल करना जानते हैं - बाढ़ आई तो उसे इस्तेमाल करो, सूखा पड़ा तो उसे इस्तेमाल करो, कहीं कोई लड़की भाग गई तो उसके भागने को इस्तेमाल करो, कहीं कोई मर गया तो उसकी मौत का इस्तेमाल करो, तुम लोगों ने आदमी के आँसुओं और जजबातों तक को नहीं छोड़ा, इससे ज्यादा घटिया बात और क्या हो सकती है कि दु:खी और मुसीबत जदा इन्सानों के सपनों का इस्तेमाल तुमने कर लिया.....तुमने उसके सपनों को निचोड़ दिया ।"(३) मालती अपने पति के प्रेम को संवेदनाओं के साथ खिलवाड़ करती है । जग्गीबाबू को छोड़ने के पश्चात चुनाव जीतने के लिए वह अपने संबंधों को चेक की तरह भुनाती है । लोकापवाद के उत्तर में जग्गीबाबू को पति के रूप में प्रस्तुत करती है । जनता को निर्णायक बनाकर अपनी भावुकता को भुनाकर अपना उल्लू सीधा करती है ।

कमलेश्वर ने जग्गीबाबू और मालती के संबंधों के माध्यम से सचोटता से यह पेश किया है कि आधुनिक युग में सभी उन संबंधों की बुनियाद में स्वार्थ की दीमक लगी हुई है जो कभी भी उन संबंधों को खोखले बनाकर धराशायी कर देते हैं ।

(क) राजनीतिक परिस्थितियाँ

स्वतंन्त्रता के उपन्यासों की शृंखला में कमलेश्वर के अधिकाधिक उपन्यास सामाजिक पृष्ठभमि–धरातल पर अवतरित हैं । 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', 'तीसरा आदमी', 'डाक बंगला' उपन्यास मुख्य हैं । 'काली आँधी' उपन्यास की संपूर्ण पीठिका राजनीतिक धरातल पर ही अवतरित है । 'कितने पाकिस्तान' संपूर्ण उपन्यास का कथानक वैश्विक राजनीतिक समस्याओं पर आधारित है । 'काली आँधी में राजनीतिक दावपेचों को, उसकी क्रूर नीति को ही सामने रख दिया है । राजनीति का क्षेत्र कितना धिनौना, उसकी झलक प्रस्तुत उपन्यास में द्रष्टव्य है ।

'काली आँधी' उपन्यास में मानवीय संवेदना को अत्यंत सशक्त शब्दों में रूपायित किया है । राजनीति के घृणित और अपमानजनक वातावरण से संत्रस्त उपन्यास के जग्गीबाबू अपने आत्मीय एवं अन्तरंग सम्बन्धों के प्रति चिन्तित व व्यथित दिखायी पड़ते हैं । उनकी पीड़ा और यातनामयी मन:स्थिति

स्वाभाविक प्रतीत होती है।"(४) "मैं नहीं चाहता कि मेरी बच्ची आपकी मलिन पोलिटिक्स का शिकार हो जाये.... कल को कोई उठकर यह भी कह सकता है कि यह (लिली) मेरी बच्ची नहीं है...आपकी दुनिया का जमीर मैं खूब समझता हूँ । मैं अपनी बच्ची को आपको गलीज़ दुनिया से दूर रखना चाहता हूँ.... और आपकी मालतीजी के नाम पर मुझे लेकर कीचड़ उछाला जाये, यह भी मैं नहीं चाहता... बारह बरस जो खुला रास्ता उसे देकर मैं दूसरी तरफ चला आया था....उस रास्ते पर अपनी छाया तक मैं नहीं जाने देना चाहता ।"(५) मालती के पास से ओटोग्राफस लेने लिली लाइन में खडी रहती है । एक बेटी न अपनी माँ को पहचान पाती है और एक माँ न अपनी जनी बेटी को पहचान पाती है । कैसे ये संबंध-रिश्ते जो सिर्फ नामशेष बन रह जाते है ।

'कमलेश्वर ने राजस्थान के चुनाव के दौरान जो अनुभव इकट्ठे किये थे, वही थे कि भ्रष्ट हो गई चुनाव की नीति एवं भ्रष्ट तंत्र के चुनावों के प्रति उनके मन में कसैला और कड़वा स्वाद ही रह गया । चुनावों ने नाटक का स्वरूप ग्रहण किया है जिन पर से लेखक का विश्वास उठ गया । ईमानदार और सही निष्ठावान व्यक्ति चुनावों में कदापि सफलता हासिल नहीं कर सकता । भ्रष्ट हो गई चुनाव प्रणाली के प्रति तीव्र धृणा जाग्रत हो गई । लेखक को खुद लाचारी का अनुभव होने लगा । चुनाव प्रणाली में घुस गई इन विषमताओं के कारण राजनीति में से पूर्णतः विश्वास उठ गया । 'पंचसाला' चुनाव की जो

आँधी आती है उसकी उठा पटक, अनीतियों से काली हो गई है । इसलिए इस उपन्यास का नामकरण हुआ 'काली आँधी' ।"(६)

कमलेश्वर एक ऐसे जागरूक कथाकार हैं, जिन्होंने समकालीन राजनीतिक कुचक्र को भी आधार बनाया है । यह आंतरिक पहलुओं को निर्ममता से उद्‌घाटित करता है । राजनीति कितनी घिनौनी, स्वार्थयुक्त झूठ और फरेब के धरातल पर उपस्थित रहती है । राजनीति कितनी क्रूर और यातनाजनक होती है इसका अनुभव जग्गीबाबू लगातार करते रहते हैं ।

"राजनीति का खेल बड़ा ही भयंकर है । लोकतंत्र में चुनाव का महत्त्व निश्चित रूप से उँचा है, मगर उसमें कितनी चालें की जाती हैं तथा उसका लाभ किसको मिलता है । भारतीय जनता के प्रतिनिधि चुनाव में किन किन हथकंडों का उपयोग करते हैं । यह मतदान करनेवाली जनता, बेदिमाग, अनपढ़ और भुलावे में भटकनेवाले लोगों का एक समुदाय भर है । ये जितने चुनाव हैं वे सिद्धांतों पर नहीं लड़े जाते । बेतहाशा रुपया खर्च होता है, चुनावों पर चाँदी का जूता चलता है और असली जूता भी चलता है । वोटों को खरीदने के लिए शराब पिलाई जाती है झूठे नारों पर लोगों को गुमराह किया जाता है । कभी-कभी लाठी और जूते का सहारा लेना होता है । चुनाव में हमेशा वही विजयी होता है जिसके पास धन का बल होता है ।"(७)

राजनीति एक ऐसा खेल है जिसमें काम की शक्ल ही बदल जाती है । लल्लूलाल मालवी का दाहिना हाथ है । लल्लूलाल का मुख्यपात्र है वह जैसा कहता है वैसा करता है । शक्ल ही बदल दी जाती है....

"हर काम करो पर उसकी शकल बदलकर करो समझे भइये । शराब पियो किंतु दवाई की शीशी में डालकर उसका लुक्त उठाओ ।"(८)

लल्लूलाल मालती के संपूर्ण दबे इशारों को समझ जाता है । चुनाव के दौरान समयानुसार आवश्यकताओं को वह समझता है । जातिवाद खड़ा करना, किसी पार्टी को दबा देना आदि लल्लूलाल का मुख्य काम है । वह जातिवाद का फायदा उठानेवालों में से है । हिन्दूओं को खुश करने के लिए, उनके वोट हासिल करने के लिये 'रामायण' का पाठ करा कर धर्म का सहारा लिया, तो दूसरी ओर मुसलमानों का दिल जीतने 'मुशायरे' का इन्तजाम करने के लिए गंदी बस्ती में जाते हैं ।

प्रत्येक नेता अपने कुछ गुर्गे पालकर रखता है । चुनावों के समय षडयंत्र भरी कुत्सित योजनाएँ बनाता है । दंगे करवाता है जातिपाँति का सहारा लिया जाता है । शेठ साहूकारों से पैसे उगालते हैं । चुनाव में सिर्फ मोहरे बनाए जाते हैं । और उन प्यादों को समयानुसार, आवश्यकतानुसार शतरंज रूपी राजनीति के क्षेत्र में चाल के रूप में चलाया जाता है इस्तेमाल किया जाता है । राजनीतिक चालों को 'काली आँधी' में कमलेश्वर ने बड़ी विशिष्टता से अंकित

किया है । इसीलिए कमलेश्वर एक 'युग चेता' साहित्यकार माने जाते हैं । उनकी युग बोध भी पैनी पकड़ से जीवन का कोई भी अंग बच नहीं सका है । एक तत्त्ववेत्ता की भाँति उन्होंने एक एक स्थिति एवं परिस्थितियों को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है । एक मनीषी की भाँति उन्होंने सतत चिंतन किया है और यथार्थ को सामने रखा है ।

'कितने पाकिस्तान' उपन्यास वख्त की नज़ाकत को पेश करता है । आधुनिक युग में वैश्विक तौर पर अशांति, अविश्वास अंधा-धुंधी चारों ओर अपना साम्राज्य फैलाए हुए है । इन्सानों की कोई कद्र नहीं है । नफरत की आँधी ने वैश्विक इन्सानों के हरमों से प्रेम, विश्वास, आत्मीयता, अपनापन को उखाड़कर फेंक दिया है । चारों और नफरत की आँधी ने लाशों का ढेर लगा दिया है ।

कमलेश्वर ने 'कितने पाकिस्तान' में वर्तमान परिस्थितियों का अवलोकन अपनी स्पष्ट दृष्टि एवं विचारों से पेश किया है । लेखक ने निर्भीक होकर देश के नेताओं की जवाबदारियों की ओर करारा व्यंग्य किया है । कारगील के युद्ध में अनेक फौजियों ने अपनी जानें गवाईं और देश की रक्षा के लिए अपने प्राणों को दाव पर लगा दिया, लेकिन नेता लोग क्या कर रहे हैं ? कारगील के युद्ध के पश्चात किस नेता ने उन जख्मी सियाहियों की सुध ली? नेता लोग विदेश भ्रमण में लगे हुए थे । जख्मी सिपाहियों को सड़ने के लिए सिविल होस्पीटल में भर्ती कर दिया । उनके इलाज के लिए देश के पास बजट नहीं है ।

बाजपेयी अपने घुटने का ओपरेशन-चिकित्सा करवाने विदेश जा सकते हैं, परंतु उनके जख्मी सिपाहियों के लिए उनके पास इलाज के लिए बजेट नहीं है । यह कैसी राजनीति है ? प्रत्येक व्यक्ति इन्सान स्वार्थ में रचा पचा है ? उन्हें लापता जवानों की खोज करनी चाहिए । सत्ता प्रेम के चलते लापरवाही बरतने का जघन्य अपराध आपसे हुआ है, उसके लिए आप इतना तो कर ही सकते हैं । देश के शोकग्रस्त समय में शामिल एक गरीब और पत्रकार "(९) नेताओं को सिर्फ गरीब और पत्रकार ही झाड़ लगा सकते हैं ।

तदपश्चात लेखक ने देवताओं में व्याप्त काम, लालच और सत्ता लोलुपता को बताया है । लेखक ने संपूर्ण वैश्विक संस्कृतियों को लिया जो अपने अपने स्वार्थ से दबी हुई है । महाभारत, रामायण के समय से लेकर आजतक के इतिहास का ब्यौरा प्रस्तुत किया है । प्रत्येक युग में विष्णुरुपी राम का अवतार होना यह सूचित करता है कि "जब जब अन्याय अत्याचार होता है तब तब मनुष्य की चेतना और आत्मा को यह प्रलयकारी झंझावात झकझोरते हैं और काली आँधियाँ चलती हैं ।"(१०) देवताओं ने अमरत्व अपने पास रखा और मनुष्य को दिया तो सिर्फ पीडा यातना और मृत्यु । इराक के समग्र गितगमेश ने इन्सान को दर्द पीड़ा से छुटकारा दिलवाने के लिए देवताओं से विद्रोह किया । बेबेलोनियाँ, मेसोपोटामिया, सुमेरी, अक्कारी और सिंध घाटी सभ्यता के देवता काँपने लगे । यह भी एक ठोस वास्तविकता है कि "मनुष्य पाप और सुख विलास की वासना में लिप्त होकर निरंकुश हो चुका है ।"(११)

सिंधु सभ्यता में सर्वशक्तिमान आर्य देवता इन्द्र की राजनीति सिर्फ अपने महाविलास एवं अपने राज सिंहासन की रक्षा तक सीमित है । अम्मादी सभ्यता के देवता सुरू धबराये हुए हैं । जब परम देवता अनु ने कहा कि मनुष्य ने मित्रता और प्रेम जैसे तत्त्वों को तलाश लिया है । मसेपोटामिया के देवता अलवेनियम ने संकटग्रस्त से स्वीकार किया कि – "हमने प्रेम और मित्रता जैसे तत्त्वों को तलाशा नहीं – सारी देवियाँ केवल हमारी वासनाओं के तृप्ति कुंड हैं ।"(१२) देवताओं की राजनीति काफी गहरी थी । राजनीति के खेल देवताओं के समय से चले आ रहे हैं ।

उपन्यासकार ने अनेक सभ्यताओं में व्याप्त राजनीति के पश्चात भूतकाल के प्रश्नों को पलटाकर इतिहास में फैली मुगल परिवार के शासनकर्ता की राजनीति पर प्रकाश डाला है । औरंगजेब और उसकी बहन के द्वारा शाहजहाँ और दारा का नामोनिशान मिटा देना । धर्मान्धों का साथ लेकर अपने भाई दारा को ही कत्ल करवा देता है । औरंगजेब ने शिबली और चिरती मुस्लीमलीग के दरम्यान मतभेद शुरू किए । राजसिंहासन पाने के लिए प्रजा पर अत्याचार जुल्म ढाए । राजनीति के दांवपेच सदियों से चले आ रहे हैं । उपन्यासकार की गहन दृष्टि ने इतिहासकारों की कतार लगादी है और प्रत्येक इतिहासकार से सदियों का ब्यौरा माँगते हैं । उस समय की परिस्थितियों का ब्यौरा माँगते हैं । औरंगजेब के द्वारा हिन्दुओं पर ढाए गए तमाम जुल्मों, सितमों, क्रूरताओं, अत्याचारों का हिसाब माँगते हैं ।

लेखक की अन्य दीर्घ दृष्टिने बाबरी मस्जिद और अयोध्याकांड के हादसे को उभारा है । इतिहासकारों से उस स्थान की परख माँगी है कि अयोध्या में सर्वप्रथम क्या था, बाबरी मस्जिद या राम मंदिर । भाजपा ने अपनी घिनौनी राजनीति में धर्म के मुद्दे उठाकर प्रजा की सहानुभुति प्राप्त की, अपनी सत्ता अपना सिंहासन खुरशी को सँभालने के लिए कितने इन्सानों के (खून की) बलि चढ़ाई । यह परंपरा मुगल शासनकाल से चली आ रही है ।

अमेरिका ने जापान पर भयंकर बमविस्फोट किए, क्यों ? मानव ने मानवजाति का हनन करने के लिए मानव बम्ब बनाकर मानवजाति को खत्म करने का प्रयास किया । एक और भारत पाक विभाजन की विडम्बना । अफगानिस्तान का गृह युद्ध समाप्त नहीं हुआ – जलालाबाद संधि बेकार हो गई । युगोस्लाविया बरबाद हो गया । हिन्दुस्तान में तो आये दिन खून खराबा हत्याएँ होती हैं । हिन्दुस्तान क्या वैश्विक अशांति से मनुष्य त्रस्त हो चुका है । सभी देशों में राज्यों का विभाजन माँगा जा रहा है ।

बंगाली अपना पाकिस्तान माँग रहे हैं । खुद पाकिस्तान में से कितने पाकिस्तान पैदा होंगे ? पंजाब के सराय भी अपना सूबा माँग रहे हैं । पुराने सिंधी अपना सिंधु देश बनाना चाहते हैं । जैसे यहाँ लोगों ने पंजाबी–उर्दू की लड़ाई छेड़ दी है, वैसे ही वहाँ सिंधी उर्दू की लड़ाई चल रही है और पख्तून अपना पख्तूनिस्तान चाहते हैं । अताउल्ला मेंगल आज़ाद बलूचिस्तान माँग रहा है और अपने मुहाज़िर भाई सिन्ध कराँची में अपना एक पाकिस्तान बनाना

चाहते हैं – सुना है कि वहाँ हिन्दुस्तान में हिन्दू भी हिन्दुस्तानियों से अपना हिन्दूत्ववादी पाकिस्तान माँग रहे हैं – लंका में तमिल अपना लंका अलग करना चाहते हैं ।"(१३)

(ड) सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिस्थिति

स्वातंत्र्योत्तर कालीन उपन्यासों की शृंखला में कमलेश्वर ने सामाजिक उपन्यासों की पृष्ठभूमि में नारी की विषमता को केन्द्रस्थ बिंदु बनाया है । 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' की तारा, 'तीसरा आदमी' की नायिका चित्रा, 'डाक बंगला' उपन्यास की नायिका इरा, 'काली आँधी' उपन्यास की नायिका मालती जो एक ऐसा नारी पात्र है जो अपनी मूलभूत जवाबदारियों से मुँह फेर लेती है । सफलता का नशा ऐसा लग जाता है कि पीछे मुड़कर देखने की कोशिश ही नहीं की । उनका आखरी नया उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' में तो वैश्विक नफरत की आँधी को उभारा है ।

लेखक की कलम दाद माँग लेती है, उन्होंने नारी के विविध रूपों को व्यक्त किया है । नारी अनेक रिश्तों से जुड़ी हुई है, कहीं वह पत्नी है, माँ है, बहन है, बेटी है । जिसका रूप परिस्थितियों के अनुसार बदलता है । भारतीय संस्कृति में नारी की अदम्य सहनशक्ति, धीरज, रीति–नीति की परंपराओं से बँधी हुई बताया है । आधुनिक युग में जहाँ अन्य सभी क्षेत्रों में परिवर्तन आया

है वहाँ इन्सान में क्यों न आए ? कमलेश्वर ने 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' की 'तारा' उसकी माँ रम्मी में परिस्थितिजन्य परिवर्तन आया है । 'तीसरा आदमी' को चित्रा, 'डाक बंगला' की इरा में भी वही परिस्थितिजन्य परिवर्तन है । 'कालीआँधी' की मालती में परिवर्तन के कारण 'सफलता' उँची अभिलाषाएँ जिजीविषाएँ है ।

'समूद्र में खोया हुआ आदमी' की तारा विषम परिस्थितियों से घिरी हुई माँ को साथ देने से अधिक उसका फायदा लाभ कैसे उठाया जाए वह सोचती है माँ का ममत्व, अपनापन प्रेम वह भूल चूकी है, हाँलाकि वह खुद माँ बनी है । भारतीय परंपरा बुजुर्गों का आदर भाव सिखाती है पर आधुनिक युग के परिवर्तन से वे संस्कार न जाने कहाँ गायब हो गए ।

'तीसरा आदमी' की चित्रा शंकाशील पति के होने से उसका पत्नीत्व प्रेम गहन अंधकार में खो जाता है । आधुनिक युग अनेक संक्रांति पार करके आया है । युग परिवर्तन होने से अच्छे बुरे दोनों परिवर्तन आते हैं, जिससे सामाजिक जीवन में अनेक विषमताएँ मुंह-बाँहे खड़ी हैं, इसी वजूद से दाम्पत्य जीवन में विषमताएँ अधिक बढ़ती रहती हैं । विषमताओं के कारण ही एवं दाम्पत्य जीवन में किसी अन्य 'तीसरे आदमी' का प्रवेश साधारण बात बन गई है । अधिक महत्त्वाकांक्षी बनना भी एक अभिशाप है, 'तीसरा आदमी' उपन्यास का 'मैं' नरेश अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी है और इसी वज़ह वह अपना तबादला दिल्ली करवा देता है । जहाँ वह अपने मित्र भाई सुमन एक कमरे में आकर

रहता है । वहीं से दाम्पत्य जीवन का विघटन शुरू हो जाता है । शंकाशील स्वभाव, विषमताएँ और विश्वास का अभाव जिस दाम्पत्य जीवन में होगा वहाँ दाम्पत्यजीवन में दरार पड़ जाती है जो कभी भी मरी नहीं जा सकती है ।

कमलेश्वर ने चित्रा नायिका के माध्यम से आज की आधुनिक नारी का रूप चित्रित किया है । विषम से विषम परिस्थितियों में भी चित्रा अपना कर्तव्य निभाती है । अपने बच्चे की सही तरह से परवरिश करती है । टूटे हुए, खोखले रिश्तों को जोड़ने की कोशिश नहीं करती । यहाँ तक परिस्थितियोंवश वह अपने पति के समक्ष घुँटने नहीं टेकती । यही चित्रा की सर्वोत्तम विशेषता है । नारी की अदम्य शक्ति के कारण है । आज के स्वार्थी युग में नारी अपने आप को कहीं संभाल पाई है तो कहीं वह परवश भी हो जाती है ।

'डाकबंगला' की नायिका इरा जो स्छच्छंद प्रेम में विश्वास रखती है साथ-साथ प्रेम के अभाव से जीवन को सुना समझती है । अपने इसी स्वभाव के कारण वह समाज की अनेक ठोकरें खाती है । पुरुषप्रधान समाज में पुरुष नारी की बेबसी का लाभ उठाने में कहीं भी कसर छोड़ता नहीं है । नारी सभी रिश्तों से, मौकों पर उसे छला जाता है । उसकी बेबसी का, विषमताओं के दायरों में घिरी हुई होने से कदम-कदम पर पुरुषों द्वारा कुचली गई है । 'डाक बंगला' की इरा जो सिर्फ अपने जीवन में प्रेम की अभिलाषा रखती है लेकिन किस्मत की मारी इरा को वह अंतरात्मा निहित सच्चा प्रेम नहीं मिलता है । जहाँ इसे प्रेम मिलता है वहाँ अनमेल विवाह की समस्या आ जाती है । अपने

पिता की उम्र के बूढे डॉ. को पति के रूप में स्वीकार नहीं पाती है । जीवन भी एक समझौता ही था पर उस समझौते में निहित निश्चल प्रेम को वह समझ नहीं पाती है ।

आधुनिक युग में नारी के जीवन में सिर्फ एक पुरुष पतिव्रता नारी का विचार कहीं से निकल गया है । आज की नारी 'डाक बंगला' की नायिका इरा के जीवन में चार पुरुष आते हैं, फिर भी वह जीवन के दीर्घ सफर में अकेली ही रह जाती है ।

'काली आँधी' की नायिका मालती उसके पिता प्रतापनारायण बेरिस्टर थे पति जग्गीबाबू खजुराहो के होटल व्यवसाय से जुड़े हुए थे, पर सफलता का नशा उसे ऐसा लग जाता है कि एक के पश्चात एक अनेक चुनावों को जीतती हुई प्रधानमंत्री बन जाती है । उस मंजिल पर पहुँचने के लिए मालती अपने सभी रिश्तों को भूल जाती है । एक पत्नी की जवाबदारियाँ उससे अधिक एक माँ का कर्तव्य वह चूक जाती है । खुद की बच्ची हॉस्टेल में पढ़ती है और अनाथाश्रम का उद्धाटन करने जाती है । महिलाओं की मिटिंग में नारी को उसके कर्तव्यों से अवगत कराती है, खुद कर्तव्यों से विमुख रहती है ।

युग परिवर्तन से संस्कृति में भी बदलाव आता जाता है । मालती बड़ी तेज आधुनिक नारी है । उसे यह ज्ञात है कि किस का किस वख्त इस्तेमाल करना है, किस की दुखती नस कब दबानी है ।

चुनावों को धर्म की बुनियाद पर जीतने की कोशिश करती है अपने प्यादे लल्लूलाल से हिन्दू धर्म के वॉट पाने के लिए रामायण का पाठ रखवाती है, तो मुसलमानों के लिए मुशायरा रखवाती है । आज की आधुनिक नारी इन्सानों के जजबातों को भुला देने में जरा भी संकोच का अनुभव नहीं करती है ।

'कितने पाकिस्तान' उपन्यास कमलेश्वर का सर्वाधिक प्रख्यात उपन्यास है । उपन्यास में लेखक ने पाकिस्तान को नफरत के रूप में देखा है उपन्यास के कथानक का नायक 'वक्त' समय है । और सहायक अदीब-चित्रकार है । वैश्विक नफरत का सिलसिला कहाँ से शुरू हुआ - देवताओं और मनुष्य-इन्सान के बीच में जो स्वार्थपरकता है, वहीं से यह नफरत शुरू होती है, जो अनेक सभ्यताओं को अपने भीतर संकलित कर देती है । नफरत की आँधी ने प्रेम के स्त्रोत को उखाड़ कर न जाने कहाँ फेंक दिया कि आज संपूर्ण विश्व प्रेम के अभाव से दुःखी हो रहा है । नफरत और स्वार्थपरता ने देशों को एक दूसरे का दुश्मन बना दिया । भारत-पाक विभाजन हुआ जिसमें सिर्फ सीमाओं का विभाजन नहीं हुआ, अपितु नारी की इज्जत का विभाजन हुआ । नारी बेबस बिकनेवाली चीज मात्र बनकर रह गई । जहाँ बुटासिंह जैसे मनुष्य है, जो प्रेम की महत्ता समझते हैं और बेबस नारी को सहारा देकर समाज में उसे सही अधिकार देने की कोशिश करते हैं । साथ-साथ बुटासिंह के भाइयों का वैचारिक स्तर कितना गिरा हुआ है अपने भाई ब्याह करने से इनकार करते हैं, जिससे ज़मीन में वह अपना अधिकार न माँगे उसे अधिकार से वंचित करने पर

आमादा थे । रिश्ते स्वार्थों की खोखली बुनियाद पर टिके हैं जो कभी भी किसी भी समय में धराशायी हो सकते हैं ।

भारतीय धरोहर सहिष्णुता कहीं खो गई है, जहाँ असहिष्णुता का साम्राज्य बढता गया है । इन्सान ने अपनी तबाही मृत्यु अपने हाथों से बनाई – मानवीय बम्ब बनाकर । अपनी इन्सानियत का ही वह दुश्मन बन गया – गुनहगार बन गया ।

प्रत्येक देश अपना आधिपत्य बढ़ाना चाहता है, अपना वर्चस्व अन्य देशों पर ज़माना चाहता है । अमेरिका नागासाकि और हिरोशिमा पर बम्ब विस्फोट कर मानवीय आक्रांता बन गया । उसके पश्चात सद्दाम हुसेन के साथ इरान–इराक पर हमला कर हज़ारों इन्सानों को बेघर, बेरिश्तों, बेसरनजाम किया । आखिर क्यों ? सरहदें बढ़ाने से वैश्विक शांति नहीं मिलती है ।

कमलेश्वर ने 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में जिन्ना का पाकिस्तान बनाने का प्रस्ताव, जवाहर नहेरू की राज सिंहसान की लालसा गांधीजी का त्याग, सरदार की परोक्ष सेवाभावना–सद्विचार दृष्टिगत करवाए हैं । आज संपूर्ण विश्व में चित्कार है, एक ही आवाज़ है, चीखों की, दर्द की, पीड़ा की । चारों ओर से इन्सान की इन्सानियत पर उसके अधिकारों पर प्रहार पर प्रहार हो रहे हैं । मुगलों के शासनकर्ता ने खोखले संबंधो की धरोहर दी औरंगजेब की कूट नीति और दारा का मानवता सभर प्रेम, अपनापन, आत्मीयता के नाम पर

क्रूरता पाशविकता भरी मृत्यु उसे मिली । कहाँ गया भाईचारा ? मानवता ? धर्म के नाम पर भाई को कत्ल कर दिया, क्या यही इन्सानियत की (तवारिख है) सिला है । कमलेश्वर ने उपन्यास का प्रारंभ वैश्विक सभ्यता संस्कृति देवताओं से लेकर आज की सुलगती हुई समस्याओं में पीसते हुए मनुष्य की करूण दास्तान को उभारा है । मनुष्य ने प्रेम और मित्रता का अर्जन किया, संस्कृति बदलती गई, समय बदलता गया, युग बदला, उस प्रेम और मित्रता के मायने ही बदल गए ।

युग परिवर्तन से आमूल परिवर्तन हो जाता है, इन्सान की वैचारिकता और मानसिकता में बदलाव आता गया । उसकी वैचारिक शक्ति में स्वार्थ की संकीर्णता ने उसके मनोमस्तिष्क का ही परिवर्तन कर दिया ।

(२) स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

(अ) समुद्र में खोया हुआ आदमी

कमलेश्वर के प्रायः सभी उपन्यासों की वस्तु निम्न मध्यवर्गीय समाज के सामाजिक, राजनीतिक, तथा वैयक्तिक जीवन से सम्बन्ध है । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'सुबह दोपहर शाम' और 'रेगिस्तान' ये चारों उपन्यास स्वाधीनता की पृष्ठभूमि पर लिखे गए हैं । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' प्रथम उपन्यास से कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा का शुभारंभ हुआ । 'तीसरा आदमी', 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', 'कस्बों से शुरू होती हुई महानगरीय जीवन की विषमताओं का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती है । लेखक ने 'लौटे हुए मुसाफिर', 'तीसरा आदमी', 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' जिनके मुख्य पात्र अनेक स्वप्नों को साकार करते कस्बे से महानगरीय जीवन की ओर उन्मुख होते है । उपर्युक्त उपन्यासों में "लेखक ने बड़े शहरों की विषम परिस्थितियों से संत्रस्त व्यक्ति को कस्बे की ओर लौटते हुए दिखाने का प्रयास किया है । वस्तुतः इन तीनों उपन्यासों में व्यक्ति अधिक संकट के कारण कस्बे के सहज जीवन को अधिक उपयुक्त समझते हैं, और बड़े शहरों के अस्त व्यस्त जीवन को अपनी स्थितियों के अनुकूल नहीं पाते ।" (१४)

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' उपन्यास की कथाभूमि जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करती है । उनके उपन्यास की कथाभूमि स्थितियों और पात्रों के माध्यम से विश्वसनीय लगती है । उपन्यास का परिवेश वस्तु के अनुकूल है, जिससे उपन्यास की सभी विशेषताएँ अपने आप उभरकर सामने आ जाती हैं । कमलेश्वर के लघु उपन्यासों में 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' विशेष रूप से जीवन के यथार्थ की दृष्टि से एक सफल उपन्यास है । उसके निर्माता मानव के स्वभाव की तरह हमेशा जटिल, भिन्नमुखी एवम् दुखद दिखाई देता है । मानव सहज ही उच्छृंखल, स्वार्थी एवम् सत्ता लोलुप लोभी है । आंतरिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उसे इकट्ठा होकर रहना पड़ता है तो उसे अपनों को ध्यान में लेना पड़ता है, और अपने अनेकों वैयक्तिक कामनाओं पर अंकुश रखना पड़ता है । अपनी स्वार्थपूर्ति के साथ उसे इस तरह सामाजिक व्यवस्था की परीक्षा भी करनी पड़ती है ।"(१५)

आज के युग में प्रत्येक इन्सान अपना स्वार्थ सिद्धि में रचा-पचा है । रिश्तों के मायने बदल गए हैं । परिस्थितियों का दास बना मनुष्य कब कहाँ और कितना खोता ही जाता हैं । रिश्तों की रूहों को बदलते देर कहाँ लगती है ? और मनुष्य का स्थान भी कब कहाँ कैसे बदल जाए किसे ज्ञात है ? और स्थान परिवेश भी बदल जाते है । उन दिखावी संबंधों में जान नहीं होती । उन खोखले रिश्तों में प्रेम का रंग नहीं होता है । जो माँ अपनी बेटी के लिए,

नाती के लिए ममता, प्रेम और वात्सल्य की प्रतिमूर्ति बनी है, माँ को अपनी स्वार्थ सिद्धि का साधन बनाने में हिचकिचाहट नहीं है ।

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' निम्न मध्यवर्गीय परिवार के विघटन की कथा है । इस कथा के माध्यम से उस घुटते, परेशान होते और टूटकर बिखरते परिवार का चित्र प्रस्तुत करने और उसके माध्यम से वर्तमान समाज में बदलते हुए व्यक्तिगत पारिवारिक तथा सामाजिक संबंधों को प्रत्यक्ष रूप में लेखक ने रखने का अथक् प्रयास किया है । लेखक ने खासतौर से निम्न मध्यवर्गीय के उँचे स्वप्न एवं कस्बे से महानगर के समान ही आज का समाज है, जिसमें रोजमर्रा की अपनी आर्थिक परिस्थितियों से संत्रस्त आज का आदमी खो गया है, डूब गया है । वह कब लौटकर आएगा ? आएगा भी या नहीं पता नहीं ।" यह उपन्यास निम्न मध्यवर्गीय समाज और निम्न मध्यवर्गीय चरित्रों की जीती जागती तस्वीर है । मानव-जीवन सुख-दुःख की समानान्तर कथा है, किन्तु इस उपन्यास में मध्य और निम्न मध्यवर्ग के अधिकांश दुखों को बड़े यथार्थ और मार्मिक ढंग से व्याप्त किया गया है ।

उपन्यास की कथा बड़ी हृदयस्पर्शी है । इस उपन्यास में एक निम्न मध्यवर्गीय वृद्ध रिटायर्ड श्यामलाल की कथा है । उषा प्रियंवदा की 'वापसी' कहानी का मुख्य पात्र गजाधर बाबू, जो रिटायर्ड पेन्सन याफ्ता है । उसकी कथा के माध्यम से संवेदनशीलता से युग परिवर्तन में झोले खाते हुए इन्सान के एक रूप को चित्रित किया गया है, तो कमलेश्वर ने महानगरीय जीवन में

पिसते श्यामलाल का जीवन चित्र प्रस्तुत किया है । श्यामलाल कर्ज और बेरोज़गारी से टूट चुका है । दिल्ली की चकाचौंध में श्यामलाल ने सपने संजोए कि इसी नगरी में रहकर उसके जीवन–उनके परिवार में रोशनी फैल जाएगी । प्रगति के मार्ग पर प्रशस्त श्यामलाल ने आशाओं की दीपशिखा जलाई थी, प्रगति की राह की ओर उन्मुख हुए थे । श्यामलाल रिटायर्ड होते हुए भी प्राइवेट कंपनी में काम करता था, उसके शेठ ने दिल्ली तबादला कर दिया था । श्यामलाल खुश था अपने सपनों में कितने ही रंग उसने भर दिए थे । किन्तु नियति भी क्रूर हो जाती है – यह सत्य है – इन्सान चाहता कुछ और है और होता कुछ और है । श्यामलाल की स्थिति भी ऐसी ही हो जाती है, उस पर विपत्तियों के बादल टूट पडते हैं, गर्दिशी परिस्थितियाँ उसे घेर लेती हैं । श्यामलाल जहाँ नौकरी करता था, उस गोडाउन से सामान की चोरी हो जाती है, श्यामलाल को नौकरी से हाथ धोना पड़ता है । परिवार की आर्थिक स्थिति दयनीय होती जाती है । "आर्थिक अभाव में कलह–क्लेश और आलोचना इत्यादि का आना तो स्वाभाविक है, किंतु इन सबके साथ मध्यवर्गीय जीवन में ममता दया और क्षमा आदि मानवीय गुणों का स्रोत पूर्णतया शुष्क हो जाता है, ऐसा नहीं प्रेम और ममता का अविरत प्रवाह भी गतिमान रहता है ।"(१७) श्यामलाल को अपनी बेटी तारा के लिए अतिशय प्रेम है । एवं पिता का कर्तव्य भी है कि अपने परिवार को आर्थिक कवच से सुरक्षित रखे, खासतौर से अपनी जवान बेटियों को किंतु श्यामलाल की प्रबल सुरक्षा कवच देने की चाहे

कितनी ही अभिलाषा क्यों न हो किंतु वह बेबस और लाचार है । हिन्दी साहित्य के उपन्यासकार प्रेमचंद ने 'निर्मला' उपन्यास में कहा है – "मनुष्य परिस्थितियों का दास है ।"(१८) श्यामलाल की स्थिति भी वैसी ही हो जाती है । नौबत यहाँ तक आ जाती है कि पेन्सन याफ्ता श्यामलाल अपनी बेटी तारा को चालीस रुपये माहवार में हरवंश के साथ काम करने की इज़ाजत दे देते हैं – "जैसे घर को सिर्फ चाली रुपये माहवार की जरूरत थी । (१९) "उपन्यासकार कमलेश्वर ने बदलते हुए सामाजिक परिवेश की प्रामाणिक स्थितियों की सच्चाई अविरल रूप में प्रस्तुत किया है । इस उपन्यास में श्यामलाल और तारा के माध्यम से बदलती हुई नैतिक मान्यताओं को प्रस्तुत किया गया है । श्यामलाल का मात्र चालीस रुपये में अपनी बेटी को हरवंश के वहाँ काम करने के लिए भेजना मात्र दिल्ली के ही नहीं, भारत के किसी भी निम्न मध्यवर्गीय परिवार की यथार्थ स्थिति को अनावृत करता है ।"(२०) "परिस्थितियों के साथ मनुष्य की आन्तरिक प्रवृत्तियाँ उभरती हैं और मनुष्य विवशसा उनके साथ बहता जाता है ।"(२१) वृद्ध और बेबस पेन्सन याफ्ता श्यामलाल को प्रतीत होता है कि सिर्फ – "वह फालतू चीज की तरह रह गया है , जिसे फेंका नहीं जा सकता, सिर्फ बर्दाश्त किया जाता है । जिसे फेंका भी नहीं जाता, सिर्फ होने को महसूस किया जाता है । (२२) आर्थिक अभाव के कारण श्यामलाल मजबूर है । वह वृद्ध विवश पिता अपनी बेटी का विवाह भी नहीं करवा पाता । "दहेज प्रथा के कारण और कई समस्याओं का

प्रादुर्भाव होता है । अच्छा दहेज न जुटा पाने के कारण जाने कितनी लड़कियाँ, अविवाहित रह जाती हैं या मनोवांछित व्यक्ति से विवाह नहीं कर पातीं । ऐसी नवयुवतियों को छोटी-मोटी नौकरियाँ करके अपना जीवनयापन करना पड़ता है, या जीवन भर दु:ख की ज्वाला में जलना पड़ता है । नौकरी करने पर इन युवतियों को - श्रम बेचने के साथ साथ अपनी इज्जत भी बेचनी पड़ती है ।"(२३) श्यामलाल के परिवार को आमदनी की आवश्यकता थी, जिसका परिणाम यह आया कि तारा गर्भवती हो जाती है । श्यामलाल की पत्नी रम्मी तारा का गर्भ गिराने के लिए पड़ोसिन से सलाह मशवरा करती है, उससे जानकारी प्राप्त करना अनिवार्य हो जाता है पड़ोसिन कहती है - "आप परेशान न हों, जगह मैं आपको बता दूँगी । हमारी बुआ की कुंवारी लड़की भी उसका सारा काम हमने वहीं से करवाया था ।"(२४) कुंवारी लड़कियों का गर्भवती बनना यह निम्न मध्यवर्गीय परिवार की बेबसी का नतीजा है । यह घटना सिर्फ श्यामलाल के परिवार में उसकी बेटी के साथ ही नहीं घटित हुई, अपितु समूचे निम्न मध्यवर्गीय परिवारों की आर्थिक स्थिति का बयान है, उन मासूम लड़कियों भी नियति की क्रूरता है । जवान लड़कियाँ अपने माता-पिता अपने परिवार की कमज़ोर दयनीय स्थिति के आगे अपने घुटने टेक देती है ।

लेखक ने उपर्युक्त प्रसंग से ही घर की स्थिति का चित्र स्पष्ट किया है । श्यामलाल के परिवार की इज्जत हरवंश के द्वारा कलंकित तो हुई, परंतु हरवंश तारा को पत्नी के रूप में स्वीकार कर लेता है । उपन्यास में लेखक ने "नारी

की सतीत्व और देवीत्व की सीमा से निकालकर उसे इंसान के रूप में देखने–समझने का प्रयत्न किया है, यही कारण है कि हरवंश तारा को स्वीकार कर लेता है । विवाह पूर्व यौन–संबंध स्थापित करनेवाला प्रेमी हरवंश समाज के भय से तारा को छोड़कर भाग नहीं जाता । नैतिक मानदण्डों की उपेक्षा करता हुआ वह स्वच्छंद प्रेम करता है और तारा को पत्नी का स्थान अपने जीवन में देता है ।"(२५) श्यामलाल के वृद्धत्व ने एवं विषमताओं ने उसे बुरी तरह अपने शिकंजे में घेर लिया था । प्रतिदिन नई समस्याएँ मुँह फैलाए खड़ी हो जाती थीं । तारा के अलावा श्यामलाल को एक और छोटी लड़की एवं लड़का था ।

श्यामलाल का लड़का बिरेन, जो पढ़ाई में काफी तेज था, अपने घर की दयनीय परिस्थितियों से वह सहज ही वाकिफ था, वह कुछ बन जाना चाहता है, अतः वह हमेशा अपनी किताबों में ही उलझा रहता था । वह जल्द से जल्द अपने माँ–बाप को तकलीफों से मुक्त करना चाहता है । उसे यह अहसास बार–बार सताता है कि उसकी वज़ह से उसकी बहन समीरा भी पढ़ाई अधूरी रह जाती है । वह हमेशा अकेली बैठी सायों को देखती रहती – "जिनसे दिल को कोई बात न की जा सके, जिनके साथ सुख दुःख और अकेलापन बाँटा न जा सके, उन्हें सिवा परछाई से क्या समझा जाए ।"(२६) समीरा के साथ सिर्फ अकेलापन, उसका अपना अकेलापन न उसकी कोई सखी ही थी, ना ही मनोरंजन का कोई साधन और ना ही पढ़ाई । समीरा को अगर मिलती है तो

सिर्फ डाँट, गुस्सा सबका उसी पर उतरता है । मध्यवर्गीय नारी की स्थिति तो पुरुष की अपेक्षा और भी दयनीय है । सामाजिक दृष्टि से निम्न मध्यवर्गीय नारी उचित प्रेम और सम्मान के अभाव में मानसिक दबाव के अन्तर्गत रहती है । जीवन के अभावों ने मध्यवर्गीय पुरुष के स्वभाव में चिड़-चिड़ापन भर दिया है । इस दबाव को निम्न मध्यवर्गीय नारी को सहन करना पड़ रहा है, भले ही उसका स्वरूप पत्नी का बहन का अथवा माँ या बेटी का रहा हो ।"(२७) "बीरेन सब कुछ देखता है, सुनता है किंतु कुछ बोल नहीं पाता है । वह शिक्षित बनकर अपने परिवार की खुशहाली चाहता है । "बेकारी के कारण मध्यवर्गीय जीवन में अस्थिरता और असंतोष के कारण कुंठा उत्पन्न हो जाती है ।"(२८) परंतु श्यामलाल की दोनों संतानों के स्वभाव में सहजता और सरलता विद्यमान है । समीरा अत्यंत सीधी सरल और स्थितियों के अनुकूल ढल जाने वाली लड़की है । अपने भाई की पढ़ाई से खुश है, उसने अपने जीवन से एक प्रकार का समझौता ही कर लिया है, चाहे उसके हृदय में शिक्षा प्राप्ति की कितनी ही ललक क्यों न हो । "विषम आर्थिक परिस्थितियों के कारण मध्यवर्गीय परिवारों में शिक्षा अधूरी रह जाती है ।"(२९) "झूठा सच" में पुरी का परिवार ऐसा ही है । "वे कितना बोझ सम्हाल सकते थे । विद्या चाहे कितनी उत्तम वस्तु हो और पैसा केवल हाथ का मैल, परन्तु विद्या पैसे के बिना अप्राप्य रहती है ।"(३०) बीरेन अपनी शिक्षा के द्वारा अपनी आर्थिक विषमताओं से सदैव के लिए छुटकारा पाने के लिए प्रयत्नशील है । " भारतीय

समाज का मध्यवर्ग पैतृक संपत्ति के अभाव में पढ़-लिखकर नौकरी करके अपना जीवन निर्वाह करने का यत्न करता है । बीरेन के पड़ोस में रहती ममता बीरेन की ओर आकर्षित है, बीरेन के जीवन की दुरूहता इतनी अधिक है कि उसे अपनी सीमा का अहसास है । उसका लक्ष उसकी नज़र के समक्ष था, साथ-साथ उसकी लगन उसके उत्साह एवं बुलंद इरादों से ही वह नेवी के इम्तहान में उत्तीर्ण हो जाता है, और नेवी की नौकरी में लग जाता है । वीरेन प्रतिमाह अपनी तनख्वाह भेजता रहता है, जिससे परिवार का क्लेवर, रहन-सहन बदल गया था, जैसे रम्मी के बाल सफेद से काले हो गए - कलफ कर दिया, चहेरा खिलसा गया था । समीरा भी कॉलेज जाने लगी थी । "उपन्यास में जीवन-संघर्ष का चित्रण ही बेहतर ढंग से और बड़े पैमाने पर हुआ है, क्योंकि इसमें परिवार का प्रत्येक सदस्य अपने-अपने ढंग से सघर्ष में जुट जाता है तथा जिंदगी के अभावों में लड़ता हुआ, उसे किसी प्रकार थोड़े अंशों में ही सही बेहतर बनाकर जीने की कोशिश करता है ।"(३१) श्यामलाल की हिंमत भी खुल गई थी, जाली चेक द्वारा कबाड़ी माल का सौदा करके दलाली प्राप्त करना उन्हें आ गया था, धीरे-धीरे श्यामलाल को अनुभव हो रहा था कि वह कोई फालतू चीज...नहीं है । रुपयों में कितनी शक्ति है कि मानव के सोचने का अंदाज, उसकी शक्ति एवं रहन-सहन में धरती आसमान का फर्क आ जाता है । अभावों भरी जिंदगी से छुटकारा मिल जाता है । जीवन में उत्साह वर्धन होता है एवं उसकी सोच भी बदल जाती है । "मध्यवर्गीय

परिवारों में कमानेवाले पुरुष होते हैं, पुरुषों में भी सभी नहीं कमाते । जिसे नौकरी मिल जाती है, वही कमाता है, शेष लंबा परिवार उसकी आमदनी पर निर्भर रहता है । औरतें तो एक प्रकार से निष्क्रिय ही रहती हैं । कितनी भी औंरते परिवार में हों बस घर भीतर का सीमित कार्य वे देखती रहती हैं ।"(३२)

बीरेन की चिट्ठी आती है कि वह उत्तर-ध्रुव जाना चाहता है । उत्साहित बीरेन अमेरीकी समूह के साथ नई खोज के महान कार्य में उन्हें साथ देने में लग जाता है । उपन्यासकार ने बड़ी विशिष्टता से समुद्री सफर के चित्रों को शाब्दिक चित्रों में ढाल दिया है । वीरेन का ज़हाज समुद्री तूफानों से घिर जाता है । उसकी उँची अभिलाषा उसके साथ ही सिमट कर रह जाती है, वह ज़हाज पर से ही लापता हो जाता है । उपन्यासकार ने उपन्यास में आंतरिक संघर्ष और बाह्य संघर्ष दोनों संघर्षों को कलात्मक रूप से अंकित किया है । "श्यामलाल के परिवार या उसके सदस्यों के आंतरिक एवं बाह्य संघर्ष को पर्याप्त विस्तार और गहराई से चित्रित किया जा सका हो, और जो इतना प्रभावी भी हो जितना कि 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' ।"(३३) श्यामलाल के परिवार रूपी ज़हाज ने संपूर्ण जल समाधि ले ली । जहाँ बीरेन के उत्थान के साथ परिवार के सभी सदस्य जीना सीखने लगे, उसके लापता होने से पुनः सबने कंधे-डाल दिए । समीरा का कॉलेज बंद हो गया, जो परिवार बड़ी मुश्किल से अभावों भरी यातना से छूटा था, थोड़ी-बहुत खुशियाँ ईश्वर ने जो

उनके दामन में डाली थीं वह अनायास लुप्त हो गईं, सदैव के लिए अलविदा हो गईं । घर का चिराग बुझ गया । घर में मातम छा गया, एक ओर पुलिस की इन्कवायरी तो दूसरी ओर हलवाई से लिया हुआ कर्ज, तो तीसरी ओर घर की विकट परिस्थितियों से घिरा हुआ श्यामलाल । अब उसके परिवार का मनोबल टूट चुका था, बिरेन के खो जाने पर श्यामलाल का परिवार, समुद्र रूपी महानगर में डूबता जा रहा था ।

वख्त से बेहतर मरहम और कोई नहीं । वक़्त के साथ समझौता करने के लिए इन्सान मजबूर हो जाता है । प्रत्येक इन्सान समय के साथ ताल से ताल मिलाकर चले, तभी उसके जीवन का सफर सुख-शांति से गुजर सकता है । श्यामलाल और उसकी पत्नी रम्मी ने समय के साथ समझौता कर, ताल मिलाकर ही मार्ग को प्रशस्त करके बढ़ना सीख लिया । सरकार के पास से अच्छा मुआवज़ा लेने के लिए नेवी ऑफिस के चक्कर लगाने शुरू कर दिए । हरवंश ने अपने सास-ससुर दोनों को वीरेन का मुआवजा लेने के लिए मानसिक रूप से तैयार कर दिया था । "हरवंश श्यामलाल और रम्मी को वीरेन की मौत स्वीकार करवाने में सफल होता है, ताकि मुआवज़ा लेने में सफलता मिल सके । मुआवजे के बदले में बेटे की लाश पर मकान और बाकी भविष्य की तस्वीर बनाने की सलाह देता है ।"(३४) हरवंश के इशारों पर रम्मी कार्य किए जाती है । समीरा को नर्स के कोर्स के लिए होस्टेल में दाखिल कर देती है, दूसरी और श्यामलाल शहर से दूर फावड़ों की फैकटरी में नौकरी ढूँढ लेता है,

और वही अपना आवास बना देता है । श्यामलाल रूपी ज़हाज का कप्तान उसका बेटा वीरेन, समुद्र में खो जाने से उसका ज़हाज आर्थिक थपेड़ों की भयंकर चोटों से श्यामलाल का घर रूपी ज़हाज बिखर जाता है । ज़हाज के हिस्से रूपी परिवार के सदस्य अन्ततः समुद्र रूपी भीड़ में बिखर कर रह जाते हैं ।

उपन्यासकार ने लघु उपन्यास 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' में संबंधों के खोखलेपन को स्पष्ट करने की कोशिश की है । माँ-बाप और बेटी, पति-पत्नी सभी संबंध खोखले हैं ।

रम्मी का जीवन ही बदल गया था - "रम्मी के हाथ में हमेशा एक बस्ता रहता । उस बस्ते में बीरेन के खत, मनी ओर्डर की रसीदें, ट्रस्ट द्वारा समीरा के कोर्स के लिए दिए गए रुपयों की रसीदें, कागज और अर्जियों की प्रतिलिपियाँ वगैरह भरी रहतीं । वह हरवंश के कहे अनुसार जहां-जहां जरूरत पड़ती वहाँ-वहाँ धरना देने बैठ जाती ।"(३५) उपन्यास कार ने खोखले संबंधों को भी बखूबी उभारा है । संबंध चाहे पति-पत्नी का हो, माँ बेटे का हो या माँ और बेटी का, सभी अपने स्वार्थ की सिद्धि में लगे हैं । तारा अपनी माँ की विपदाओं का पूरा लाभ उठाती है, जैसे वह माँ न हो एक आया हो । तारा माँ को अपनेपन से कहती हैं - "अम्मा अब तुम यहाँ चली आओ....मेरे पास रहो, वहाँ अकेली पड़ी रहती हो, तो बराबर मन खटका बना रहता है ।"(३६) यह मानव समाज, जो सार्थक एवं सफल, मानव-जीवन के विषय में वे जो भी

कहना चाहते हैं, उसका विवरण स्वयं न प्रस्तुत करके उसे बड़ी ही कुशलता से पात्रों के माध्यम से व्यक्त कर देते हैं । 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' में लेखक ने महानगरीय जीवन को अंकित किया है, फिर भी वह महानगर की चमक-दमक से काफी दूर है ? बल्कि कहना चाहिए कि उसमें इसके अतिरिक्त सब हैं । भीड़, अकेलापन, कर्ज, बेरोज़गारी, मकानों की सीलन, पगड़ी, हत्याएँ, जवान लड़कियाँ और उनके पीछे भागती हुई कामुक नजरें । सच तो यह है कि कमलेश्वर ने जिस यथार्थ के धरातल पर दिल्ली महानगर का चित्र खींचा है वह बड़ा ही स्वाभाविक बन पड़ा है ।

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' बड़े शहर में रहनेवाले निम्न मध्यवर्गीय परिवार के विघटन की कथा है । यह कथा घुटते परेशान होकर टूटकर बिखरते परिवार का चित्र प्रस्तुत करती है और उसके माध्यम से वर्तमान समाज में बदलते हुए व्यक्तिगत पारिवारिक तथा सामाजिक संबंधों को प्रत्यक्ष रूप में रखने का प्रयास करती है । आज का मध्यवर्गीय व्यक्ति किस प्रकार अपनी अर्थवत्ता खोकर आधुनिक सभ्यता की भीड़ में महत्त्वहीन अंश के रूप में रूपान्तरित होता जा रहा है । उसका बड़ा ही यथार्थ चित्र इस उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है । इस स्थिति के विषय में एक लेखक के विचार द्रष्टव्य हैं - "आधुनिक मध्यवर्ग सामाजिक द्वन्द्वों, आर्थिक विषमताओं से उलझा हुआ है । अतृप्ति, असंतोष, अवसाद घुटन की बीच मध्यवर्ग जी रहा है । पुराने सामाजिक बंधनों के टूटने के परिणाम स्वरूप उत्पन्न सामाजिक अव्यवस्था और

नैतिक अराजकता की स्थिति ने मध्यवर्ग के सामान्य जीवन पर काफी दबाव ड़ाला है ।"(३७)

उपन्यास की कथा आज भी उतनी ही सार्थक है जितनी भी इसके लिखे जाने के समय रही होगी । उपन्यासकार ने बड़ी विशिष्टता से प्रतीकों के माध्यम से कथा को सजाया है । उपन्यास की प्रतीकात्मकता सजग हो उठी है- "समुद्र के सफर में प्राप्त विषमताओं को प्रस्तुत किया है । आज का मध्यवर्गीय व्यक्ति किस प्रकार अपनी अर्थवत्ता खोकर आधुनिक सभ्यता की भीड़ के एक महत्त्वहीन अंश में रूपान्तरित होता जा रहा है ।

(ब) डाक बंगला

कमलेश्वर ने 'डाक बंगला' उपन्यास में जीवन के यथार्थ का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह अन्य उपन्यासों से कई अर्थों और स्तरों में भिन्न है । 'डाक बंगला' के अलावा अनेक प्रायः सभी उपन्यासों में निम्न–मध्यवर्ग का बिखराव, पारिवारिक टूटन, आर्थिक दबाव के घेरों में पिसते हुए इन्सान का चित्रण किया गया है । अधिकांशतः आर्थिक विषमताओं से घिरा हुआ मध्यवर्ग ही केन्द्रबिंदु रहा है, परन्तु 'डाक बंगला' में आर्थिक समस्या दूसरी समस्याओं का आधार लेकर उद्घाटित हुई है, इसके माध्यम से नारी के दारूण असहाय जीवन और दयनीय परिस्थितियों को चित्रित किया गया है ।

'डाक बंगला' व्यक्ति के जीवन के आंतरिक और बाह्य दो स्तरों पर पर चलने की कहानी है । इस संदर्भ में एक लेखक का कथन द्रष्टव्य है – "उनका प्रस्तुत उपन्यास 'डाक बंगला' आधुनिक नारी जीवन की अनेक विसंगतियों को रेखांकित करता है । वासना की उद्दाम लहरों के समुद्र को अपने हृदय में संजोये हुए अनेक नारियाँ निरन्तर मानसिक व्यभिचार करते हुए भी तथाकथित शारीरिक पवित्रता को बरकरार रख पाती हैं, जबकि दूसरी ओर कुछ ऐसी नारियाँ भी होती हैं, जो मन से किसी एक की होने के बावजूद परिस्थितियाँ उन्हें अनेक की अंकशायिनी होने के लिए विवश करती हैं ।"(३८) इरा भी

अपने जीवन में आई हुई परिस्थितियों का समाना करती हुई तिल तिल मरती है ।

'डाक बंगला' की मुख्य नायिका इरा मातृहीना है, माँ की स्निग्ध ममता से वंचित इरा ने जीवन में सिर्फ दु:ख ही दु:ख देखे, और अपनी अद्‌भुत सहशक्ति से जीवन की यतानाएँ सहती जाती है । मातृहीना इरा अपने प्रथम प्रेम में हद से गुजरकर विमल को चाहती है । विमल के प्रति आकृष्ट नादान इरा समाज के सारे बंधन तोड़कर, पिता और अन्य सूत्रों से कटकर, समाज के नियमों के विपरीत ब्याह के पवित्र बंधनों को महत्त्वहीन समझकर, विमल के प्रति समर्पित हो जाती है । संपर्क सूत्रों कट जाने के पश्चात् वह जिन परिस्थितियों से गुजरती है, बिखरती है मोटे तौर पर कथा उनहीं स्थितियों का अंकन करती है । कथा का आरम्भ स्मृतियों से ही आरंभ होता है । इरा का मित्र तिलक काश्मीर यात्रा के एक प्रसंग को याद करता है, वहीं से कथा का प्रारंभ होता है । इरा तिलक को अपनी सारी गुजरी हुई जिंदगी का हाल कहती है । इरा बाह्य तौर से तिलक के साथ घनिष्ठ ताल्लुकात रखती है, किंतु आंतरिक तौर से काफी दूर..........।

बाह्य जीवन में इरा मेज़र सोलंकी से निकटता होते हुए भी अपने अतीत के दुस्वप्न को, अतीत की चोटों से तिलमिलाती हुई, बिखरी हुई, टूटी हुई इरा अपने मित्र तिलक के समक्ष ह्दय खोलकर अपने ह्दय की चोटों का दर्द बयान करती है । ''इरा आधुनिक काल की एक ऐसी नायिका है जिसके जीवन में

चार पुरुष आते हैं - विमल, बतरा, बूढ़ा डॉक्टर और मेज़र सोलंकी । परन्तु उसकी आत्मा हमेशा अपने प्रथम प्रेम विमल को ही तरसती है । कश्मीर यात्रा के दौरान लिदरवट के बँगले में इरा अपने सहयात्री व अन्तरंग मित्र तिलक को आधी रात बाद वीरान जंगल में ले जाकर राम कहानी सुनाती है । उसके जीवन के तीन पुरुषों की कहानी तिलक से कहती है । मेजर सोलंकी वाला अध्याय घटित होते हुए दिखाया है ।"(३९)

"इरा के जीवन में चार पुरुषों का प्रवेश होता है क्योंकि इरा की समग्र चेतना मानवीय संबंधों पर आधारित है । वह किसी को भी दुःखी नहीं देख सकती क्योंकि वह दूसरों के दुःख को अपना दुःख समझकर जीती है ।"(४०) - "पर तिलक । मेरी सबसे बड़ी मजबूरी यही थी कि जो भी आदमी मेरे निकट आया, उसमें सुन्दरता की कोई न कोई किरण मेरे लिए फूटती लगती थी । या तो उसका मन मुझे जीत लेता था, या तो उसके दुःख मुझे हार मानने को मजबूर करते थे, या उसका अपनापन मुझे मार देता था ।"(४१) इन्हीं कारणों से एवं उसके जीवन की मजबूरियों के कारण वह समर्पित होती गई - पहले विमल, बतरा और डॉक्टर चंद्रमोहन की ओर । वास्तविकता तो यह थी कि बतरा, डॉक्टर चंद्रमोहन और सोलंकी पर उसमें प्रेम से अधिक करुणा ही ज्यादा उपजी है । इरा सिर्फ विमल की ओर ही हृदय से समर्पित थी - "वैसे तो प्रेम इस संसार का मूल तत्त्व है, किन्तु यह मानव जीवन का आवश्यक तत्त्व है । नारी और पुरुष भावुकता, कोमलता, प्रेम व तन्मयता पुरुष की

अपेक्षा अधिक होती है । प्रेम में त्याग का महत्त्वपूर्ण स्थान है । प्रेम सार्थक तभी होता है, जब प्रेमी के जीवन में बाधा न बने और उसे बाह्य तथा आंतरिक रूप से सबल बना सके । प्रेमिका अपने प्रेमी पर सर्वस्व न्यौछावर कर त्याग का आदर्श प्रस्तुत करना चाहती है । उसमें प्रतिदान की कोई इच्छा नहीं रहती । उसे प्रेमी पर अखंड विश्वास होता है ।"(४२) इरा अपने प्रथम प्रेम के कारण पिता का गृहत्याग कर विमल के साथ रहने लगती है । विमल नाटकों के प्रति अत्यंत आकृष्ट था किंतु नाटक के क्षेत्र में उसे सफलता न मिली । असफलता के अंधकार ने विमल को घेर लिया था और इसी वजह से वख्त के थपेड़ों ने इरा को समझौतावादी बना दिया, इरा ने अपनी परिस्थितियों का अहम् खंडित होता धीरे धीरे वह इतना शंकाशील हो गया कि इरा की जासूसी करने लगता है ।

इरा जब अपनी स्मृतियों की किताब के पन्ने पलटती है तब वह कहती है – "पर तिलक यह दुनिया कितनी कमीनी है, यहाँ औरत बगैर आदमी रह ही नहीं सकती । चाहे उसके साथ उसका पति हो, या भाई या बाप । कोई न भी हो तो नौकर हो, आदमी की छाया जरूर जाहिए ।"(४३)

विमल इरा को जीवन के सफर में अकेला छोड़कर चला जाता है । अकेली इरा बतरा की शरण लेती है, तो दूसरी ओर बतरा भी एकाकी जीवन गुजार रही थी । बतरा की पत्नी शीला उसे छोड़कर चली गई थी – "पत्नी गृहस्थी का मेरूदण्ड है । पत्नी बिना परिवार की कल्पना अधूरी है क्योंकि

लकड़ी तथा पत्थरों से घर नहीं बनता, केवल चार भितियाँ घर नहीं कहलातीं बल्कि पत्नी ही सच्चे परिवार का, घर का निर्माण करती है । गृह व्यवस्था का उत्तरदायित्व मुख्य रूप से पत्नी के ऊपर होता है, जिसे वह अपने पति के परामर्श से पूर्ण करती है । जिससे परिवार में परिवार की कल्पना साकार होती हैं । वह परिवार की सुख शान्ति का केन्द्र बिंदु होती हैं ।"(४४) बतरा का पत्नी बिना का जीवन उसे मारी-सा महसूस होता है - कमरे में अकेले चक्कर काटना और 'ओह गोड' कहना, एक विशिष्ट गज़ल गाना, उसकी आंतरिक परिवेश से कटे हुए तथा सहानुभूति के अभाव में व्यक्ति अंतर्मुखी हो जाता है । बाहरी संघर्ष एवं आंतरिक कुंठा व्यक्ति को शून्यता सी स्थिति में पहुँचा देती है । वह शून्यता की स्थिति उसे अलगतावादी बना देती है ।"(४५)

एक दिन अचानक बतरा अपनी पत्नी को लेकर आ जाता है । उसके आने से ही बतरा का जीवन हर्षोल्लास से मुस्कराता है । बतरा अपनी शीला के साथ बेहद खुश था, किंतु इरा बड़ी दुःखी हो जाती है, वह महसूस करती है कि वह सिर्फ किराये की पत्नी मात्र थी । समाज का नज़रिया ऐसी नारी के लिए बदल जाता है । "धीरे-धीरे उसके प्रति देखने का समाज का दृष्टिकोण बदल गया । वह अपना प्राचीन गौरव खोने लगी । किसी एक समय मंदिर के 'देवता' के स्थान पर अधिष्ठित नारी अब पुरुष के मनोरंजन का 'खिलौना' बनी । किसी काल में भारत के लिए अभिमान तथा गौरव की वस्तु होनेवाली भारत की नारी नारी जीवन की विडम्बना मात्र बन गई ।"(४६) इसी तरह

किसी की भी पत्नी बनते रहना इरा का पेशा बन गया था । बतरा भी पत्नी के आने के पश्चात विवश हो गया था, वह इरा से अपनी लाचारी व्यक्त करते हुए कहता है कि शीला रावलपिंडी में मेरी पड़ोसन थी हम एक दूसरे को बहुत चाहते थे, परंतु परिस्थितियों ने हमें एक दूसरे का न होने दिया । शीला पर अपनी माँ और बहनों की जिम्मेदारियाँ थीं, जो अभी भी वह ऐसा घिनौना कृत्य कर पूर्ण करती है ।" किन्तु अब वह मेरी पत्नी है ।"(४७) पचपन खंभे लाल दीवारें की नायिका सुष्मा पर अपने परिवार का दायित्व एवं पद की गरिमा उसे अपने परिवार से अलग कर देती है ।"(४८)

एक दिन शीला अनायास इरा को बतरा के शयनकक्ष में देख लेती है, स्त्री सहज इर्ष्या जाग उठती है । इस संघर्ष में इरा की हार हो जाती है । बतरा को इरा के प्रति प्रेम और लगाव है, इसी भावात्मक अनुभूति से प्रेरित होकर बतरा किसी न किसी प्रकार इरा की सहायता करना चाहता है, वह किसी और के जरिये इरा को डॉ. चंद्रमोहन के यहाँ आया की नौकरी दिला देता है ।

डॉ. चंद्रमोहन के दो औलादें थीं, इरा वहीं चली जाती है – "वैसे देखा जाए तो प्रेम नारी के जीवन का स्थायी भाव है । उसके विविध रूपों में सिर्फ प्रेम का आलम्बन बदलता जाता है । जैसे कि कन्या के रूप में माता–पिता से प्रेम करती है, पत्नी बनकर पति की प्रेयसी बन जाती है माता के रूप में उसके प्रेम का स्त्रोत बच्चों की ओर बहता है । " मनुष्य की परिस्थितियों के अनुरूप व्यक्तियों के प्रेम के आलम्बन भी बदलते रहते हैं । डॉ. चंद्रमोहन के बच्चे

बहुत छोटे तो न थे, फिर भी बच्चों की अपेक्षा चंद्रमोहन को ही अधिक आवश्यकता थी । इरा अपनी परिस्थितियों से लाचार होकर अपनी अभिलाषाओं की चिता जलाकर चंद्रमोहन को स्वीकार कर लेती है । कहाँ इरा का रूपसौंदर्य उसके यौवन की आभा, तो दूसरी और बिना दाँतोंवाला बूढ़ा चंद्रमोहन ? प्रेमचंद के 'निर्मला' उपन्यास में 'बाँके सवार बूढ़े ट्टू पर सवार होना कब पसंद करेगा चाहे उसे पैदल ही क्यों न चलना पड़े ?''(४९) अनेक विषमताओं से घिरी हुई इरा निर्मला की तरह अपने जीवन से समझौता करती हुई डॉ. चंद्रमोहन को स्वीकार करती है । ब्याह के पश्चात डॉ. चंद्रमोहन इरा को हमेशा खुश रखने की कोशिश करता रहता है । कभी इरा के लिए आसामी पोषाक 'मेखला' खरीद लाता, तो कभी वेणी खरीद लाता, लेकिन – ''रात में जब डॉक्टर ने मेरी कमर में हाथ डाला था, मुझे लगा था कोई मरा हुआ साँप मेरी कमर में लिपट गया हो, और जब पहली बार काँपते हुए उसने मुझे चूमा था तो मैं गिजगिजाहट से मर गई थी...जैसे किसी मेढक पर मेरे ओंठ पड़ गए हो ।''(५१) डॉ. चंद्रमोहन अथक प्रयत्न करता कि इरा हमेशा प्रसन्न रहे, कभी कभार वह इरा को घुमाने भी ले जाता, अपनी उम्र के कारण वह थक भी जाता फिर भी इरा को साथ देता चलता, फिर भी वह इरा के जीवन में अपना मुक्कमल स्थान ज़मा पाने में अपने आपको असमर्थ पाता है । और इरा डॉ. चंद्रमोहन के प्रेम का प्रतिभाव दे नहीं पाती है । एक दिन वह यह कह कर जाती है कि वह डबरूगढ़ जा रही है, किंतु वह सीधी अपनी सखी के वहाँ

नागपुर चली जाती है । इरा डॉक्टर को भूल जाना चाहती है, पर भूल नहीं पाती । आसाम में फैले विद्रोहियों और बलवों की खबरें न चाहते हुए भी सुनती थी । अभी कुछ दिन बिते थे कि अनायास एक तारा आया । जिसमें लिखा था – डॉ. को गोली लगने से घायल हो गए हैं और फौरन आइए ।"(५१) उफनती घोर धृणा के पश्चात भी वह अपने आपको रोक नहीं पाती और औरत अपने घर की ओर चल पड़ती है । अस्पताल में डॉ. चंद्रमोहन को देखकर उसकी आँखों में आँसू गंगा–जमना की तरह अविरत बहने लगते हैं । उसका मरना इरा से देखा नहीं जाता था । "अब जैसा तुम चाहो ।" इरा की अन्तर्आत्मा उसकी जान बचाने के लिए ईश्वर से दुआएँ करनी लगी, किंतु अफसोस कोई दुआ काम न आई । डॉ. की बहन शिलोंग से आ चुकी थी जो बच्चों को अपने साथ शिलोंग ले जाने का फैसला कर चुकी थी । बहन ने बड़े प्रेम से सांत्वना देते हुए कहा था – "तुम्हारा घर अब भी है जब मन चाहे तब शिलोंग चली आना । यह बच्चे तुम्हारे ही हैं, जब चाहोगी इन्हें तुम्हारे पास दस पाँच रोज के लिए भेज दूँगी । यह मत समझना भाभी कि भइया के न रहने से सारे रिश्ते टूट गए ।"(५२) इरा ने जीवन में प्रथम बार भाभी का संबोधन, 'घर' आदि के शब्द सुने । इरा समय के थपेड़ों की मार से जीवन के रिश्तों और संबंधों को भूल चुकी थी । डॉ. के न रहने से उसे जीवन में कमी–सी महसूस हो रही थी , डॉ. ने १५(प्रन्द्रह) हजार उसके लिए रखे थे ताकि उसकी मृत्यु के पश्चात् इरा को जीवन में कोई दिक्कतों का सामना न

करना पड़े । उसने इरा को हृदय की गहराइयों से चाहा था, जब तक व्यक्ति जीवित होता है, तब तक स्नेहियों का कोई मोल नहीं होता पर मृत्यु की आगोश में समा जाने के पश्चात ही रिश्तों के मायने सही रूप से ज्ञात होते हैं...."सिर्फ उसके शब्द उसके जीवन से जुड़ गए हैं । वहाँ से वह बहुत दूर निकल जाना चाहती है । वह कश्मीर की घनी वीरान घाटियों में घूमती डॉ. चंद्रमोहन की आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित कर रही थी । इरा ने अपने प्रथम प्रेम विमल से अनेक उम्मीदें रखी थीं, उसीने उसे धोखा दिया, तो डॉ. चंद्रमोहन को इरा ने खूब सताया, डॉ इरा को पसंद न था, उसने सिर्फ अपने समय से, परिस्थिति से समझौता मात्र किया था । आज उसे अहसास हो रहा था कि वह कितनी गलत है । अब तक वह सिर्फ बाह्य सौंदर्य को ही प्रधानता देती थी, पर डॉ. चंद्रमोहन की मृत्यु ने उसे यह अहसास दिलाया कि प्रेम शारीरिक सुख मात्र नहीं है, वह आत्मिक प्रेम है । मरने के पूर्व भी वह इरा भविष्य के प्रति चिंतित था और इरा के लिए रुपये छोड़कर जाता है । इरा डॉ. के प्रेम की गहराई उसके प्रेम की गरिमा को समझ न पाई, उसकी अन्तर्रात्मा उसे कचोटती है । जीवन के पंथ में उसे जो अपने हमदर्द और हमसफर मिले उनहीं लोगों ने उसे लूटा उसे निराधार बना दिया और जिससे वह धृणा करती रही, उसने उसे एक ठोस आधार प्रदान किया....विधि की कैसी विचित्रता ।

इरा के जीवन में वापिस एक मोड़ आता है, उस मोड़ पर उसे मेज़र सोलंकी मिलता   है । उसमें पीछा छुड़ाने के के लिए वह 'डाक बंगला'

छोडकर आडू में रहने आती है । सोलंकी इरा को ढूँढ़ता हुआ वहाँ भी आ पहुँचता है, न चाहते हुए भी मेज़र सोलंकी उसकी वीरान जिंदगी में चुपके से पदार्पण करता है । वह अपने जीवन में प्रेम का छोटा सा घरौंदा बनाना चाहती थी, उसकी सुषुप्त अभिलाषा जाग्रत हो जाती है और अपने जीवन को मेज़र सोलंकी के साथ जी लेना चाहती है ।

वह तिलक को अपनी बेरहम जिंदगी का दर्द बयान करते कहती है - तिलक - "पहाड़ी रास्तों पर चलते-चलते गंदी दुकान की चाय भी पीली पड़ती है ।"(५४) इरा के पति "तिलक भी इरा से अभिभूत होकर उसे स्वीकारने के लिए उद्यत होता है पर इरा उसके प्रस्ताव को ठुकरा देती है, क्योंकि वह अब जानने समझने लगी है कि पुरुष चाहे कैसा भी क्यों न हो वह स्त्री से सदैव यही अपेक्षा रखता है कि वह जीवन में प्रथम हो । आदमी सभ्य होने का चाहे जितना स्वांग भर ले, पर वह अपनी आदिम वृत्ति का परित्याग नहीं कर सकता ।"(५५) तिलक और मेज़र सोलंकी में से वह मेजर सोलंकी को पसंद करती है मातृत्व प्राप्त करने का इरा का स्वप्न तो बतरा पूर्ण नहीं कर पाया वही अभिलाषा मेज़र सोलंकी से वह पूर्ण होने की इच्छा रखती है - "इरा के भीतर की नारी सेमल के लाल मांसल फूलों से बच्चों के लिए मचलती थी ।"(५६)

इरा का स्वप्न जब साकार होने लगता है, सेमल के फूलों का खिलना शुरू हुआ । उसी वख्त पालगाँव के बंगले में उसे दमयन्ती का पत्र मिलता है

– 'विमल यहाँ है'' । इरा अपने प्रथम प्रेम को पाने की लालसा में अपने वर्तमान के मेजर सोलंकी के प्रेम की गरिमा को त्यागकर वहाँ चली जाती है । – ''यौवनावस्था में मिला हुआ प्रेम । स्त्री–पुरुष के सम्बन्ध में प्रेम तत्त्व का बड़ा ही महत्त्व है । नारी एक बार जिससे प्रेम करती है, सम्पूर्ण जीवन उसी की होकर रहती है, उसीसे विवाह करके वह अपने जीवन को सफल बनाना चाहती है । अगर परिस्थिति से विवश होकर उसे किसी अन्य व्यक्ति से विवाह करना पड़े तो भी उसका मन अपने प्रेमी को ही अर्पित रहता है । भले ही शरीर पति का हो चुका हो । प्रेमी के प्रेम में तिल–तिल जलकर आत्म समर्पण करके अपने प्रेम की सच्चाई वह सिद्ध कर देती है ।''(५७) विमल की स्थिति बड़ी दयनीय थी । तपेदिक ने उसे शारीरिक रूप से खत्म कर दिया था । इरा उसकी काफी दवाइयां करवाती है, पर विमल उसका साथ छोड़ ले लेता है । इरा फिर से अपने जीवन में तन्हा हो जाती है । मेजर सोलंकी के प्रेम की निशानी को अपने ही हाथों से वह खत्म करवा चुकी थी । अब इरा अकेली एक नई नौकरी के लिए चंदीगढ़ की नई मंजिल के लिए रवाना होती है । तिलक उसे विदा करने स्टेशन आता है । ट्रेन धीरे–धीरे आगे ऐसे बढ़ रही है उसे पुरानी यादें और स्वप्न को मुश्किल से छोड़ती हुई अपनी पति को एक झटके से आगे बढ़ाकर लिए जाती है – अंजान मंजिल की ओर....

तिलक को उन सब दिनों की याद आती है । वे यादें ही उसकी निधि है । इरा का जीवन भी एक डाक बंगले जैसा बन गया था । पति आते हैं,

ठहरते हैं । जितने बेगाने होते हैं डाक बंगले । मुसाफिर आते हैं और चले जाते हैं....सिर्फ कुछ गिनी चुनी यादें....।(५८)

कमलेश्वर का 'डाक बंगला' उपन्यास प्रतीकात्मक उपन्यास है । 'डाक बंगला' विशेषकर नारी जीवन की त्रासद और कष्टदायक अनुभूतियों की अपने आप में एक उपलब्धि है, क्योंकि इसमें एक असाधारण नारी इरा के माध्यम से एक साधारण नारी की नियति और उसके आभ्यंतरिक एवं बाह्य संघर्ष को रूपायित किया जा सकाता है । उपन्यास में ऐसे अनेक स्थल हैं जहाँ जीवन की अनुभूतियाँ बोलती हैं ।"(५९) "मन कहीं और भटकता रहता है और फर्ज के मातहत एक अच्छी खासी जिंदगी जी जा सकती है । सौ में पचहत्तर आँखें ऐसी ही जिंदगी जीने की आदी हो चुकी हैं । अगर उनका मन कहीं और नहीं है, तो वहाँ नहीं है, जहाँ वे हैं, उनका मन मर चुका है ।"(६०)

'डाक बंगला' उपन्यास में लेखक ने आज की स्वच्छंद नारी के सिलसिलेवार जीवन की करुण दास्तान प्रस्तुत की है । नारी प्रेम की जिजीविषा में अनेक ऐसे गलत कदम उठा लेती है, जिससे उनका संपूर्ण जीवन दोज़ख बन जाता है । वह नारी सिर्फ पुरुषों की भोग्या मात्र बनकर रह जाती है । कभी न खत्म होने वाला संघर्ष उसके जीवन की नियति बन जाता है । समग्रत: 'डाकबंगला' उपन्यास में लेखक ने रुमानियत भाषा के द्वारा नारी की वेदना को, उसके असीम दर्द, न खत्म होनेवाली भटकन के द्वारा उसकी करुण कथा को इरा नायिका के द्वारा सुंदर अभिव्यक्ति प्रदान की है ।

(क) तीसरा आदमी

कमलेश्वर लिखित उपन्यासों की श्रृंखला में 'तीसरा आदमी' सन् १९६४ में लिखा गया । 'तीसरा आदमी' उपन्यास में जीवन के यथार्थ को और वर्तमान, आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियों के आधार पर मध्यवर्गीय व्यक्ति चेतना के परिवर्तित रूप को उद्धाटित किया गया है । "भारतीय मध्यवर्ग पर विचार करते समय हम सत्यता के इस बिंदु पर पहुँचते हैं कि अपने विकास के काल से लेकर आज तक मध्यवर्ग का जीवन और व्यक्तित्त्व सर्वाधिक उथल-पुथल से युक्त बहुरंगी एवं संघर्ष से भरा हुआ है । भारतीय समाज में यही ऐसा वर्ग है, जो अधिकांश समस्याओं से घिरा हुआ है ।"(६१)

कमलेश्वर ने 'तीसरा आदमी' उपन्यास में छोटी-छोटी स्थितियों के द्वारा मध्यवर्गीय जीवन की विषमताओं को सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की है ।"(६२) 'घर में जूते तो सबके अलग अलग आते थे, पर चप्पलें कुछ इस तरह खरीदी जाती थी कि जिनसे एक दूसरे का काम भी निकल जाये । बाबूजी की चप्पल मेरे काम आ जाती थी और बहनों की चप्पलें जरूरत के वक्त माँ की इज्जत रख लेती थी, बहनों के पास साड़ियाँ भी ऐसी ही थीं जो बदल-बदलकर एक-दूसरे के काम आती थीं ।'(६३)

वास्तव में यह स्थिति सिर्फ 'तीसरा-आदमी' परिवार की ही नहीं है, अपितु आज के समस्त निम्न एवं मध्यवर्गीय परिवार ऐसी ही परिस्थितियों से

गुजरते हैं, और उन्हें इसकी आदत सी हो गई है । यही कारण है कि कमलेश्वर की वस्तु चेतना मध्यवर्गीय जीवन यथार्थ बहुआयामी रूप को रूपायित करती हुई प्रस्तुत होती है । कमलेश्वर ने अपने उपन्यासों में घटनात्मक सच्चाई के समय पर मानवीय सच्चाई का अन्वेषण किया है । यह मानवीय पक्ष कई पात्रों के माध्यम से उभरकर आया है जो कहीं स्थितियों के माध्यम से चित्रित होता है । मध्यवर्गीय परिवारों की आकांक्षाएँ काफी उँची होती हैं, वे अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण करने की कोशिश में सदैव लगे रहते हैं । उपन्यासकार ने 'तीसरा आदमी' उपन्यास में यह बताने की कोशिश की है कि इन्सान मात्र की फितरत ऐसी होती है, सहज मानवगत कमज़ोरियाँ सब में व्याप्त हैं । उसके पास जो है, उससे अच्छा और उससे दुरस्त पाने की अभिलाषा रखता है और इसी अभिलाषा के कारण जो है, कभी-कभी उसे भी गँवा देता है ।

उपन्यास के मुख्यपृष्ठ पर यह घोषित किया गया है कि - "प्रेम अथवा प्रतिबद्धता के नाते तीसरा आदमी आदिकाल से स्त्री-पुरुष के बीच आता रहा है, लेकिन कमलेश्वर का तीसरा आदमी आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों की उपज़ है ।"(६४) नरेश चित्रा और सुमन्त के बीच घूमती हुई यह कहानी अन्य प्रणय-त्रिकोणात्मक कहानियों से भिन्न है । 'तीसरा आदमी' उपन्यास का नायक मध्यवर्गीय परिवार की समस्याओं को ही मुख्य रूप से उभारा है । 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' का नायक श्यामलाल, 'लौटे हुए मुसाफिर'

उपन्यास के मुसलमान युवावर्ग आदि पात्रों के द्वारा अनेक निम्न मध्यवर्गीय समस्याओं को उभारने में सफल हुए हैं ।

'तीसरा आदमी' उपन्यास में लेखक ने पति-पत्नी एवं उसके मित्र की कथा है । उपन्यास में शैली मैं लिखा गया है । उपन्यास का नायक नरेश है, उसकी पत्नी का नाम चित्रा है, और उसके मित्र का नाम सुमंत है । उपन्यासकार ने अपने समस्त विचारों को, संवेदनाओं को पति - 'मैं' के माध्यम से प्रस्तुत किया है ।

उपन्यासकार ने नरेश और चित्रा के ब्याह के दौरान भी अनेक घटनाओं को उभारा है, अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाओं से सुमंत भी जुड़ा है । नरेश बड़ा महत्त्वाकांक्षी पात्र है, वह इलाहाबाद में रेडियो एनाउंसर के लघु पद पर अधिष्ठित है । वह न्यूज रीडर के पद पर पहुँचना चाहता है, अभिलाषी नरेश बिना सोचे समझे दिल्ली महानगर में तबादला करवा देता है । "महानगरों में यांत्रिक सुविधा तो मिल जाती है, पर महानगरों में आवासीय समस्या इतनी जटिल है कि संबंधों की मधुरता इस समस्या से नष्टप्राय हो जाती है । नरेश की दिल्ली में आवासीय समस्या इतनी जटिल है कि संबंधो की मधुरता इस समस्या से नष्टप्राय हो जाती है ।" नरेश को दिल्ली में आवासीय सुविधा सरकार की ओर से मिलनेवाली नहीं थी, फिर भी सुमंत के सहयोग के कारण वह अपनी पत्नी चित्रा को लेकर सुमंत की एक छोटी-सी कोठरी में रहता है, जहाँ सीलन और बदबू चारों ओर से फैली हुई है । चित्रा के आने के पश्चात्

उस सीलनभरी कोठरी का नक्शा बदल जाता है । सुमंत और चित्रा दोनों ही कोठरी को सज़ाने में लगी हुई थीं । 'मैं' नरेश परेशान सा था – "सीली हुई दीवारों की महक में मैले कपडों की मिली हुई बू, कोने में रखे राशन की गर्म महक और बिस्तरों से आती हुई अनाज की बू, और चित्रा के बालों में महका हुआ तेल–बगलों में भरे पसीने की तेज, महक, दिल करता था कि कमरे से निकलकर भाग जाऊँ ।"(६६) परवशता से सुलह कर लेना ही समझदारी है । नरेश, चित्रा और सुमंत उसी बदबू से भरे कमरे में तीनों बड़े प्रेम से गुज़ारा करते थे । उनके अपतत्त्व से, प्रेम से, विश्वास से वह सीलन भरा कमरा भी उन्हें अच्छा लगने लगता है । वख्त की रफतार में तेज शक्ति और प्रबल गति होती है, संशय कभी कभी संबंधों में दरारें बना देता है, तो कभी सुलह करवाता है । समय की सुइयों ने दोनों मित्रों के दरम्यान मन–मुटाव दुराव की दीवार चुन ली । नरेश सुमंत के अहसान को भूल गया लेकिन सुमंत का स्वभाव वैसा ही पहले जैसा ही था, वही सौजन्यतापूर्ण व्यवहार, वही अपनापन, विश्वास नरेश की पत्नी चित्रा जिसे सुमंत भाभी कहता है, के लिए सुमन के मनमें आदर और सम्मान था । नरेश यह भूल चुका था कि वह सुमंत पर कितना विश्वास रखता था – नरेश और चित्रा के ब्याह के बाद चित्रा को फर्स्ट क्लास की बोगी में बिठाया था उस समय चित्रा का ध्यान रखने के लिए खुद नरेश ने ही उसे चित्रा के साथ बिठाया, ताकि चित्रा अकेलापन और डर न महसूस करे । और आज? आज वही नरेश अहसान फरामोश बन गया, सुमंत के अहसान में भी उसे स्वार्थ

की बू आने लगी । नरेश की मानसिकता होती जा रही थी, किंतु वह परिस्थितियों से समझौता करके उसके साथ दिल्ली में उसीके कमरे में रहता है । नरेश को अपनी पत्नी चित्रा से पूर्ण सहयोग मिलता है । वह उसे जैसा रखता है, वह उसी माहौल, उन्हीं परिस्थितियों में अपने आपको ढाल देती है । वह समझती है - "पत्नी ही परिवार के सुख व संतोष का केन्द्र है । वह पति की एकमात्र ऐसी सहयोगिनी है, जो किसी भी परिस्थिति में उसका साथ छोड़ने को तैयार नहीं होती । पति के प्रति उसका यह समर्पण विवशता नहीं वरन् आत्मसंतोष एवं निष्ठायुक्त होता है ।"(६७) किन्तु नरेश की निगाहों में अब उसे अपनापन नज़र नहीं आता था, सिर्फ अजनबीपन-सा भाव रहने लगा । सुमंत के स्वाभव में वही शालीनता एवम् सौभाग्यता पहले जैसी ही बरकरार है, चित्रा का प्रेम एकनिष्ठ है, पवित्र है, लेकिन नरेश के हृदय में शंका का अंकुर प्रस्फुटित हो उठा है और अब शंका जन्म ले लेती है, तब सर्वनाश की सम्भावना रहती है । नरेश न्यूजरीडर की आकांक्षा से दिल्ली तो आया पर आकांक्षा का रथ प्रथम मोड़ पर ही ढह गया । नरेश को न प्रमोशन हासिल हुआ और ना ही तनख्वाह बढ़ी । सीमित आय में दो व्यक्तियों का महानगर में गुजारा करना मुश्किल बन गया, वहाँ अलग आवास का प्रश्न ही नहीं उठता ।

आर्थिक स्थिति की विषमता सर्वप्रथम मानसिक स्थिरता को भंग कर देता है - "नगरों के विकास ने जहाँ एक ओर भौतिकता को बढ़ावा दिया है वहीं व्यक्तिगत ध्वंस की परिधि का विकास भी नगरों की ही देन है । नगरों के

विकास के साथ ही देश के आर्थिक सामाजिक ढाँचे में परिवर्तन आया है । ग्रामीण परंपरा का मोह एवं नगरीय तड़क-भड़क के आकर्षण के संघर्ष से व्यक्ति का जीवन अव्यवस्थित हो गया है । महानगरों में जीविका की खोज और आवास की समस्या में उलझ कर व्यक्ति स्वयं को ही भुला बैठा है । अर्थ व्यवस्था एवं भीड़ की राजनीति ने मानवीय संबंधों को मृतप्राय कर दिया है । नगरीय जीवन के तनाव एवं संघर्ष ने व्यक्ति को मानसिक रोगी बना दिया है ।"(६८) यही स्थिति नरेश की होती है । धीरे धीरे स्वभाव में शंका-कुशंका के कारण उसे सभी बातों में बनावटीपन दिखाई देने लगता है । चित्रा की निर्दोष बातों में शंका की बू आने लगती है, उसकी दृष्टि में फर्क हो गया था, पर चित्रा सदैव अपने पति का सांनिध्य प्राप्त करना चाहती है । सुमंत सदैव नरेश और चित्रा को कुछ समय अकेला रहने देने के आशय से दूसरे शॉ में फिल्म देखने चला जाता, तभी नरेश के दिलोदिमाग से शंका के बादल छितर जाते थे, कुशंकाओं का आवरण हट जाता...और...मैं चित्रा के ओठों पर ओंठ रख देता, हल्का-सा प्याज महकता और उसमें वेणी के फूलों की गंध समा जाती, दोनों छातियों के बीच सूखे हुए पसीने और सुबह लगाए हुए पावडर की चिकनाहट का अहसास होता...उसका रोम...रोम उभर आता, जांधों पर जैसे कांटे भर आते और फिर सब महक घुल-मिलकर जिदंगी की एक अजीब महक में समा जाती । चारों और जैसे सितारे फूटने लगते, शरीर चटखने लगते, साँस गुंथ जाती और दम पसीने से लथपथ अपने बंधनों को ढीला करने

लगते ।"(६९) शारीरिक सुख की अनुभूति से वह सब कुछ भूल जाता । चित्रा की आंखों में बेहद मासूमियत झुलकती और चेहरें पर ताजगी, उसकी मृखाकृति उसे प्रेम के लिए आमंत्रित करती थी । कभी कभार तो दोनों देर रात गए बारह सड़कों पर घूमते रहते और जीवन का लुत्फ उठाते, देर रात लौटते और तीनों लेट जाते - "बीच में मैं दाहिनी ओर कुछ दूरी पर सुमंत और बाई और पास ही सोई हुई चित्रा ।"(७०)

चित्रा के व्यवहार में कभी भी बनावटीपन न था और ना ही खिंचाव । चित्रा ने अपने पति की परिस्थितियों से समझौता कर लिया था, तभी वह प्रत्येक समय में हर हाल में उस छोटी-सी कोठरी में आनंदोल्लास से अपना जीवन गुजार रही थी । चित्रा और सुमंत सदैव एक-दूसरे के कार्यों में सहायता करते थे । चित्रा खाना पकाती तो सुमंत सलाड़ तैयार कर देता, तीनों मिलकर इकट्ठे खाना खाते । कभी-कभी अनायास नरेश एबर्नामिल बन जाता, शंकाशील बन जाता । खासतौर से जब चित्रा और सुमंत साथ बैठते, उनका हंसी मजाक, उनके शब्द काँटों की तरह उसे चुभते, उन्के ठहाके दिमाग पर हथौड़े की तरह चोट करते । "एक दूसरे के प्रति विश्वास के टूट जाने पर तथा समर्पण की भावना के अभाव में संबंध कायम नहीं रह सकते । व्यक्तिगत अन्तर्विरोध व्यक्ति को अकेला एवं अजनबी बना देते हैं । (७१) सुमंत और चित्रा के संबंधों में जो अपनापन था वह पवित्र निर्दोष और निखालसता का सूचक है । सुमंत ने चित्रा को प्रूफ रीडिंग भी सिखा दी थी । उस काम के सिल-सिले में

वे अक्सर एक दूसरे के संग बहस करते । कभी–कभार बातों में उलझ जाते थे, तो कभी किसी विषय पर विचार विमर्श करते, इस समय चाय की प्यालियाँ भी पी जातीं । चित्रा का इस कदर सुमंत के साथ मिलना, जुलना, बहस करना नरेश को पसंद न था, पर लाचार–सा नरेश अपने संशय के कीड़े को दबाये बैठा रहता, क्योंकि चित्रा सम्पूर्ण रूप से अपने पति को समर्पित थी ।(७२) कमलेश्वर ने 'तीसरा आदमी' उपन्यास में यह बताया है – ''भारतीय नारी की समर्पणशीलता तथा नवयुग के जागरण से प्रेरित समानता कांक्षिणी नारी की सामाजिक चेतना दिखाई है । पुरुष नारी से पूर्ण समर्पण चाहता है, किंतु नये युग की चेतना उसे भिन्न दिशा की ओर उन्मुख करती है । आज के विवाहित जीवन की यह विकट समस्या है वस्तुतः उसका समाधान एक ही है पारस्परिक विश्वास और धार्मिक सामंजस्य ।''(७३) एक दिन आनायास बातों के दौर में अपने पति – नरेश को चाय देना भूल गई, तब से तो शंका के साँप ने कुंडली जमाकर आसन ग्रहण कर लिया । 'पति–पत्नी के संबंधों में विश्वास का तत्त्व प्राण के समान है । इसके अभाव में दाम्पत्य की दीवारें ढहने लगती हैं । 'तीसरा आदमी' की कहानी हमारे सामाजिक जीवन की विषबेल के भयंकर परिणामों की कहानी है ।''(७४)

आर्थिक विषमताओं के कारण नरेश, सुमंत के साथ एक कमरे में रहने के लिए बाध्य हो जाता है । चाहकर भी वह अलग मकान लेकर नहीं रह सकता । पूर्ण स्वतंत्रता एवं पत्नी पर पूर्णाधिकार बिना आत्मनिर्भरता के

असंभव है । आज की बदलती हुई परिस्थितियों में जीवन एवं संजोगों में नारियाँ अनेकों कार्य करती हैं, ऐसी परिस्थितियों में अनेक जीवन में पति के अतिरिक्त एक तीसरे पुरुष का प्रवेश जाने अनजाने न्यूनाधिक मात्रा में होने लगा है । महानगरीय व्यक्ति उसके साथ समझदारी पूर्वक, एक प्रकार से कायरता पूर्ण समझौता कर लेता है । परन्तु वहीं कस्बाई मनोवृत्ति का मध्यवर्गीय पुरुष हिचकिचाहट महसूस करता है, और उसकी यही अनुभूति उसे तोड़ देती है । धीरे-धीरे यह टूटन मानसिक रूप से उस व्यक्ति को ध्वंस कर देती है, खत्म कर देती है । 'तीसरा आदमी' उपन्यास के नरेश की टूटन उसी प्रकार की है । महानगरीय जीवन में वह अपने को उस नगरीय ढाँचे में ढाल नहीं पाता है, उस परिवेश में उसका अहम् संतुष्ठ नहीं होता, जिससे उसकी मानसिक सोच भी बदल जाती है । संशय भी घनी काली छाया दिन प्रतिदिन अधिक विस्तृत होकर और भी गहरी होती जाती है । उपन्यासकार ने नरेश सुमंत और चित्रा के मनोभावों का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक अवलोकन किया है । "दाम्पत्य जीवन में नारी व पुरुष दोनों के सहयोग द्वारा ही परिवार का निर्माण सम्भव है । हमारा समाज पुरुष प्रधान समाज होने के कारण उसे ही श्रेष्ठ मानता है, जब कि परिवार को बनाने में नारी का ही अधिक सहयोग होता है । नारी के बिना परिवार की कल्पना ही नहीं की जा सकती । इतना महत्त्व होते हुए भी नारी को अनेक समस्याओं का समाना करना पड़ता है । जिससे उसका जीवन दुःखमय हो जाता है । दाम्पत्य जीवन विघटित होने लगता है और

संबंध विच्छेद की स्थिति आ जाती है ।"(७५) जान पड़ा पति-पत्नी के संबंधों की नींव विश्वास पर खड़ी होती है, उसी नींव की एक ईंट भी यदि हिलने लगे तो संबंधों में दरार का आ जाना स्वाभाविक है - "कमज़ोर क्षणों में कोई नहीं जानता, पता नहीं कब और कहाँ और किसके लिए किसी के मन में "चित्रा रिश्ते के जिस बड़ेपन से सुमंत से बात करती थी, वह बड़प्पन कहीं खो गया था । उस कमरे में वह सबसे छोटी हो गई थी ।"(७६) ये सारी बातें उसे एक सप्ताह के दौरान और भी अखरने लगी थीं, जब भी सारी बातें याद आती वह विचलित हो जाता - "अपने व्यक्तित्त्व के प्रति अत्यधिक सजगता एवं अत्यधिक स्वाभिमान द्दढ़ संबंधों को बनाये रखने में बाधक सिद्ध होते है । व्यक्तिगत संबंधों में द्दढ़ता के अभाव में व्यक्ति अलग व शून्य की सी स्थिति में आ जाता है ।"(७७) नरेश की वासपी होती तो वह अति संशय से उनको देखता है तब - "कपड़ों में दबे हुए सुमन्त की कमीज के द्वारा बिल्लीवाले प्रसंग का दोहराया जाना, जिससे यह सांकेतिक किया गया था कि उन दिनों सुमन्त कमरे के बारह सोया था आदि के संशय की छाया सदीर्ध होती जाती है । यहाँ तक कि चित्रा के नक्श भी धीरे-धीरे नरेश को सुमंत जैसे प्रतीत होने लगते हैं । प्रगाढ़ शारीरिक संबंधों के फलस्वरूप स्त्री-पुरुष रूपाकारों में यह साम्य उभरने लगता है ।"(७९) इस अविश्वास, संशय नरेश को चित्रा से कोशों दूर धकेल दिया । वह त्रस्त होकर अपने पिता के पास भोपाल चला जाता है ।

चित्रा गर्भवती होती है और वह चला जाता है । अतः प्रसूति के लिए मायके चली जाती है । नरेश मानसिक संघर्ष, आर्थिक स्थिति के सामने अपने हथियार डालकर दिल्ली चला आता है, यहाँ वह अपने अन्य दोस्त के साथ रहता है । नरेश बाहरी तौर से चित्रा के साथ समझौता कर लेता है - "पति और पत्नी का स्वच्छंद घूमना फिरना, पर पुरुष से मिलना-जुलना कभी सहन नहीं कर सकता । पढ़े-लिखे होने पर भी वह उस पर अपना अधिकार सा समझता है, परिणाम यह आता है कि पति-पत्नी में मनमुटाव और एक दूसरे के प्रति अविश्वास एवं असंतोष की अभिवृद्धि होने लगती है ।"(८०) जब उसका दूसरा मित्र कमरा छोड़कर चला जाता है तो फिर से आर्थिक बिडम्बनाएँ धेर लेती हैं, ऐसे समय में सुमंत अपनी मित्रता निभाने आ जाता है । नरेश की नज़र में सुमंत उस समय काँटे की तरह खटकने लगता है । जब वह चित्रा को हायर सेकन्डरी स्कूल में शिक्षक की नौकरी दिला देता है । वह लगातार यह महसूस करता है कि सुमंत की छाया उसके साथ चिपकी हुई है - 'घर में, बाहर में अपने आस पास चारों ओर उसे वह छाया घेरे रहती है, यहाँ तक कि वही छाया उससे पहले सब कर लेती है । "जब भी मैं अपने ख्यालों में ही चित्रा की आँखों में झाँकने की कोशिश करता हूँ तो लगता है जैसे दो नहीं चार आँखें उसकी आँखों में झाँक रही है ।"(८१) इसी छाया उसे भयभीत नहीं करती । अचानक सुमंत एक दिन आकर गुड्डू को प्यार करने लगता है, तब से गुड्डू भी उसके लिए पराया हो गया ।

बुरे दिनों में ही अपनों की पहचान होती है । जब गुड्डु बीमार हो गया, उस समय नरेश का अतापता भी न था, उसका कोई ठिकाना न था । तभी चित्रा ने सुमंत को ही अपना हमदर्द पाया । उसे अपने पति पर जितना विश्वास था, उससे अधिक सुमंत पर उसे विश्वास था । उसी विश्वास को निभाते सुमंत फौरन आया और गुड्डु को अस्पताल में भर्ती करवाया । उसकी दवा-दारू अच्छे-से की, अस्पताल का खर्चा उठाया फिर भी वह और उसकी भलाई नरेश को खटकती है । वह अपना तबादला पटना करवा देता है, चित्रा को साथ चलने को कहता है, किंतु चित्रा स्पष्ट इनकार कर देती है । अपनी अच्छी खासी नौकरी छोड़ वह कोई अन्य आर्थिक विपदाओं को आमंत्रित करना नहीं चाहती । परिवेश ने व्यक्ति को अलगतावादी बना दिया है । आज के जीवन भी घुटन, सामाजिक भ्रष्टाचार और -- राजनीति में व्यक्ति अकेला रह गया है ।"(८२) चित्रा सुमंत के साथ दूसरे मकान में रहने चली जाती है । प्रथम बार (समय) चित्रा गर्भवती होती है तो नरेश भोपाल चला जाता है, दूसरी बार जब चित्रा गर्भवती होती है उस समय भी नरेश पटना चला जाता है । चित्रा बड़े धैर्य से अपनी विकट परिस्थितियों का सामना करती है । आर्थिक निर्भरता के कारण ही चित्रा में अदम्य विश्वास जाग्रत होता है, और जीवन में आई हुई अनेक विसंगतियों का डट कर मुकाबला करती है । एक संशय के कारण ही नरेश ने अपने सुखी संसार को क्षत-विक्षत कर दिया । मानसिक रूप से टूटा-हारा नरेश जब सुमंत के घर का पता लेकर पहुँचा तब एकाएक चित्रा ने -

"मुझे देखते ही सिर पर पल्लू कर लिया था, जैसे मैं उसके लिए पूज्य व्यक्ति हो गया होउँ । उसका शरीर और निखरा था, कुछ सौंदर्य और फूट आया, अंगों के घुमाव कुछ और बढ़ गये थे । वह पहले से अधिक आश्वस्त लग रही थी और तब ।"(८३)

नरेश के भीतर हिंसक पशु जागा था, प्रतिशोध की भावना उफनने लगी थी । चित्रा को उसने पटना बुलाया था, सबकुछ भूलकर, किंतु चित्रा अस्वीकार कर देती है । वही प्रतिशोध लेने के लिए नरेश के मन में यह विचार आता है कि अब सिर्फ "एक बार उसे अपनी पत्नी बनाकर ठुकराऊँ और सदैव के लिए चला जाऊँ । शायद उससे मेरा आहत अहं तृप्त होता था ।"(८४) नरेश सदैव अपनी आर्थिक, सामाजिक परिस्थितियों से भागता ही रहता है । अंततः परिणाम स्वरूप उसकी पत्नी चित्रा उसकी अपनी न रही, न अपनी औलाद को वह पा सका । चित्रा एक नारी है, उसने अपने जीवन में सुख कम, दुःख अधिक देखे । यह भी स्वाभाविक है कि बेगैरतमंद और बेजवाबदार व्यक्ति से कब तक नारी समझौता करती रहे । नारी आप्त बेमानी और आरोपित संबंधों को बनाए रखना नहीं चाहती और ना ही उन संबंधों का निर्वाह करना चाहती है । नारी को अपने आत्मसम्मान और आत्म गौरव को खोना किसी भी कीमत पर स्वीकार नहीं है । उसकी दृष्टि से आत्म सम्मान हीन जीवन पशु का जीवन है, वह अपने पूरे जीवन भर आत्मसम्मान बनाये रखने का प्रयत्न करती है ।

अर्थात् इन नारियों ने पति की सम्पति बनकर जीने का इन्कार कर दिया है ।(८५)

"संशय का यह भुजंग न केवल नरेश-चित्रा के दाम्पत्य को डँसता है बल्कि सुमन के जीवन को भी डंस लेता है । प्रस्तुत उपन्यास में लेखक का उद्देश्य इसी मध्यवर्गीय मनोदशा और संस्कारों (जो आर्थिक अधिक है) को गहराई से एक हल्की विषमता के साथ उभारने का रहा है । आज के मध्यवर्गीय परिवार में किसी पर, किसी को, पूर्णाधिकार नहीं होता । यहाँ कपड़े-लत्ते, चप्पल, कमरे सब 'कामन' होते हैं, तो पत्नी पर पूर्णाधिकार कैसे प्राप्त हो सकता है ? उपन्यासकार ने मध्यवर्गीय युवक की तमाम विशेषताओं को नरेश में समाविष्ट कर दिया है । उसमें एक हीन भावना सर्वत्र दीखती है, इसी कारण से वह अपने विचारों पर दृढ़ रह पाता है, और न अपने तिरस्कार और अपमान का प्रतिवाद कर पाता है, और न ही किसी पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर पाता है ।"(८६)

नरेश चित्रा के साथ पति-पत्नी के स्वाभाविक संबंध रखकर भी रह नहीं पाता । दाम्पत्य जीवन के विघटन ने दोनों पति-पत्नी नरेश और चित्रा को सदैव के लिए दूर कर दिया । एक बार जीवन में अगर मन मुटाव आ जाए तो फिर से उसमें जीवन के रंग भरना बड़ा मुश्किल क्या नामुमकिन सा हो जाता है । नरेश का जीवन छाया से घिरा हुआ है - "मुझे उस छाया ने द्विधाग्रस्त कर रखा है, अब मेरी दुनिया में मैं हूं । और वह छाया है, जो मुझे अब भी चैन से

नहीं बैठने देती । हर वख्त एक तीसरी छाया मंडराती रहती है । जिससे ऐसा लगता है कि हर मुझ 'मैं' और हर चित्रा के बीच वह छाया खड़ी है ।(८७)

निष्कर्ष

समग्रत: कमलेश्वर ने आधुनिक सामाजिकता को अपने उपन्यासों के माध्यम से वहन किया है, उनके उपन्यासों के एक आम भारतीय की जिंदगी दीख पड़ती है । यही कारण है कि कमलेश्वर के उपन्यासों में रोज़ी-रोटी, पति-पत्नी की कलह और प्रेम, शँकाएँ-आस्थाएँ और निराशा आदि सब-कुछ यथार्थ रूप में आते हैं ।

'तीसरा आदमी' उपन्यास में लेखक ने आज की आधुनिक सामाजिक विषमताओं पर प्रहार किया है । आज के आधुनिक युग में अनेक आर्थिक विडम्बनाओं से धिरे मध्यवर्गीय परिवार में दाम्पत्य विधटन की समस्या खास रूप से अधिक पैमाने में फैली है । अन्य - 'तीसरा आदमी' उपन्यास की विशेषता है कि - छोटे कस्बे का आदमी महानगर में आते-आते टूटकर बिखर जाता है । इस उपन्यास में मुख्य नायक 'मैं' (नरेश) के दिल्ली पहुंचने पर कस्बाई महत्त्वाकांक्षाओं की वह मूर्ति खंडित होने लगती है । चित्रा और मैं दोनों संशय के शिकार हैं और इसी संशय में तीसरे आदमी का प्रवेश होता है ।

कमलेश्वर का 'तीसरा आदमी' उपन्यास सांकेतिक अभिव्यक्ति में कस्बाई और शहरी जिंदगी की एक जुड़ी हुई कड़ी के रूप में प्रगट हुआ है । जिसमें लेखक ने दाम्पत्य विघटन की ओर भी गहराई से संकेत किया है ।

(ड) काली आँधी

कमलेश्वर लिखित 'काली आँधी' में लेखक ने स्वानुभव को आलेखित किया है । कमलेश्वरजी राजस्थान के चुनावों के साथ जुड़े हुए थे, राजस्थान के चुनावों के अंतर्गत जो अनुभव उन्हें हुए, उसी की अभिव्यक्ति 'काली आँधी' उपन्यास में भी है । 'काली आँधी'– अनुभव से अर्थ की खोज तक में लिखते हैं – 'काली आँधी' मेरे दिमाग में उस वक्त उठी थी, जब मैं सन् १९६२ में राजस्थान में हो रहे चुनावों के दौरान कारकुन की तरह शामिल हुआ था, मैं उस वक्त कोंग्रेस के उम्मीदवार का प्रचार कर रहा था, क्योंकि कोई मार्क्सवादी उम्मीदवार मैदान में नहीं था, और राजाओं–सामंतों की नई बनी स्वतंत्र पार्टी पहली बार चुनाव मौदान में उतरी थी । महारानी गायत्री देवी राजमाता अब स्वतंत्र पार्टी के उम्मीदवार के रूप में जयपुर से चुनाव लड़ रही थीं, और रोज तरह तरह के करिश्में दिखा रही थीं । धूम इस बात की थी कि इतनी बड़ी महारानी नंगे पैर जनता के बीच आयेंगी, लाखों लोग दूर से तमाशा देखने आए थे, मैंने भी मुख्य सड़क की भीड़ में जगह बनाकर देखा महारानी गायत्री देवी नंगे पैर सिर पर गंगाजल का चॉदी का कलश लिए और दूसरे हाथ में नंगी तलवार पकड़े मंदिर की ओर चली आ रही थी – मैं एक चबूतरे पर बैठकर सोचता रह गया । यह कैसा दृश्य था ? गायत्री देवी जनता के मानस पर क्या छापना चाहती हैं ? तलवार द्वारा दुर्गा या चंडी का साक्षात रूप । क्या गंगाजल से भरे कलश को सर पर उठाये श्रद्धा और विनम्रता का रूप, या नंगे

पैर चलकर जनता के साथ एकाकार होने का भ्रम फैलाना चाहती थी, या कि इन तीन बातों के पीछे सच्चाई कुछ और ही है ।

दूसरे दिन मैं राजस्थान के भीतरी इलाके कोकड़ी चला गया, जहाँ गाँववालों के साथ मुझे काम करना था । सुबह से शाम तक लोगों को राजाओं, सामंतों की पार्टी की असलियत बताना और उनके गंदे इरादों के प्रति आगाह करना – यही मेरा काम था । मरता हुआ सामंतवाद क्या करना चाहता है, इस देश को किस व्यवस्था में जकड़कर रखना चाहता है, इसी की जानकारी देता हुआ गाँव–गाँव धूमता था ।

इन दिनों (कुछ दिनों) की डायरी मेरे पास अब भी रखी है, जैसे–जैसे प्रचार कार्य जमता गया, दौड़–भाग व थकान बढ़ती गई, डायरी लिखना छूटता गया ।

'काली आँधी' उसी अधूरी डायरी की देन है ।

दिमाग में महारानी गायत्रीदेवी की वह तस्वीर भी कौंधती थी जो जयपुर में देखी थी, और मैं अपने से बराबर यह सवाल करता था कि आखिर गायत्री देवी को यह सब करने और इलेक्सन लड़ने की जरूरत क्यों महसूस हो रही है ?

एक तरफ की समाज व्यवस्था (सामंती) दूसरी तरफ की समाज व्यवस्था (समाजवादी) को जगह नहीं देना चाहती, और अपने मरने को क्यों

मंजूर नहीं करती, जो निश्चित था, क्यों कि इतिहास इस मौत पर मुहर लगा चुका था ।

कहते हैं कुचला हुआ साँप ज्यादा खतरनाक हो जाता है, शाही सामंतवादी कुचला हुआ भी यही रुख अपना रहा था । पैसा, औरतें, शराब, साइकिलें, मशीन कपड़े, अनाज, जश्न सब कुछ खुले आम चल रहा था ।

पूर चुनाव के दौरान अनुभव इकट्ठे हुए, और जो छनकर सोच की परतों पर रह गए वे ही थे कि भ्रष्ट हो गए, और भ्रष्टता से भरते जाते चुनावों के प्रति मन में कसैला और कड़वा स्वाद रह गया । इतना सब कुछ होते देखा कि चुनावों के उस नाटक से विश्वास ही उठ गया ।"(८८)

कमलेश्वर ने 'काली आँधी' लधु उपन्यास में आज भी राजनीति पर बड़ा गहरा और कड़ा व्यंग किया ही है, साथ-साथ चुनाव में खड़े होनेवाले ज्वलंत प्रश्नों को प्रस्तुत किया है । उपन्यासकार ने हमारे समय की यथार्थता को उसके दारुण पक्ष को भी उभारा है । यही दारुण पक्ष- आदमी और आदमी, आदमी और राजनीति, राजनीति और व्यवस्था, व्यवस्था और सफलता और सफल होते जाने की क्रूरता आलेखित की है । सफलता का नशा - जो इन्सान को किस मुकाम से कहाँ से कहाँ पहुँचा देता है । भ्रष्ट राजनीति ने देश के सारे सार्थक संबंधों-मूल्यों और संवेदनाओं को विकृत कर दिया है ।

'काली आँधी' उपन्यास में कमलेश्वर ने यह स्पष्ट करने की पूर्ण कोशिश की है कि सफलता का नशा कितना खतरनाक होता है । 'काली आँधी' कितने नीड़ों को उखाड़ फेंकती है, यह काली आँधी व्यक्ति की संवेदनाओं के मायने ही बदल देती है ।

'काली आँधी' उपन्यास के कथानक में मालती और जग्गी बाबू दोनों पति-पत्नी हैं, दोनों का दाम्पत्य-जीवन अति सुंदर एवं संवेदनाओं के तानों-बातों से बँधा हुआ, अनुपम बंधन है । उन्हें एक छोटी-सी प्यारी-सी चुलबुली गुड़िया बेटी है - जिसका नाम लिली है । मालती के पिता प्रतापनारायण बेरिस्टर हैं । गुरुसरन उसका आसिस्टन्ट है । मालती को म्युनिसिपल बोर्ड कमिटी का चुनाव लड़ने के लिए खुद जग्गीबाबू ही प्रोत्साहित करते हैं । जग्गीबाबू के विचारानुसार "देश के निर्माण में औरतों को भी आगे आना चाहिए । औरतें यानी हमारी आधी जनसंख्या, जब तक तामीर में हाथ नहीं बँटाएँगी, तब तक हर काम में स्पीड आधी रहेगी...यह बेहद जरूरी है कि हमारे यहाँ की औरतें आगे आएँ और हर काम में मर्दों का हाथ बटाएँ ।"(८९)

मालती की आवाज़ फैलती गई, आवाज़ का दायरा बढ़ता ही गया, और जग्गीबाबू हर उस फैलती आवाज़ के साथ-साथ पीछे रह गए । मालती की बड़ी तीव्र इच्छा थी कि जग्गीबाबू होटल बंद करके, कमिटियों के मेम्बर बनकर

फायदा उठाएँ किंतु जग्गीबाबू स्पष्ट कहते हैं – मालती मैं तुम्हारा पति हूँ, फायदा उठा सकनेवाला गैर आदमी नहीं ...।"(९०)

रोज़ रोज की खटकती–चटखती और जिंदगी की तकलीफों से तंग आकर जग्गीबाबू अपनी प्यारी–सी बेटी लिली को लेकर, मालती की जिंदगी से कोसों दूर निकल गए, विधि का विधान देखिए–जीवन की विडम्बना कभी–कभी इतनी असहाय हो जाती है । लिली की माँ मालती एक और अनाथाश्रम का उद्घाटन करती है, दूसरी ओर उसकी ही औलाद अनाथ मातृहीना (मातृवंचिता) पंचमढ़ी की एक होस्टेल में भर्ती होती है । एक ओर तो मालती महिलाओं की मीटिंग को सम्बोधित करती कहती है – "हमारा प्रथम कर्तव्य अपने परिवार और पति की ओर है, अपनी संतान की परवरिश अच्छे से करना, वह एक माँ और नारी का कर्तव्य है, तो दूसरी ओर उसका ही परिवार बिखर गया था ।"(९१) जब एक बार रिश्तों में दरारें पड़ जाती हैं तो वे शुष्कता में परिवर्तित होने लगे, तब वे सारे रिश्तें खोखले से हो जाते हैं । प्रेम की गरिमा से ही जीवन–पूर्ण बनता है, अन्यथा अधूरापन जीवन में रह जाता है । मालती दूसरों के घरों में उजाला करने निकली थी, लेकिन उसका घर ही अँधेरे से घिर जाता है – दिये तले अँधेरे । मालती न एक सही पत्नी ही बन पाई और ना ही एक वात्सल्यमयी माँ पाई – "वैसे नारी का मातृ रूप भारतीय संस्कृति में अत्यंत महान एवं गौरवशाली माना गया है, इतना ही नहीं उसे स्वर्ग से भी श्रेष्ठ बतलाया गया है – "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि

गरीयसी" नारी के नारीत्व की पूर्ति मातृत्व की प्राप्ति से ही मानी जाती है, बच्चों के जन्म से लेकर उनके व्यक्तितत्त्व विकास के लिए उचित प्रत्यन करना यही माता का कर्तव्य माना गया है । पालन, पोषण, स्नेह वात्सल्य तथा सेवा भाव आदि मातृ रूपा नारी की सर्वश्रेष्ठ विशेषताएँ होती हैं, जिनसे वह संसार में सुख संतोष एवं उल्लासमय वातावरण का निर्माण करती है । परिवार में पिता की अनुपस्थिति में माता प्रतिनिधि होती है, और धैर्य एवं विश्वास से परिवार का पालन पोषण एवं संचालन करती है । निष्काम कर्म योग माता के जीवन की विशेषता है । अपनी सारी प्रसन्नता, उल्लास, वैभव-सुख एवं संतोष वह संतान के जीवन निर्माण हेतु हँसते-हँसते निछावर कर देती है, इससे उसे प्रतिदान की अपेक्षा नहीं होती, उसे अपना कर्तव्य मानकर वह पूरा करती रहती है । त्याग ही उसका जीवन होता है ।"(९१) मालती पालियामेन्ट के चुनाव तक धड़धड आगे बढ़ती गई और बहुत बड़ी नेता बन गई, धीरे-धीरे जग्गीबाबू मालती से छूट गये, उपेक्षित हो गए ।"(९२)

समय पँख लगाए अपनी तेज रफ्तार से उड़ता सा प्रतीत होता है । वख्त इन्सान को कब और कहाँ कैसी विकट परिस्थितियों में ला खड़ा कर देता है, यह किसे ज्ञात होता है ? मालती और जग्गीबाबू वख्ती की पकड़ से कैसे छूटते ? वख्त ने करवट लेकर दोनों को एक दूसरे के आमने-सामने लाकर खड़ा कर दिया । मालती भोपाल क्षेत्र से चुनाव लड़ने आती है और उसी होटल में ठहरती हैं, जहाँ जग्गीबाबू मैनेजर हैं । भूली बिसरी बातें दिलो दिमाग को हौले

हौले छूने लगतीं हैं । जग्गीबाबू की तकलीफें और गहरे घाव फिर से खुल जाते हैं, समय की राख से दबी चिनगारियाँ हवाके झोंके से फिर सुलग उठती हैं, जुदाई की वेदना से बेखबर-सी मालती अपनी सफलता की धुन में आगे बढ़ती ही जाती है, मालती सफलता की कैद में फँस चुकी थी - "सफलता कितनी क्रूर होती है, कितनी जालिम होती है इसका नशा कितना गहरा होता है और खुद अपनी सफलता में व्यक्ति कैसे कैद हो जाता है ।"(९३)

'काली आँधी' उपन्यास में लेखक ने चुनाव के दौरान की परिस्थितियों को उभारा है वैसे- "देश के स्वतंत्र होने पर भारतीय नेताओं ने देश के प्रशासन के लिए लोकतांन्त्रिक पद्धति का चयन किया । लोकतंत्र में चुनाव का महत्त्व सर्वोपरि हैं ।(९४) 'काली आँधी' चुनाव के अंतर्गत परिस्थितियों का कच्चा चिट्ठा है भारतीय जनता के प्रतिनिधि कहे जाने वाले लोग चुनाव में किन किन हथकंडो का उपयोग करते हैं, प्रजा की धार्मिक संवेदनाओं को कैसे पेश किया जाता है, चुनाव के दौरान सामान्य जनता की मनोवृत्ति क्या होती है, उसे गहराई से जान लेते हैं और फिर उनकी मनोवृत्ति के अनुरूप वे उन्हें अपने हितों के लिए इस्तेमाल करते हैं । चुनाव से जनता कितनी लाभान्वित होती है और कितनी परेशान भी उन सभी प्रश्नों के उत्तर 'काली आँधी' उपन्यास में मिल जाते हैं । उपन्यासकार ने मालती के चुनाव के माध्यम से भारतीय चुनाव की प्रक्रिया तथा उसके अभियानों का काफी स्पष्ट और खुला चित्र प्रस्तुत किया है । 'काली आँधी' की मालती के द्वारा नेता का सही रूप उभारा है ।

मालती वख्त की नज़ाकत को पहचान जाती थी । यही वख्त उसका ब्रह्मास्त्र था । समयानुरूप अपने आपको ढालता, यहीं मालती के चरित्र की मुख्य विशेषता थी । नेता के अनुरूप मालती स्वयं में बहुत सम्भ्रान्त, सुसभ्य और गंभीर है । वह कोई नागवार हरकत कभी-भी बर्दाश्त नहीं करती । यह उसका बाह्य आवरण मात्र है - जनता में अपना बिम्ब बनाए रखने के लिए वह फिजूल के आवरण ओढ़े हुए है । मालती ने अपने कार्य करवाने के लिए कुछ सविशेष आदमी पाल रखे हैं जिमें मुख्य अगुआ है - लल्लूलाल । मालती के भीतर की सफलता की कामना को मूर्त रूप देने के लिए बेहूदा और अमानवीय हरकतें करतें हैं । लल्लूलाल स्वयं मालतीजी के भीतरी की प्रतिमूर्ति हैं, तो यह अतिशयोक्ति न होगी । मालती न अपना भीतर स्वरूप छिपाए हुए हैं, अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उसने चंद गुर्गे पाल रखे हैं, जो उसके स्वभाव से पूर्णतः परिचित थे । शतरंज की बाज़ी में चाल उसकी होती थी, किंतु मोहरे उनके गुर्गे थे । जो धर्म जाति के नाम पर अपना कका खरे करने में लगे हुए थे - "रामायण के पाठ के संदर्भ में तो यह सब के बीच कहना चाहिए ? ये सब काम तो आप लोगों को अपनी सूझ-बूझ से करने चाहिए....जैसी जरूरत हो जैसा वख्त हो...मैं कहूं कि लोगों को ज़मा करने के लिए रामायण पाठ करवाया जाए ।"(९५)

"लपने लक्ष्य की पूर्ति हेतु मालती किसी भी चीज का इस्तेमाल कर सकती है । वह बखूबी जानती है कि किसका इस्तेमाल किया जाय ? अर्थात्

जरूरत आने पर वही सही वख्त से परिस्थितियों, मूल्यों, संबंधों, संवेदनाओं सबकी निःसंकोच चेक के रूप में भुना सकती है ।"(९६) प्रबुद्ध थी, समय की नजाकत को समझ कर ही अपना दाँव चलाती थी । जब प्रतिस्पर्धियों द्वारा लोकापवाद द्वारा मालती का नाम बदनाम किया जाता है तब वह अपने छोड़े हुए पति जग्गीबाबू को भी जरूरतों और वख्त के अनुसार एक चेक के समान भुना देने में संकोच अनुभव नहीं करती । जग्गीबाबू एक संवेदनशील इन्सान हैं, जब वह राजनीति के षडयंत्रों की विभीषिका के शिकार खुद अपनी पत्नी के हाथों होते हैं । तब वह झल्ला के कह कह उठते हैं – "तुम लोग सिर्फ चीजों का इस्तेमाल करना जानते हो – बाढ़ आई तो उसे इस्तेमाल करो, सूखा पड़ा तो इस्तेमाल करो, कहीं कोई लड़की भाग गई तो उसके अपनों का इस्तेमाल करो...कहीं कोई मर गया तो उसकी मौत को इस्तेमाल करो । तुम लोगों ने आदमी के आँसुओं तक को नहीं छोड़ा....उसकी आँखों के सपनों तक को नहीं छोड़ा...इससे ज्यादा घटिया बात क्या हो सकती है कि दुःखी और मुसीबत ज़दा इन्सानों के सपनों तक का इस्तेमाल तुमने कर लिया तुम उनके सपनों के तार तार कर बिखेर दिया ।"(९७)

मालती भोपाल से चुनाव जीतकर सफलता की श्रृंखलाओं को प्राप्त करती आगे बढ़ती जाती है, साथ साथ बहुत कुछ खोती भी जाती है । सफलता के नशे में उसने अपने संबंधों को मातृत्व को वात्सल्य की गरिमा खोने तक का अहसास नहीं होता है । उसकी संतान लिली गैरों की तरह उससे

ओटोग्राफ माँगती है – वह अपना ओटोग्राफ देती भी है । अफसोस वह अपने खून को अपनी बेटी को पहचान नहीं पाती है । इससे ज्यादा बेबसी क्या हो सकती है ? जब मालती को ज्ञात होता है तो वह खूब रोती है । उस वख्त जग्गीबाबू कहते हैं – "इतने दिनों अकेले रहकर मैंने ही यही सोचा है । तुम्हें अपनी बेरफ्तार दौड़ती जिंदगी में सोचने का वक्त ही कहाँ मिला है ? मशीनें नहीं सोचती, मशीनों के लिए आदमी सोचता है । और सफलता...सफलता सिर्फ एक मशीन है । अब तुम औरत नहीं ....एक सफलता बन गई हो...अब तुम्हारी मुक्ति और ज्यादा सफल होते जाने में है...और कोई रास्ता नहीं है, यही एकमात्र तुम्हारा रास्ता है ।"(९८)

मालती जैसे ही अपनी औलाद को अपने गले से लगाती है । वर्षों दबा हुआ वात्सल्य का ज्वालामुखी आँसुओं के रूप में फूट पड़ता है । लिली का स्पर्श पाते ही उसे तृप्ति का अनुभव होता है । उस अनुभूति के सहारे ही वह वापिस अपनी मंजिल की ओर अग्रसर होती है, अपने पति और इकलौती बेटी के प्रेम से वंचित होकर अपनी दौड़ में लगी हुई है । उसे जनता जर्नादन से वाह वाह मिलती है (पदाधिकार) अधिकार का बोध मिलता है, साथ साथ सम्मान और पूजा भी मिलती है, किंतु वह प्रेम और दुलार नहीं मिलता, जो सिर्फ पति और संतान ही दे पाते हैं । सफलता की काली आँधी में वह अपने परिवार उनके प्रेम की गरिमा, सांनिध्य का घौंसला अपने ही हाथों से नष्ट कर देती है । वह सफलता प्राप्ति ही कैसी जो अपने प्रियजनों को कोसों दूर लाकर खड़ा कर

देती है । इस सफलता का क्या सुख है ? अपने प्रियजन का सामीप्य नहीं , माँ होने के बावजूद भी 'माँ' शब्द सुनने की अभिलाषा धरी–की–धरी रह जाती है । जिसके जीवन में तो सिर्फ नारों की आवाज़ – 'मालती जिंदाबाद । शायद इतनी उँची नारेबाजी में एक छोटी–सी मासूम बच्ची की 'माँ', 'माँ' की पुकार न जाने कहाँ दब गई या छूट गई ।

चुनाव में विजयी होने के पश्चात मालती दिल्ली की ओर जाने का प्रयाण करती है तो दूसरी ओर जग्गीबाबू अपनी लाड़ली बेटी लिली को लेकर पंचमढ़ी की होस्टेल की ओर । मालती सबकुछ पाकर भी कुछ नहीं हासिल कर पाती है, अपनी संतान होते हुए भी वह संतान विहीन है । उसकी गोद खाली है । पति के होते हुए भी बाँहें सूनी हैं – अतृप्त हैं । जग्गीबाबू को अपनी बेटी लिली के प्रेम से मानो दुनिया भर की खुशियाँ और सुख प्राप्त हो गया हो, ऐसी सुंदर तृप्ति है ।

मालती की गाड़ी जब छूटती तो वेदना भरी आँख लिए दरवाजे पर नमस्ते करती खड़ी थी, और लोग नारे लगा रहे थे मालती जी जिंदाबाद...मालती जी जिंदाबाद...।

जग्गीबाबू शायद देख रहे होंगे....लिली को प्यार करके एकदम फूट–फूटकर रो पड़नेवाली मालती...या अपना उल्लास छुपा लेनेवाली मालतीजी का...या लिली को ओटोग्राफ देनेवाली मालतीजी का...और लिली

बहुत के बुलबुले उड़ाती अपने में मस्त । इसके अलावा इन तीनों की नियति ही क्या है ?

निष्कर्ष

समग्रत: वस्तुस्थिति यह है कि 'काली आँधी' उपन्यास को लेखक ने कुछ लिखा इस ढंग से है कि वह एक असफल दाम्पत्य की करुण कहानी जैसा लगता है । यह मात्र मालती और जग्गीबाबू की करुण कहानी जैसा लगता है । यह मात्र मालती और जग्गीबाबू की करुण कहानी नहीं है । वह उन दोनों के साथ-साथ देश में व्याप्त राजनीतिक भष्टाचार और छलछद्म की करुण कहानी है । वास्तव में चुनाव की घिनौनी चाल-बाजियों की ओर जनता का ध्यान जाता ही नहीं है । जन-समुदाय अपने चारों ओर व्याप्त राजनीतिक भ्रष्टाचार और छल-छद्म की यथास्थिति का आदी हो चुका है । आज का जन-समुदाय सिर्फ विघटित दाम्पत्य जीवन की कथा को ही मुख्य मानना है, परंतु वह यह नहीं सोचता है कि असफल दाम्पत्य की करुण कथा के साथ-साथ लेखक ने अपने आस-पास के सामाजिक और राजनीतिक यथार्थ के भीतर की सच्चाई को खोला है । चुनाव की नीति की ओर जनसमुदाय को जाग्रत करने का लेखक का अभिप्राय मुख्य है ।

मालती वास्तव में पूंजीवादी व्यवस्था की उन गलत महत्त्वाकांक्षाओं का प्रतीक है, जो अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए साधनहींन सामान्य जनों को बहकाने - फुसलाने या उनका इस्तेमाल करने से परहेज नहीं करती, ना ही हिचकिचाती है ।

विचारों के साथ-साथ अभिव्यक्ति की दृष्टि से 'काली आँधी' एक सशक्त और सार्थक उपन्यास है ।

(इ) कितने पाकिस्तान

कमलेश्वर का सर्वश्रेष्ठ, सुप्रसिद्ध, सूक्ष्म प्रस्तुतीकरण करता उपन्यास – 'कितने पाकिस्तान' भारतीय संस्कृति–सभ्यता के साथ–साथ विश्व की सभ्यताओं और संस्कृति के पक्ष को उजागर करता है । उपन्यासकार ने इतिहास के प्रसंगों को संकलित किया है । 'कितने पाकिस्तान' की भूमिका में उपन्यासकार ने लिखा है – "मेरी दो मजबूरियाँ भी इस लेखन से जुड़ी हैं । एक तो यह कि कोई नायक या महानायक सामने नहीं था, इसलिए मुझे समय को नायक, महानायक और खलनायक बनाना पड़ा है ।"(९९) समय की पुकार को उन्होंने सुनकर वर्तमान समय की ज्वलंत समस्याओं को उभारा है । देश की वास्तविक परिस्थितियों से अवगत कराते हुए यह प्रतीति करवाई है कि देश के रक्षक नेताओं की किंकर्तव्य विमुखता हद से ज्यादा बढ़ गई है । इन्सान दिन–ब–दिन स्वार्थ परस्त होता जा रहा है, वह देश की सुरक्षा के लिए कटिबद्ध नहीं है वरन् अपने परिवार के ही हित का संरक्षण करता है । ऐसी अनेक घटनाओं, नेताओं की किंकर्तव्य–विमूढ़ता को कमलेश्वर ने कुरेद–कुरेद कर निकाला है । लेखक ने निसंकोच बड़ी निडरता से कहा – "प्रधानमंत्री जी यह तो आपकी नैतिकता की पराकाष्ठा है । जब आपकी सरकार गिराई गई थी, तो दूसरे दिन आप देश की जनता को संदेश देने के लिए दूरदर्शन पर मौजूद थे । लेकिन जब उत्तरी सिमान्त पर स्कवाइन लीड़र अजयकुमार आहुजा मारा गया, फलाइट लेफटनेंट निचीकेता अपनी जान खतरे में ड़ालकर क्षतिग्रस्त

जहाज से कूदा, जब कारगिल के क्षेत्र में ही वायुसेना का हेलीकोप्टर क्षतिग्रस्त हुआ और चालक दल के चार सदस्य मारे गए, साथ ही सरकारी आँकड़ों की विश्वसनीयता संदिग्ध होने के बावजूद यह बताया गया है कि हमारी सेना के २९ जवान मारे गए हैं १२८ धायल हैं, तथा १२ लापता हैं, तब उस देश को विश्वास में लेने के लिए उसके संकट और दुःख में शामिल होने के लिए आपको दूरदर्शन पर आने की जरूरत महसूस नहीं हुई । यह संवेदन-हीनता की इन्तिहा है ।"(१००) इतना ही नहीं रक्षामंत्री फर्नांडिस तो उल-जलूल बयान देने के विशेषज्ञ बन चुके हैं, उन्होंने तो दायित्वहीन बयान दिया है । उपन्यासकार ने निड़रता से तटस्थ स्पष्टवक्ता होकर कहा है - "अब आप इतना तो कीजिए कि सेना को साथ दीजिए और सेना के जो पराक्रमी जवान और वायुसेना के जाँबाज पायलट अपनी जान दाँव पर लगाकर देश की रक्षा के लिए कटिबद्ध हैं, उन्हें अपनी लापरवाही की कीमत अपनी कुरबानियों से न चुकानी पड़े - आप लोगों के पैर में आई मोच तक का इलाज देश के खर्च पर विदेशों में होता है, जो सैनिक-१२८ घायल हुए हैं उन्हें विदेश भेजना तो संभव नहीं होगा, पर देश में ही अच्छे से अच्छे अस्पतालों में उनके उपचार की व्यवस्था कीजिए ।"(१०१)

उपन्यासकार सदियों की तह तक चले गए हैं और गत सदियों में हुए युद्धों-महायुद्धों, जय-पराजय मौत ही तय करती है । चाहे वह महाभारत का संग्राम हो या, आर्याना के डेरियस, और यूनानी । मिल्डियासिस का मेराथन के

मेदान में हुआ युद्ध, मर्यादा पुरुषोत्तम सतयुग के रामचंद्र का युग हो चाहे, पर तब जब इस धरती पर धर्म की हानि होती है, तब तब यह काली आँधियाँ चलती हैं । उपन्यासकार ने सतयुग की बात कही है – रामराज्य में एक ब्राह्मण अपने पुत्र के मृत शरीर को लगाए रामचंद्र को धिक्कारता है – "अयोध्यापति राम पिता के सामने पुत्र की मृत्यु पर कैसा राम राज्य है तुम्हारा ।"(१०२) ब्रह्मांड की अमूर्त पराशक्ति ने अशक्त हो गए शरीर से आत्मा की स्वाभाविक मुक्ति के लिए एक सामान्य विधान बनाया था । लेकिन मनुष्य ने ही मनुष्य के लिए मृत्यु का आविष्कार किया है ।

मानव ही मानव की मृत्यु को आमंत्रित करता गया । कुरुक्षेत्र की युद्ध भूमि में लाखों मरे, मेराथन(रोम) के संग्राम में, आबेला के युद्ध में, उसके बाद झेलम, कैने, सोमनाथ, तराइन, कैंसी पानीपत जैसे सैंकड़ों संग्राम हुए जिनमें मानव मरता ही गया । संग्रामों ने मानव को मृत्यु के अलावा कुछ नहीं दिया ।

उपन्यासकार वैश्विक सभ्यताओं के मूल तक पहुँचे हैं , मृत्यु के बाद जीवन को तलाशना अनिवार्य है । उसी तलाश के हिली सभ्यता के गिलगमेश मानव का देवदूत बनकर जीवन की तलाश के लिए निकल पड़ा । उसने धोषणा कि "मैं पीड़ा से लडूँगा, यातना सहूँगा, कुछ भी हो मैं मृत्यु को पराजित करूँगा ।"(१०३) उसकी आवाज़ बेबीलोनियाँ मेसेपोटामिया, सुमेरी अक्कादी और सिंघु घाटी सभ्यता के देवता काँपने लगे । सुमेरी सभ्यता का परम विलासी देवता यवनिक चीखने लगा, सदियों से यही आलम है, देवता अमरत्व

प्राप्त कर बैठे हैं और मनुष्य पाप, सुख, विलास की वासना से लिप्त होकर निरकुंश हो चुका है । मनुष्य ने मित्रता और प्रेम को अर्जित किया, देवता तो इतने विलासी थे कि उन्होंने नारी को भोग-विलास का माध्यम समझा और उसी इन्द्रिय सुख में लिप्त रहे, वे मित्रता और प्रेम कैसे अर्जित करते ? मित्रता में विश्वास अनिवार्य है और प्रेम में विश्वास के साथ आत्मिक समर्पण एवं निखालसता अनिवार्य है, जो देवताओं के पास अलभ्य है ।

सदियों की उलट-पुलट से उपन्यासकार ने स्पष्ट किया है कि देवता छल कपट से धिरे हुए हैं, उन्होंने मनुष्य जाति से विद्रोह शुरू किया है । गिलगमेश तो मृत्यु से मुक्ति की औषधि प्राप्त करने के प्रयत्न में लगा रहा, तो देवता इसी प्रयत्न में लगे रहे कि गिलगमेश को मृत्यु से मुक्ति की औषधि ना मिले । मनुष्य सदैव क्रियाशील रहा है । "मनुष्य ने जिन महाशक्तियों का अन्वेषण किया है । उसने आविष्कृत कर लिया है - जीवन, कर्म, श्रम, प्रेम, मित्रता और शांति जैसे जीवन के महासत्यों को ....इसलिए अब उसकी अमरत्व की कामना अनुचित नहीं है ।"(१०४) स्वर्ग लोक की देवियाँ इना, कल्पा, सुमीति देवलोक छोड़कर मृत्युलोक जा रही हैं, क्योंकि वे देवताओं के पापाचार से पीड़ित हैं, जिन्हें देवताओं ने सिर्फ भोग्या समझा, मनुष्य की तरह प्रेम की गहनता को प्राप्त न कर पाए । चंद्र ने अपनी सीमाओं का उल्लंघन किया, उसने गुरुपत्नी तक को बक्षा नहीं , ऐसे व्यभिचारियों से मुक्त होने के लिए देवियों ने स्वर्गलोक का त्याग किया । सदियाँ बीत गईं, फिर भी गिलगमेश

अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु समुद्रीयात्रा की ओर मृत्यु से मुक्ति प्राप्ति के लिए कूच किए जा रहा है । मृत्यु से मुक्ति की औषधि प्राककथ्ना के पास है, जो समुद्र के गर्भ में छुपकर बैठा है ।

लेखक ने बूटासिंह और रेतपरी की कथा के माध्यम से भारत–पाक विभाजन की संवेदनशील विडम्बना की पीड़ा को व्यंजित किया है । भारत–पाक विभाजन सिर्फ सीमाओं के विभाजन तक सीमित न रहकर, नारी के बँटवारे तक है । नारी को बेचा जाने लगा, नारी की अस्मिता का सौदा किया जाने लगा । बूटासिंह और रेतपरी की कथा के बिंदु से उपन्यासकार ने दो तथ्यों को प्रस्तुत किया है । प्रथम तथ्य बूटासिंह और रेतपरी का आत्मीय प्रेम तो दूसरी ओर बूटासिंह के स्वार्थी भाइयों की स्वार्थ भावना अपने पोषक हितों के लिए अपने छोटे भाई को अविवाहित रखना, स्वार्थ की पराकाष्ठा है । खोखले रिश्तों का मायाजाल जहाँ सिर्फ ज़मीन जायदाद और रुपयों का महत्त्व पनप रहा है , धन लोलुपता की हद ने रिश्तों को मसलकर रख दिया है, अपने बंधुओं का आचार–विचार भ्रष्ट हो चुके हैं ।

गांधीजी की अहिंसा का मार्ग भारतीय भूल चुके हैं, भारत पाक विभाजन रक्त प्रलय बन गया । गांधीजी की अहिंसा का मार्ग भूल कर प्रथभ्रष्ट हो गए हैं । हिन्दुस्तान का आखिरी वायसराय लार्ड माउंटबेटन अपनी पत्नी एडविना माउंटबेटन से कहता है – "सुनो इन हिन्दुस्तानी विस्थापितों और मुर्दों के लिए तुम्हारी आँखों में जो आँसू आए हैं वे ब्रिटिश राजधराने और

ब्रिटिश जाति के लिए लांछन हैं ।"(१०५) विभाजन की त्रासदी अमानवीय त्रासदी लार्ड मांउटबेटन ने पैदा की जिसे देखकर एल्पस और प्रेरेनीज की पहाड़-चट्टानें भी रो पड़तीं । एडविना इसाई करुणा की याद दिलाती है पर सबकुछ फिजूल में, दूसरे विश्वयुद्ध में बर्मा के फ्रंट पर भी इतना नर संहार खून खराबा नहीं हुआ था । जिन्न भी इस नरसंहार से विचलित हो गया, पर लार्ड मांउटबेटन ने जिन्ना को गुमराह कर दिया । वास्तव में नफरत और खौफ की बुनियाद पर बननेवाली कोई चीज मुबारक नहीं हो सकती ।"(१०६)

लेखक ने बड़ी विशिष्टता से अदीब की अदालत के माध्यम से समसामयिक वैश्विक समस्याओं को उभारा है । पश्चिमी सीमांत से एके ४७ चीनी राइफिल दस्तक देता है - "हथियार बनेंगे तो चलेंगे भी ।"(१०७) उत्तर पश्चिमी सीमांत से भागकर आए परिवारों ने दस्तक दी, उनकी आहों और कराहों ने आवाज़ दी - "हम काश्मीर में हिन्दू हैं, पर हिन्दुस्तान में कश्मीरी कहलाते हैं ।"(१०८) जब से आज़ादी मिली है तब से खून के बम बनने लगे हैं । यह आलम कुछ लोग बदलने नहीं देंगे क्योंकि जाहिल हिन्दुस्तानियों का सरगना है - दूसरी तरफ जाहिलों के नेता खड़े हैं - अशोक सिंघल जो हिन्दू नहीं, जैनी हैं, और ये महंत अवैधनाथ जो गौरखपंथी हैं । इस मुल्क में ज़ाहिलों की कमी नहीं है । ज़ाहिलों की फ़सल कब उग आई, यह आश्चर्य है ।

अदीब की अदालत में मुर्दों की आवाजें आने लगीं, मुर्दा कहता है कि – पुलिस ने मुझे मारा क्योंकि – "मैं खालिस्तान बना रहा था ।"(१०९) अन्य मुर्दा कहता है कि मुझे भी मारा गया – "मैं पाकिस्तान में पाकिस्तान बना रहा था ।"(११०) कश्मीरी पंडित भी चिल्ला रहे थे, पाकिस्तानी उनसे कहे जा रहे थे – "पंडित यहाँ से भाग जाओ, पंडिताइन को छोड़ जाओ ।"(१११) भागलपुर के एक हिन्दुस्तानी बूढ़ा उस समय को कोस रहा था, अंग्रेजों ने भारत की सल्तनत को बहादुरशाह ज़फर से छीनी थी । उस बूढ़े का मानना था कि "वो जब गए तो उन्हें हमारी सल्तनत हमें देकर जाना चाहिए था – बाबर तो गाज़ी था ।"(१११) बाबर के नाम से ही सदियों का खून रीता है । अदीब बाबर को अदालत में हाजिर होने का आदेश देता है, समय उसकी करतूतों का हिसाब माँगता है ।

उपन्यासकार ने बाबर को अदीब की अदालत में बुलाकर बाबरी मस्जिद के विवाद को स्पष्ट करना चाहता है, बाबरी मस्जिद और अयोध्या राम मंदिर के विषय को खोलना चाहता है । बाबर के बयान से – "मैंने कभी तुलसीदास का नाम नहीं सुना, जिसने हिन्दुओं के राम को भगवान बनाया । मेरे दौर में राम भगवान थे ही नहीं , तो मैं उनका मंदिर क्यों तोड़ता ? तुलसीदास का नाम तो मैंने इन दिनों कब्र में लेटे लेटे सुना ।"(११२) बाबरी मस्जिद कांड में हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों को लड़ाने वाला कौन है ? साम्प्रदायिक दंगो को कौन भड़काता है । अयोध्या में बजरंग दल ने डेरा ड़ाल रखा है ।

मुसलमान की जाति में भी शिया और सुन्नी दो भेद–भरम करनेवाले कौन हैं । इन्सानों ने ही सभी भ्रमों की नींव डाली हैं । चाहे भारत देश हो, चाहे आफ्रिका की अन्य वैश्विक अशांति के दौर में सभी देशों के इन्सान को सहन करना है । तभी अदीब की अदालत में दस्तकें आईं – "दक्षिण अफ्रिका के बाउपोतींग इलाके वाले अफ्रिकी को मार ड़ाला गया । ये काले अफ्रिकी हैं, जिन्हें गोरी–चमड़ीवाले साउथ अफ्रिकी सरकार ने ही मरवाया है, लेकिन वहाँ नेल्सन मंडेला और आफ्रिकन नेशनल कोंग्रेस और डी.क्लार्क की गोरी सरकार में समझौता हो चुका है कि ये मिलजुलकर नया संविधान बनाएँगे । इंसानों के बीच यह असंतोष फूट क्यों पड़ रही है; जिसका प्रत्युत्तर विश्व के किसी ज्ञानी के पास नहीं है ।

वैश्विक स्तर पर कोई देश नफरत की विडम्बना से बच नहीं सका है । इन्सान ही इन्सान को काट रहा है, मार रहा है, अपनी नस्ल को की खत्म करने पर तुला हुआ है । कराँची के सिंधी इन्साफ माँगते हैं – "हम सिंधी हैं – हमें पाकिस्तान फौज ने मुहाज़िरों के कहने पर मारा है, तो दूसरी ओर लेबनानी हैं हमें क्रिश्चिननों ने मारा है । हम मोलदोवा से मर कर आए हैं, हमें रूसियों ने मारा है, हुजूर हम बोसोनिया से आए हैं, हमें सर्बो ने मारा है ।"(११३)

इन्सान के हृदयों से इन्सानियत का स्त्रोत सूख गया है । आज का मनुष्य पाशविकता पर उतर आया है, चाहे वह फिर किसी भी देश का इंसान क्यों न हो । इन्सानियत का ज़्बा खत्म हो चुका है । जापान के फौजियों की

पाराविकता तो हद से गुजर गई, दूसरे महायुद्ध में जापानी सोल्जरों नें कितनी मासूम लड़कियों पर बलात्कार किया, औरतों की जिंदगी बदतर, अन्याय सितमों से भरी हुई है । जापान की औरतों की वेदना - "जापान में तीस हिनताई कोर जो सेक्स कोर थी, जिसे कोम्फर्ट कोर के नाम से पुकारा जाता था, इस कोर में करीब चालीस हज़ार औरतें, लड़कियाँ जबरदस्ती भर्ती की गई थीं, हम प्रतिदिन भर्ती की गई थीं, हम प्रतिदिन कम से कम पन्द्रह जापानी फौजियों की पाशविक वासना को तृप्त करती थी । (११४) जापान देश हो या अरब देश हो, नारी पर अत्याचारों का सिलसिला वैश्विक स्तर पर बराबर चलता रहा है ।

अरब देश की नारी की सिसकियाँ गूंजती हुई कहती हैं - "अरब बिलकिस ब्याह का नाटक करके ले गया था । वह मुझसे २८ वरस (वर्ष) बड़ा था । मैं हर दिन बीसियों बार अपने उस खाविंद की कुदरती और गैर कुदरती हरकतों का शिकार होती थी, फिर जो बच्चा हम जैसी ओरतों से पैदा होता था, उसे तैली बच्चा कहा जाता और अरब समाज से दूर रखा जाता ।"(११५) नारी को नर्क की जिंदगी देनेवाला एक इन्सान ही है जो जंगलीपन पाशविकता की हद से गुजर चुका है । "आज तो मुल्कों में नफरत का एक पाकिस्तान बनाने की कोशिशें ज़ारी हैं...क्या हुआ बोस्निया में, क्या हुआ साइप्रस में क्या हुआ है तब के टूटे सोवियट यूनियन और अब के बने रशियन फेडरेशन में । क्या हो रहा है आज के अफगानिस्तान में ? हर व्यक्ति

नफरत के सहारे अपने ही लोगों के खिलाफ एक दूसरा पाकिस्तान ईजाद करना चाहता है ।"(११६)

"नफरत एक ऐसा स्कूल है, जिसमें पहले खुद को प्रताड़ित और अपमानित किया जाता है – उसे घृणा की खाद से सींचा जाता है, जब उसकी स्मृति को एकात्म करके प्रतिशोध के नुकीले हल से जीत कर हमवार किया जाता है ।"(११७) उपन्यासकार ने सरकारी कानूनी अदालतों की ओर इंगित किया है – समूचे विश्व में इन्सान दुःखी है, तभी अदीब अर्दली से कहता है – "आने दो बर्बरता, तकलीफ, यातना, अमानवीय घटनाओं के शिकार लोगों को आने दो यह इन्सानी अदालत है, कानून की नपुंशक और अपाहिज अदालत नहीं ..हमारी अदालत मानवीय अत्याचार के खिलाफ खुली हुई है इसलिए जो भी दस्तक दे उसे आने दो ।"(११८) इन्सान और इन्सान की कुदरती पहचान के बीच प्रांत, देश, जाति जहाँ से आ जाते हैं इन्सान जातिवाद में बँट गया है । ब्राह्मण जाति ने अपना पाकिस्तान बना दिया । लोकमान्य तिलक ने सारे हिन्दुवादियों को जन्म दिया....सावरकर जैसे क्रांतिकारी हिन्दूवादी हो गए...उनकी नस्ल ने नाथूराम गोड़से पैदा किया, आखिर उसने गांधीजी की हत्या की ।"(११९) पंजाब से लेकर आसाम तक की नदियों का पानी खून से लाल हो गया । "मज़हब से कौम नहीं बनती...एक खून और तवारीख से कोम बनती है ।"(१२०)

चारों दिशाओं के मुल्कों में इन्सानियत ने हेवानियत का रूप धारण कर लिया है । एक और कश्मीर से शोर उठा, तो दूसरी ओर ताजिकिस्तान चीखने लगा, बोस्नियाँ के मुसलमानों पर सर्बो ने हमला कर दिया, श्रीलंका में प्रभाकर ने दो हज़ार इन्सानों को मार कर ज़मीन में गाड़ दिया, ईराक पर अमरीकी बमबारी होने लगी । सउदी अरब, सूड़ान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान के आतंकवादी जेहाद के नाम पर मासूम नागरिकों को मारतें, उखाडते, हत्याएँ, आगजनी अपहरण और लूटमार मे मशगूल हो गए हैं, कराँची में सिंधी और मुसलमानों का झगड़ा । चार करोड़ सिंधी बेघर हैं । बंगला देशवासियों ने अपना पाकिस्तान बना दिया । तब अदीब चखा–सुनो करांची के बाशिन्दों जितना जो कुछ टूट गया उसे भूल जाओ । जो कुछ टूटने के बाद बना है, उसे टूटने से बचाओ, जितने मुल्क बनेंगे वे सिर्फ इंसान को तक्सी करेंगे । जरूरत से ज्यादा इस दुनिया का बँटवारा हो चुका है...खुदा के लिए बँटवारे की इस ज़हनियत को खत्म करो ।"(१२१)

अदीब के दरबार में पेश होने के लिए – "सारी सदियाँ रुकी हुई खड़ी हैं । हिटलर खड़ा है, मुहम्मद बिन कासिम आँठवीं सदी से खड़ा है, महमूद गजनबी अपने सबूत लिए दसवीं सदी से मौजूद है...सोलहवीं सदी का बाबर अभी अपनी जिरह पूरी नहीं कर पाया है...सत्रहवीं सदी के बँद होते दरवाज़े पर औरंगजेब अपनी बारी का इंतजार कर रहा है, बीसवीं सदी सारा सुगफ्ता अभी तक अपने बेटे की लाश लिए कोने में खड़ी है ।"(१२२) औरंगजेब के

अब्बा हजूर, शहनशाह शाहजहाँ, जो तब गुर्दे की बीमारी से परेशान थे । औरंगजेब ने धार्मिक सेंसर लगाया । इतिहासकार–काज़ीम शीराजी साहब, मुहम्मद साकी मुस्ताद खान साहब, खाफी खान साहब और आकिंल खान साहब जैसे इतिहासकारों को भी बुलाया गया था । औरंगजेब ने हिन्दू मुसलमानों के बीच दरारें खड़ी कीं, साथ–साथ शिया और सुन्नी मुसलमानों में भी आंतरिक द्वेष भावना को जन्म दिया । "औरंगजेब एक ऐसा राक्षस है जिसने अपने पिता को कैद किया, भाइयों को मारा, और हिन्दुस्तान के बनते हुए इतिहास को सूली पर चढ़ा दिया । दाराशिकोह की हत्या एक नए बनते हुए हिन्दुस्तान की हत्या थी ।"(१२३)

औरंगजेब ने धर्म के नाम पर अपने भाई दारा का कत्ल किया । हिन्दुओं का जीना मुश्किल कर दिया, हिन्दुओं पर जजिया टैक्स लगाया था । दारा हिन्दुओं का पोषक था, औरंगजेब ने उसे ही खत्म कर दिया, उसने सिर्फ अपने भाइयों को ही नहीं मारा, वरन अपने भतीजों को भी बक्शा नहीं, उन्हें भी मरवा दिया । मज़हब के नाम पर अपनी सत्ता को बनाए रखा । "धर्म के नाम पर हज़रत शिबली नोमानी जैसे लोग ही गैर कुदरती पाकिस्तानों की बुनियाद डालते हैं । मुसलमान मुसलमान से लड़ रहा है – यह लडाई धर्म की नहीं , धर्म और धर्मान्धिता की है । शायद दुनिया के हर धर्म को अपनी धर्मान्धिता से लड़ना और उसे जीतना पड़ेगा ।"(१२४) औरंगजेब को राज्याश्रय प्राप्त करना, इतिहासकार हमीदुदीन खाँ ने 'औरंगजेब के सरकारी इतिहास में खुद दर्ज किया

है । "औरंगजेब से ही उत्तराधिकारी युद्ध के लिए तैयार था, दाराशिकोह को अपना निशाना बना रखा था, क्योंकि दारा ही उसका मुख्य काँटा था ।"(१२५)

कमलेश्वर की गहरी सोच 'कितने पाकिस्तान' में बड़ी गहराई से उद्घाटित हुई है । इन्सानी रिश्ते कितने खोखले हैं । खून का रिश्ता कितना दोगला है – दाराशिकोह की बहन रोशनआरा ही अपने भाई दारा के खून की प्यासी बनी हुई थी, और अपने बड़े भाई का साथ देकर अपने छोटे भाई दाराशिकोह का धर्म के नाम पर कत्ल करवा दिया, ऐसे खोखले रिश्ते सदियों से चले आ रहे हैं । गृहयुद्ध, द्वंद्व, लालच, सिंहासन सत्ता लोलुपता के लिए इन्सान अपने आपको कितना गिराता जा रहा है ।

सदियों के गर्भ में ऐसी कितनी ही दास्तानें छिपी हुई हैं? चाहे वह ईसा का समय हो – ईसा को भी सूली पर लटकाया गया था, महमद पैगम्बर को भी सहना पड़ा और गांधीजी को भी गोली खानी पड़ी । इन्सान की फितरत कैसी है ? माउंटबेटन को किसने अधिकार दिया– भारत पाक विभाजन का ? आज़ादी की शर्तों को तय करने का हक किसने दिया ? गांधीजी की अहिंसा को, आदर्शवाद को भारतीयों ने अमल में रखा । अदीब अपनी अदालत में अपनी चीखों–चीत्कारों से परेशान हो चुका था । इन्सान की मरती इन्सानियत चिल्ला रही थी । अदीब उस वातावरण से उब चुका था, उसकी घुटन उसे कहीं और मुक्त वातावरण में जाने के लिए विवश कर रही थी । गरीब का जीवन एक ही ढर्रे के जीवन से तंग हो गया था । वह खुली हवा में, खुले

वातावरण में जवाबदारियों से मुक्त होकर अपनी जिंदगी को जी लेना चाहता है । गरीब अपनी माशुका सलमा को लेकर प्रकृति की नयनरम्य गोद में खो जाता है, वह जिंदगी को जी लेना चाहता है । उपन्यासकार ने अदीब और सलमा के अनैतिक रिश्तों की और इंगित किया है, उनके रिश्तों को खोलकर रख दिया है । जब से स्त्री–पुरुष बने, वे परस्पर के लिए बने हैं । अदीब शादीशुदा है । उसकी पत्नी सुंदर थी, उसे एक प्यारी सी ज़हीन लड़की है । अदीब की प्रेमिका सलमा के जीने का सहारा उसका बेटा है । दोनों अपने परिवार के लिए समर्पित है । वे दोनों अपने नैतिक मूल्यों को छोड़ चुके हैं । अदीब और सलमा के अनैतिक संबंधों से लेखक यह स्पष्ट करना चाहता है कि स्त्री पुरुष के अनैतिक संबंध सदियों से चले आ रहे हैं । इन्सान अपनी जिंदगी में कहीं न कहीं अपनों के होते हुए भी अकेलापन महसूस करता है । उसी अकेलेपन को मिटाने के लिए वह किसी अन्य पात्र से जुड़ जाता है । तभी 'दक्षिणी ध्रुव के पास से बर्नार्द पियरे बुलाने लगा...अदीब आओ न...वर्जित प्यार ही असली प्यार होता है...जिस प्यार में वर्जना नहीं वह वेश्यावृत्ति है, पर वह वृत्ति समाज द्वारा अस्वीकृत है...तुम समाज को बहिष्कृत करो...मैंने अभी–अभी सुना...तुम्हारी प्रेमिका ने चाहा है कि उसे जी लो, जो मन चाहता है सुनो, दिमाग से जिओगे तो जी नहीं पाओगे और यह दुनिया भी तुम्हें जीने नहीं देगी...अपनी वर्जना से ऊपर उठकर आसक्ति को ग्रहण करो.... आसक्ति में ही आनंद है...आसक्ति ही अंतिम है, वह चाहे किसी शाश्वत

मार्ग से प्राप्त होती हो या नश्वर उपादान से....। क्योंकि मनुष्य के सबसे कोमल प्रतिबद्ध क्षण आसक्ति में ही निहित होते हैं, और प्रकृति उन्हें पवित्र बनाती है ।"(१२६)

प्रस्तुत उपन्यास में 'पाकिस्तान' नफ़रत के आधार पर बँटवारे और अपने आपको अलग-थलग करने लेने का प्रतीक बनकर प्रयुक्त हुआ है । उपन्यासकार ने विश्व के अनेक देशों के उदाहरणों द्वारा मनुष्य-मनुष्य में पनप रही नफ़रत, ईर्ष्या, स्वार्थ और हिंसा की वृत्ति को उजागर करने का प्रयास किया है, जो सब कुछ जलाकर भस्म कर देती है, व्यक्ति को खोखला कर देती है । आज यह वृत्ति निरंतर बढ़ती जा रही है । एक पाकिस्तान के दर्द से हम अर्ध शताब्दी बीत जाने पर भी भुला नहीं पा रहे हैं और यहाँ नित्य नये पाकिस्तान मानो उगते आ रहे हैं । इसी निरंतर टीसती पीड़ा को उपन्यासकार ने वाचा देने का अद्‌भुत सफल प्रयास किया है ।

संदर्भसंकेत

१. काली आँधी, पृ-८८

२. कमलेश्वर - काली आँधी, पृ. ८

३. कमलेश्वर - काली आँधी, पृ. ४

४. कमलेश्वर, पृ. २१२ मधुकर सिंह

५. कमलेश्वर - काली आँधी, पृ. ८५

६. आधुनिक हिन्दी उपन्यास, पृ. ४५०, भीष्म साहनी : रामजीनिक भगवतीप्रसाद निदारिया ।

७. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास में युग-चेतना, पृ. २८,

८. कमलेश्वर - काली आँधी, पृ. २५

९. कितने पाकिस्तान, पृ. १७

१०. कितने पाकिस्तान, पृ. २१

११. कितने पाकिस्तान, पृ. २४

१२. कितने पाकिस्तान, पृ. २४

१३. कितने पाकिस्तान, पृ. ३३६

१४. 'कमलेश्वर' सं. मधुकरसिंह, पृ. २०१

१५. 'भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास', डॉ. पी. एम. थोमस, पृ. १३

१६. 'कमलेश्वर' सं. मधुकरसिंह, पृ. २१५

१७. 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', कमलेश्वर, पृ. १३

१८. भगवती चरण वर्मा की उपन्यास चेतना, डॉ. श्रीमती इन्दुशुक्ला, पृ. ६७

१९. 'निर्मला', प्रेमचंद, पृ.

२०. 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', कमलेश्वर, पृ. १०

२१. 'कमलेश्वर' सं. मधुकरसिंह, पृ. २१७

२२. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास में युग चेतना, डॉ. जवाहरलालसिंह, पृ. ९४

२३. भगवती चरण वर्मा की उपन्यास चेतना, डॉ. श्रीमती इन्दुशुक्ला, पृ. ९१

२४. 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', कमलेश्वर, पृ. २३

२५. 'कमलेश्वर' सं. मधुकरसिंह, पृ. २१३

२६. 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', कमलेश्वर, पृ.०६

२७. हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप' प्रभा वर्मा, पृ. ५७

२८. हिन्दी उपन्यास : सामाजिक प्रक्रिया और स्वरूप, प्रभा वर्मा, पृ. ६२

२९. झूठा सच, पृ. ६४

३०. भगवतीचरण वर्मा की उपन्यास चेतना, डॉ. श्रीमती इन्दु शुक्ला, पृ. ६४

३१. 'कमलेश्वर' सं. मधुकरसिंह, पृ. १९०

३२. 'हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा', डॉ. रामदरश मिश्र, पृ. ३५

३३. 'कमलेश्वर' सं. मधुकरसिंह, पृ. १९०

३४. हिन्दी के लधु उपन्यास और उनके उपन्यासकार, पृ. १६८

३५. 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', कमलेश्वर, पृ. १००

३६. 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', कमलेश्वर, पृ. १०१

३७. हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप', प्रभा वर्मा, पृ. ५७

३८. हिन्दी साहित्य की विकास परम्परा में साठोत्तरी उपन्यास, पृ. २४९, डॉ. पारूकान्त देसाई ।

३९. हिन्दी साहित्य की विकास परम्परा में साठोत्तरी उपन्यास, पृ. २४९, डॉ. पारूकान्त देसाई ।

४०. 'कमलेश्वर' सं. मधुकरसिंह, पृ. २११

४१. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ७३

४२. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास में युग चेतना, डॉ. जवाहरलालसिंह, पृ. ९४

४३. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ४५

४४. 'हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी', डॉ. रेवा कुलकर्णी, पृ. २२८

४५. 'हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप', प्रभा वर्मा, पृ. १६६

४६. 'हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी', डॉ. रेवा कुलकर्णी, पृ. २३०

४७. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ.

४८. 'पचपन खंभे लाल दीवारें', उषा प्रियंवदा, पृ. ४१

४९. 'निर्मला', उपन्यास, प्रेमचंद, पृ.३७

५०. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ८३

५१. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ८८

५२. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ८५

५३. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ८५

५४. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ८९

५५. हिन्दी उपन्यास साहित्य की विकास परम्परा में साठोत्तरी उपन्यास, डॉ. पारूकान्त देसाई, पृ. २५१

५६. हिन्दी उपन्यास साहित्य की विकास परम्परा में साठोत्तरी उपन्यास, डॉ. पारूकान्त देसाई, पृ. २५०

५७. 'हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी', डॉ. रेवा कुलकर्णी, पृ. २१९

५८. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ५८

५९. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ५९

६०. 'डाक बंगला', कमलेश्वर, पृ. ६०

६१. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास और युग चेतना, डॉ. जवाहरलालसिंह, पृ. ६९

६२. 'कमलेश्वर' सं. मधुकरसिंह, पृ. २०६

६३. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. १२

६४. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ४

६५. 'हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप' प्रभा वर्मा, पृ. ८०

६६. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ३३

६७. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास और युग चेतना, डॉ. जवाहरलालसिंह, पृ. १३०

६८. 'हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप' प्रभा वर्मा, पृ. ८४

६९. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ३३

७०. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ३५

७१. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ३९

७२. 'हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप' प्रभा वर्मा, पृ. १६७

७३. 'स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना', डॉ. लालसाहब सिंह, पृ. ६६

७४. 'हिन्दी उपन्यास साहित्य की विकास परम्परा में साठोत्तरी उपन्यास, डॉ. पारुकान्त देसाई, पृ. २५१

७५. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास और युग चेतना, डॉ. जवाहरलालसिंह, पृ. १३०

७६. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ५०

७७. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ३९

७८. 'हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप' प्रभा वर्मा, पृ. १६९

७९. 'कमलेश्वर', मधुकर सिंह, पृ. २१५

८०. 'स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना', डॉ. लालसाहब सिंह, पृ. ६२

८१. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ६२

८२. 'हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप' प्रभा वर्मा, पृ. १७०

८३. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ९५

८४. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ९५

८५. हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी, डॉ. रेवा कुलकर्णी

८६. भगवतीचरण वर्मा की उपन्यास चेतना, डॉ. श्रीमती इन्दु शुक्ला, पृ. २०२

८७. 'तीसरा आदमी', कमलेश्वर, पृ. ९६

८८. 'आधुनिक हिन्दी उपन्यास'– भीष्म साहनी, रामदरश मिश्र, भगवती प्रसाद निदारिया, पृ. ४५० – ४५१

८९. 'काली आँधी', कमलेश्वर, पृ. ८९

९०. 'काली आँधी', कमलेश्वर, पृ. ९०

९१. 'हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी', डॉ. रेवा कुलकर्णी, पृ. ९१

९२. आधुनिक हिन्दी उपन्यास, भीष्म साहनी, पृ. ४५६

९३. 'कमलेश्वर', मधुकर सिंह, पृ. १९४

९४. भ.व. के उपन्यास में युग चेतना, पृ. ४५, डॉ. श्रीमती इन्दु शुक्ला

९५. 'काली आँधी', कमलेश्वर, पृ. ६५

९६. 'काली आँधी', कमलेश्वर, पृ. ८८

९७. 'काली आँधी', कमलेश्वर, पृ. ८८

९८. 'काली आँधी', कमलेश्वर, पृ. ४९

९९. 'कितने पाकिस्तान' भूमिका से

१००. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १५

१०१. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १६

१०२. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १९

१०३. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. २३

१०४. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ.

१०५. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ५२

१०६. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ६०

१०७. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ६२

१०८. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ६४

१०९. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ६५

११०. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ६६

१११. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ७०

११२. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ८७

११३. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ८७

११४. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ८९

११५. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ८९

११६. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ९३

११७. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १४

११८. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ९६

११९. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १०४

१२०. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १०६

१२१. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १५३

१२२. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १५८

१२३. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. १६३

१२४. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. २००

१२५. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. २०२

१२६. 'कितने पाकिस्तान', कमलेश्वर, पृ. ११४

पंचम अध्याय

कमलेश्वर के उपन्यासों की पात्र–सृष्टि में सामाजिकता

(१) भूमिका

(२) कमलेश्वर के उपन्यासों की पात्र–सृष्टि में सामाजिकता के स्वर

(१) भूमिका

कमलेश्वर मूलतः सामाजिक जीवन के रचनाकार हैं, इसलिए उनके उपन्यासों में सामाजिक जीवन के जो बहुआयामी चित्र मिलते हैं, वे उनके सामाजिक चिंतन के ही प्रतिफल हैं । रचनाकार अपनी रचनाओं में वही सब तो कहता है, जो वह अन्य कहीं जोरदार शब्दों में नहीं कह सकता । कहने का आशय यह है कि वह सामाजिक सरोकारों और उनसे उपजी चिंताओं के प्रति सजग-सतेज रहता है, और उनहीं चिंताओं को पाठक के साथ बाँटता है, जो चिंता एक रचनाकार की है, वह चिंता एक सामाजिक व्यक्ति की चिंता है । उस चिंता का केन्द्र समाज है, जिसे हम नित्य प्रति देखकर भी अनदेखा कर रहे होते हैं । रचनाकार अपनी रचना द्वारा वह हमारे समाज को, समाज के उन अवयवों को और उन बिंदुओं को हमारे सामने खोलकर रखता है । "पिछले पच्चीस वर्ष इस बात का प्रमाण है कि कमलेश्वर अपनी रचनात्मक क्षमता और जनसामान्य के साथ घुले-मिले रहने के कारण किस प्रकार सम्पूर्ण कथा साहित्य के लिए एक अनिवार्य ताकात बन गये हैं । अनुभव जब वस्तु रूपान्तरित होते हैं, तब रचना का आकार ग्रहण करते हैं ।"(१)

कमलेश्वर जी की पात्र सृष्टि विलक्षण है । वे जिस समाज को अपनी रचनाओं में पुनः सर्जित करते हैं, उस समाज से उन पात्रों का चयन करते हैं, जो सामाजिक चिंताओं के प्रति पूर्णतया जागरूक हैं, और उन्हें दूर करने के लिए प्रतिबद्ध हैं । ऐसे पात्रों की संख्या कम नहीं है, बल्कि इतनी अधिक है कि

पूरा जागरूक समाज उनके उपन्यासों में चित्रित हुआ सा लगता है । स्पष्ट है कि रचनाकार की जागरूकता अपने पात्रों के माध्यम से ही रचनाओं में आकार ग्रहण करती है ।

कमलेश्वर की विशेषता है कि उन्होंने हमेशा अपनी जन्मभूमि को महत्त्व दिया है । अपने प्रथम उपन्यास '''एक सड़क सत्तावन गलियाँ में अपने कस्बे मैनपुरी का जिक्र किया है । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास की भूमिका में लिखा है - ''मेरे लिए यह उपन्यास उतना ही प्रिय है, जितनी मेरे लिए माँ और मेरी जन्मभूमि या माँ बेच दी हो ।''(२) उनके प्रथम उपन्यास 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' की कथा की संपूर्ण पृष्ठभूमि मैनपुरी कस्बे की है । कस्बे की मयन देवता की बसाई हुई इस बस्ती की जिंदगी की धुरी है - यह रिकट गंज की सराय झमनलाल की मंडी और मोटरों के अडडे, औरतों के तीज त्यौहार, मनौती पूजा के ठिकाने हैं - शीतला देवी, गना देवी, सैयद की मज़ार, बाबा का थान और नीम के नीचे मयन देवता की मूरत । दो चार मौके ऐसे जरूर आते हैं, जब मर्द औरतों का सम्मिलित रूप दिखाई देता है - सदानंद आश्रम में साधु समागम हो या मंडी में रामलीला शुरू हो ।

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' से लेकर 'कितने पाकिस्तान' तक यह पात्र-सृष्टि की विलक्षणता निरंतर समृद्ध और तीक्ष्ण होती चली गई है । इसलिए स्वाधीनता पूर्व की उथल-पुथल और स्वतंत्रता के प्रति घनीभूत लगाव की अभिव्यक्ति के साथ स्वतंत्र भारत की छबियाँ उनके उपन्यासों में जिस रूप

में आती है, वह रूप कमलेश्वर जी की सामाजिक जागरूता को स्पष्ट करता है । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' के सरनाम सिंह को लेकर 'कितने पाकिस्तान' तक की यह जागरूकता उस समाज की जागरूकता है, जिसे कमलेश्वरजी जैसा यथार्थवादी रचनाकार उस समाज में देखना चाहता है जो यह राजनीतिक ढकोसलों से दूर हो, आर्थिक और सांस्कृतिक दारिद्रय मिटे तथा ऐसे भारत का निर्माण हो, जिसमें राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं धार्मिक विषमता नाम की कोई चीज न रहे, परस्पर समानता से समाज को निरंतर उन्नति प्रदान करे ।

विशिष्ट रचनाकार की अग्रिम विशेषता यह है कि समाज को उस दृष्टि से देखता है, जो दृष्टि सामाजिक जीवन को स्त्री और पुरुष की असमानता, या हीन और श्रेष्ठ की कृत्रिमता में बांटकर नहीं रखती है । वह उस दृष्टि से समाज की धुँधली आकृति को स्पष्ट करता है, जिससे समाज की प्रगतिशील और बहुआयामी उर्ध्वगामी छबि निखर सके । कमलेश्वर में यही छबि निखर कर आती है । इसलिए उनके पात्र पुरुष वर्ग की अहमन्यता और नारी वर्ग की निम्नता से ऊपर उठकर समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

(२) कमलेश्वर के उपन्यासों की पात्र–सृष्टि में सामाजिकता के स्वर

कमलेश्वर का प्रथम उपन्यास 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' में लेखक ने देश व समाज की परिस्थितियों के मध्य, सरनाम की पात्रसृष्टि के द्वारा तत्कालीन विषमताओं को उभारा है । स्वाधीनतापूर्व के समाज का चित्र और स्वातंत्र्योत्तर समाज का चित्र उभारा है । स्वतंत्रता प्राप्ति के सुखद सपनों में, अपने भविष्य के उत्कर्ष में कितनी ही युवा पीढ़ियों ने कितने सपनों को सँजोया था । लेखक ने 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास में ठोस यथार्थ को प्रस्तुत किया है । बेरोजगारी, मँहगाई में पीसता हुआ मानव, परम्परागत रूढ़ियों एवं धर्मान्धता में फँसा हुआ मानव, जो समाज का अभिन्न अंग है । समाज में रहकर ही मानव का उत्थान होता है पर जहाँ समाज की विषमताएँ ही मानव को निगलना शुरू करें, वहीं मनुष्य का विकास रूँध जाता है फिर भी उसके भीतर की अच्छाइयाँ अभर आती हैं । लेखक के उपन्यास की पात्रसृष्टि में नायकत्व बिखर गया है, फिर भी सरनामसिंह को नायकत्व दिया जा सकता है । सरनामसिंह उपन्यास के प्रारंभ से लेकर अंत तक किसी न किसी रूप में सभी पात्रों से जुड़ा हुआ है । सरनामसिंह, शिवराज और रंगीले के खंडित व्यक्तितत्त्व में सरनाम का व्यक्तितत्त्व अधिक आकर्षक है एवं अधिकाधिक संवेदना, प्रेम और सामाजिकता के ताने बाने सरनामसिंह से ही जुड़े हुइ हैं ।

उपन्यासकार ने सरनाम के पात्र को उज्ज्वलता प्रदान करने का प्रयास नहीं किया है । यथार्थ रूप से उसकी पात्र सृष्टि भी यथार्थता के बोध से ही की गई है, फिर भी उसके चरित्र में कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जो बरबस ध्यान खींचती हैं । सरनामसिंह में मानवता का अंश विशेष रूप से मुखरित हो उठता है ।

सरनामसिंह एक ड्राइवर है, जो लारी चलाता है, उसने न करने जैसे कार्य किए हैं । मैनपुरी कस्बे में उसके लिए कस्बे के निवासी कहते हैं - "शराबी कबाबियों में कौन से गुन नहीं होते ।' समाज की विषमताओं ने उसे पीस ड़ाला था, फिर भी उसमें मावनता का अंश मुखरित हो उठता है । वह शिवराज का शुभचिंतक है । वह नहीं चाहता कि मेरी तरह शिवराज की जिंदगी तहस-नहस हो जाए । वह शिवराज जैसे भोले-भाले कोमल निर्दोष बच्चे को समुद्र रूपी दुनिया की विषमताओं से डूबने से बचा लेता है । आश्रम से भागे शिवराज को सरनाम के यहाँ पनाह देकर एक बेसहारा अनाथ लडके की जिंदगी को सँवारने का प्रयास करता है, और यही शिवराज- "कुछ दिनों सरनाम के बाहरवाले कमरे में रहा, फिर उसके घर और जीवन का अंग बन गया ।"(३) सरनाम के दो रूप हैं एक तो वह डकैतियाँ डालता है तो सिर्फ अमीरों के वहीं, उसमें भी वह नियमों के अनुरूप ही कार्यान्वित रहता है । डकैती के दौरान ही वह अपने डकैत मित्रों के हाथ में से बंसरी की इज्जत बचाता है । अपने साथी के साथ झगड़ा मोल लेता है । डकैती के पश्चात

भरी अदालत में बंसरी उसे पहचानने से इनकार कर देती है । अपने पर किए गए अहसान का बदला चुका देती है, वैसे सच बात तो यह है कि उसके इन्कार में भी उसका इकरार झलकता था – सरनाम के हृदय में – "सरनाम के दिल में बंसरी की अजीब–सी अनुभूति थी – एक सताई हुई दयावान नारी की, एक नासमझ लड़की की । एक हारे हुए दुश्मन की, एक जीते हुए साथी की ।"(४)

सरनाम बंसरी की इज्जत बचाके सत्कार्य करता है, समाज में चाहे सरनाम का नाम बदनाम हो, फिर भी वह सही इन्सान की तरह जीने की कोशिश में लगा रहता है । एक दिन अनायास मेले में सरनाम की बंसरी के साथ मुलाकात होती है, प्रेम की अभिव्यक्ति, स्पर्श के माध्यम से हो चुकी थी, वह उसके लिए अनिवर्चनीय था ।" सरनाम ने प्रेम किया तो सिर्फ बंसरी से – वह उसे पत्नी बनाना चाहता है ।"(५)

रंगीला चारसौ रुपये में नारी का सौदा करता है, जब सरनाम बंसरी को देखता है, तो वह अतिशय दुःखी हो जाता है । बंसरी रंगीले की पत्नी बन गई थी, सरनाम बंसरी अपने मित्र की पत्नी के रूप में ही उसे देखता है । अपनी प्रेमानुभूति वेदना को हृदय में ही दफना देता है । सरनाम और रंगीला दोनों की मित्रता घनिष्ठ थी, फिर भी रंगीला सरनाम के विरुद्ध झूठी गवाही देने में फँस जाता है और उसे तीन साल की सज़ा हो जाती है, फिर भी सरनाम अपनी मित्रता का भाव छोड़ता नहीं है । रंगीले के जेल जाने के पश्चात गर्भवती बंसरी को अस्पताल ले जाता है, अस्पताल का बिल अदा करता है और सही

सलामत उसके घर तक उसे पहुँचाता है और कहता है – "किसी चीज की जरूरत हो तो बोल देना ।"(६)

लेखक ने 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' द्वारा देश एवं समाज का चित्र उभारा है । स्वतंत्रता के पश्चात भी भारतीयों की दशा में कोई परिवर्तन नहीं आया । गाँव में फैली धर्मान्धिता, आश्रम के साधुओं पर अंधविश्वास, रामलीला मंडली में फैला व्यभिचार सब ओर लेखक की नज़र है, उनसे कोई अछूता नहीं है । विषमताओं के थपेड़ों ने सरनाम की बाल्यवस्था को ही खत्म कर दिया । समाज में फैली असामाजिकता, असमानता ने उसे उस मुकाम तक पहुँचा दिया था, फिर भी सरनाम के हृदय में बसी इन्सानियत खत्म न हुई । वह अपने मित्रों को बचाता रहा खुद बुराइयों से लड़ता रहता है, उसकी बची हुई इन्सानियत उसे समाज में सही नागरिक बनने का मौका भी नहीं देती है ।

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' का रचनाकार बखूबी जानता है और इसीलिए वह एक स्थान पर अपने नायक सरनामसिंह से कहलाता है – "यहाँ सब जीने के लिए मर रहे हैं । मालिक और मजदूर, वकील और मुहर्रिर, दुकानदार और नोकर– सभी एक नाव में हैं और उस नाव के चारों ओर एक तरह का तूफान उमड़ रहा है ।"(७) आगे वह अपनी बात को स्पष्ट करते हुए कहता है – "इन धर्ममंडलियों से लड़िये डाक्टर साहब, जो यहाँ के मजदूरों को सोचने–समझने का मौका नहीं देतीं, इन ओझा और पाखंडियों से लड़िये जो मजदूर के पसीने की कमाई चाट जाते हैं । उँची जाति के लोगों से लड़िये जो

आदमी नहीं बनने देते । मंडिवालों से लड़िये जो मुनाफे के लिए बरसात में गल्ले को गोदामों में बंद करके बाहर भेजने के लिए रोक रखते हैं । जिला बोर्ड, चुंगी के अफसरों से लड़िये जो बदमाशी करते हैं ।"(८) सरनाम समाज के अन्य सभी क्षेत्रों की बुराइयों को जानता है, सरनाम का आक्रोश बड़े कठोर शब्दों से निकलता है ।

"विचारों के साथ साथ तरह-तरह के कोमल और कठोर भावों को भी इस उपन्यास में पर्याप्त कुशलता के साथ अभिव्यक्त किया गया है । आदमी में जितनी भी तरह की अच्छाइयों और बुराइयों हो सकती हैं, उसके भीतर धृणा और प्रेम, हिंसा और अहिंसा आदि के भावों को जिस तीव्रता के साथ इस उपन्यास में अभिव्यक्ति मिली है, वह दूसरे हिन्दी उपन्यासों में प्रायः कम ही हुई है ।"(९)

सरनाम में समाज की यथार्थता का बोध है, वह अपने समाज की स्थिति से अच्छी तरह परिचित है । उसे ज्ञान है मैनपुरी कस्बा किस प्रकार पूंजीपतियों के शिकंजे में है । तो पीछे अंग्रेजों की उदासीनता, स्वातंत्र्य संग्राम ज़ोरशोर से चल रहा था । सरनाम का खुद का जीवन अस्तव्यस्त है, जीवन जीने के संघर्ष ने उसे इस मुकाम तक पहुँचा दिया कि वह समाज में अपना मुक्कमल स्थान तो बना नहीं पाया ना ही मैनपुरी कस्बे के लोग उससे मुँह लगते थे । सरनाम अपनी तरह से जिंदगी जीता है । समाज का कौन सा शख्स कितना गहरा है, सही है उसे सब ज्ञात है । फिर भी वह चुप है । गाँव में धर्मान्धता फैली हुई

है, शिवराज के पिता अपने पुत्र शिवराज को अंधविश्वास में आश्रमवालों के हवाले कर देता है, उसकी बाल्यावस्था पर ग्रहण लग जाता है, पर सरनाम की सामाजिकता ने उसे बचा दिया है । उसी प्रकार समाज से दूर रहकर वह अच्छे कार्यकरने के लिए सदैव मानसिक, शारीरिक रूप से तैयार रहता है । मित्र द्रोह रंगीला का करता है, फिर भी उसकी पत्नी उसकी अनुपस्थिति में वैश्या न बने, बुरे कर्म न करे इसलिए कहता है – 'जरूरत हो तो मुंह खोल देना ।' सरनाम का पात्र समाज में भले उच्च स्थान न रख सका हो किंतु उसमें सामाजिकता है, इन्सानियत है ।

कमलेश्वर सामाजिक आस्थाओं के कथाकार हैं । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास के पश्चात उनका अन्य उपन्यास – 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' एक सामाजिक यथार्थवादी उपन्यास है । आज का यथार्थ आम आदमी के विरुद्ध है, आज के समाज का चित्र भिन्न है । आज का आदमी सामाजिक और आर्थिक शोषण की हिंसा भोग रहा है । शोषक वर्ग की हिंसा के कितने व्यक्त अव्यक्त तरीके हैं, जिनका शिकार एक आम वर्ग का इन्सान होता है । 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' उपन्यास में लेखक ने श्यामलाल जैसे निम्न परिवार की दास्तान को चित्रित करने के साथ-साथ सामाजिक मूल्यों को आदमी ने किस तरह से (विघटित) किया है उसकी वेदना को व्यक्त किया है । ''उपन्यास में जीवन संघर्ष का चित्रण भी बेहतर ढंग से और बड़े पैमाने पर हुआ है क्योंकि इसमें परिवार का प्रत्येक सदस्य अपने-अपने ढंग से संघर्ष

में जुट जाता है, तथा जिंदगी के अभावों से लड़ता हुआ उसे किसी प्रकार थोड़े अंशों में ही सही बेहतर बनाकर जीने की कोशिश करता है ।"(१०)

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' की एक ओर बड़ी विशेषता यह है कि वह ययार्थवादी शैली में लिखा होने के बावजूद यह एक प्रतीकात्मक उपन्यास भी है और इसमें प्रतीकात्मकता का निर्वाह इतने सहज रूप में हुआ है कि कहीं भी अटपटा नहीं लगता । उपन्यासकार ने दुनिया को समुद्र के रूप में, श्यामलाल को ज़हाज एवं उसके पुत्र वीरेन को जहाज के कप्तान के रूप में चित्रित कर यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि समाज रूपी भीड़ में मध्यवर्गीय परिवार कहीं भी अपना सचोट, ठोस स्थान प्राप्त करने में असमर्थ रहता है । समाज में चारों ओर छल-छद्म वृत्ति भरी हुई है, किस पर विश्वास किया जाए ? पारिवारिक संबंधों में कटुता व्याप्त होने के कारण आर्थिक विपन्नता ही है । समाज में मध्यवर्गीय परिवार को सामाजिक आर्थिक अनेक विषमताओं का समाना करना पड़ता है, जिसके कारण जीवन के मूल्य टूट जाते हैं, संबंधों में खोखलापन-बनावटीपन आ जाता है ।

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' की पात्रसृष्टि में मुख्य पात्र श्यामलाल है, जिसे अनेक उँची आकाक्षाएँ हैं । लेखक ने श्यामलाल के पात्र के द्वारा उसकी वैचारिकता को भी स्पष्ट किया है । कस्बाई जीवन से महानगरीय जीवन जीने का अभिलाषी दिल्ली महानगर कितना दु:खी होता है, यहाँ तक की उसका समूचा परिवार तिनके की तरह बिखर जाता है "एक कस्बे का आदमी बड़े

शहर में जाकर जिस तरह भटकता, अकेलेपन और सूनेपन को महसूस करता है इसका संकेत भी इसमें किया गया है ।"(११) श्यामलाल दिल्ली में आकर अनेक विकट समस्याओं से घिर जाता है आर्थिक उपार्जन का सेतु टूट चुका था । दिल्ली में आते ही उसकी नौकरी छूट जाती है यहाँ तक कि चोरी का इल्जाम भी श्यामलाल के सिर पर ही आता है । एक तो आमदनी नहीं, दूसरी ओर हरा-भरा परिवार, श्यामलाल के परिवार में वह और उसकी पत्नी रम्मी, दो पुत्रियाँ तारा और समीरा एवं पुत्र वीरेन, जो बारहवीं कक्षा का विज्ञानप्रवाह का विद्यार्थी है । आर्थिक संक्रमण और सामाजिक परिस्थितियों में श्यामलाल घिर जाता है ।

मध्यवर्गीय समाज की विडम्बना गहरी है । समाज में बड़े-बड़े शोषक पूंजीपति वर्ग वे चाहे जो मनमानी करें, गरीबों का आर्थिक, शारीरिक शोषण करें, खुल्ले आम सरकार के साथ आयकर की चोरी करे, देश और समाज़ के साथ मक्कारी करें, चाहे किसी जरूरतमंद की इज्जत का सौदा करे, उन पर कोई उँगली उठाने की जुर्रत नहीं करता, किंतु एक आम सामान्य मध्यवर्गीय इन्सान के सिर पर चोरी का इल्ज़ाम लगने से नौकरी से हाथ धोने पड़ते हैं, यहाँ तक कि किसी अन्य स्थान पर भी उसे नौकरी नहीं मिलती क्योंकि उसके माथे पर चोरी का कलंक लग चुका होता है । समाज उस व्यक्ति को नोंच देता है, उस पर थू-थू करके उसे धिक्कारता है । श्यामलाल का परिवार आर्थिक और सामाजिक विषमताओं के शिकंजे में फँस चुका था । यहाँ तक

नौबत आती है कि उसकी बेटी तारा चालीस रुप ये माहवार से हरवंश की दुकान पर नौकरी पर लग जाती है । श्यामलाल उसे इज़ाजत भी दे देता है – "जैसे घर को सिर्फ चालीस रुपये माहवार की जरूरत थी ।"(१२) "संपत्ति और संतति का मोह मनुष्य को अनादिकाल से रहा है । इन दोनों से बढ़कर आज व्यक्ति अपनी 'जिंदगी' को महत्त्व दे रहा है । अपने अस्तित्त्व को बनाए रखने के लिए वह मूल्यों को तोड़ भी रहा है । मूल्यों को इस तरह रौंद देने के बाद वह और अधिक अकेला हो जाता है ।"(१३) श्यामलाल को प्रतीत होता है कि वह सिर्फ एक फालतू चीज की तरह रह गए हैं, जिसे फेंका नहीं जा सकता, सिर्फ बर्दाश्त किया जाता है, जिसे सहेजा भी नहीं जाता, सिर्फ होने को महसूस किया जाता है ।"(१४)

भारतीय समाज का ढाँचा ही इस प्रकार बना है कि पुरुषवर्ग पिता और भाई आर्थिक अर्जन करें और परिवार के सदस्यों की मूल जरूरतें पूर्ण करें, उन्हें रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, संस्कार और संरक्षण प्रदान करें, किंतु श्यामलाल घर की एक मात्र फालतू चीज बन जाता है । समाज की बदलती परिस्थितियों ने मानवीय मूल्यों का ह्रास किया है । जब एक जरूरतमंद लड़की अपने परिवार के सदस्यों का गुज़रान चलाने के लिए जब घर से बाहर कदम निकालती है उस समय उसे कहाँ से कहाँ गुजरना पड़ता है । घर की इज्जत जब घर के सदस्यों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने लग जाती है तब उसे – 'कुछ पाने के लिए कुछ खोना पड़ता है । परिणाम स्वरूप तारा अपनी इज्जत

खो बैठती है और वह गर्भवती हो जाती है । नारी समाज के दरिन्दों के लिए एक भोग का साधन मात्र बन गई है । उसकी आर्थिक विकट परिस्थितियों का फायदा उठाना आज के समाज के ठेकेदारों का जैसे हक बन गया है । समाज नारी के प्रति सदा क्रूर और आक्रमक रहा है, उसे बराबर इस्तेमाल किया गया है । कमलेश्वर ने बड़ी बेबाकी से समाज के उस सत्यो नंगा किया, जिसका समाज अभ्यस्त हो गया है, या जिसे देखकर भी वह देखना नहीं   चाहता । वह मायोपिया का शिकार है । उसकी संवेदना पथरा गयी है, ठंडी हो गयी है ।"(१५) समाज में यह परिस्थिति सिर्फ तारा की नहीं है, अपितु असंख्य युवा लड़कियाँ इसका शिकार बनती हैं । तारा की पड़ोसन की बुआ की कुंवारी लड़की का भी भ्रूण (गर्भपात) करवाया गया था । श्यामलाल वैसे ही अनेक विषमताओं से कसा हुआ था, पर श्यामलाल के नसीब ने यारी दी कि तारा को उस व्यकित ने हरवंश ने स्वीकार कर लिया, उसे पत्नी का दरज्जा देकर समाज में सम्मानित स्थान दिया ।

श्यामलाल की दूसरी लड़की समीरा आर्थिक परिस्थितियों से जूझती है । उसकी पढ़ाई छूट जाने पर घर में अकेली बैठी सायों को देखती रहती है - "जिनसे दिल की कोई बात न तो की जा सके, जिनके साथ सुख दुःख और अकेलापन बाँटा न जा सके, उन्हें सिर्फ परछाई से क्या समझा जाए ? उसका भाई वीरेन घर की दयनीय आर्थिक दशा को देख जल्द ही जल्द नौकरी प्राप्त करना चाहता है और वह उसी पढ़ाई में लगा हुआ है । पर पड़ोस की लड़की

ममता की ओर भी आकर्षित हुए बिना नहीं रह पाता है, अपने दायरे का उसे अनुमान है । वीरेन की रात–दिन की मेहनत रंग लाती है । वह परीक्षा में जैसे ही प्रथम स्थान से उतीर्ण हो जाता है, उसे नेवी के ज़हाज पर नौकरी मिल जाती है ।

प्रेमचंद सामाजिक उपन्यासकार हैं । उन्होंने लिखा है – पिता का कर्ज बेटे को ही उतारना होता है । वीरेन को नौकरी मिलते ही श्यामलाल के परिवार का रहन सहन बदल जाता है । रम्मी के सफेद बालों पर काला कलफ लग जाता है, समीरा की कॉलेज की पढ़ाई प्रारंभ हो जाती है । श्यामलाल की हिंमत खुल जाती है, कबाड़ी माल का बिना रुपये, जाली चेक से सौदा कर दलाली प्राप्त करता है । धन–अर्थ के बलबूते से ही मानव का रूप–कलेवर बदल जाता है । समाज में इज्जत और स्थान भी पद के द्वारा ही मिलता है, मानव की आर्थिक स्थिति रिश्तों को निर्धारित करता है, जीवन की कठोर सच्चाइयाँ परम्परित रिश्तों में नया अर्थ पैदा करती हैं । समाज के सामाजिक आर्थिक स्वरूप के बदलने में रासायनिक परिवर्तन कर देता है ।उत्पादन के स्रोत तथा साधनों के साथ जो रिश्ता आदमी का होता है, उसी के तहत आदमी और आदमी का रिश्ता निर्धारित होता है ।"(१७)

धीरे धीरे श्यामलाल को अनुभव हो रहा था कि वह अब कोई – 'फालतू चीज नहीं है' । अर्थ की शक्ति के कारण श्यामलाल में सघनता आ गई थी और अभावों भरी जिंदगी से छुटकारा मिल गया था, किंतु मध्यवर्गीय

परिवारों में खुशियाँ अधिक समय टिकती नहीं हैं । वीरेन उत्तरी ध्रुव की ओर रवाना हुआ था, समुद्र में तूफान आने से वह लापता हो जाता है । श्यामलाल के परिवार रूपी ज़हाज ने जल में समाधि ले ली । अभावों भरी जिंदगी वापिस श्यामलाल के घर का द्वार खटखटाने लगी, समीरा की कॉलेज पढ़ाई बंद हो गयी, रम्मी के बालों का कलफ निकल गया । हलवाई से लिया गया कर्ज श्यामलाल को परेशान करने लगा । श्यामलाल का परिवार आर्थिक दलदल में धँसने लगा ।

कमलेश्वर ने 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' उपन्यास में बताया है, आज के विषम और संघर्षपूर्ण जीवन में जीने का संघर्ष नितांत जटिल होता जा रहा है । इसके पीछे चाहे कारण सामाजिक व्यवस्था के हों या और । उपन्यास में कमलेश्वर ने इस तरह की परिस्थितियों के कारण संबंधों में परिवर्तन का उद्धाटन किया है । यह सब कुछ व्यक्तिगत स्वार्थों के कारण भी है, और आर्थिक विपन्नता भी इसमें कुछ अंश में सन्निहित है, तारा अपनी माँ को आया बनाने में संकोच नहीं करती । कमलेश्वर ने आज के युग के संबंधों का पर्दाफाश किया है । माँ-बाप और बेटी, पति-पत्नी आदि के संबंध सिर्फ संबोधन तक मर्यादित हो गए हैं, उन संबंधों की स्निग्धता नष्ट हो चुकी है - "आर्थिक संकट रूपी विश्वामित्र ने हरिश्चंद्र रूपी मध्यम परिवार को जाने किसके हाथ बेच दिया । हरवंश, श्यामलाल और रम्मी को बीरेन की मौत इसलिए स्वीकारने को कहता है ताकि उसके बदले में मुआवज़ा मिल सके ।

वह उन्हें बेटे की लाश पर मकान और बाकी भविष्य की तस्वीर बनाने की सलाह देता है । मेरा मतलब है– सब समझकर काम कीजिए अगर वीरेन की मौत मान ली जाए तो सरकार से मुआवज़ा भी मिल जाएगा ।"(१८)

"आज के इस जीवन में रिश्तों के अर्थ बदल रहे हैं, जो विश्वसनीय ही लगता है । ये सारे संबंध आर्थिक भूमिका पर बनते बिगडते हैं । हमारे सारे जीवन चक्र को प्रभावित, संचालित और नियमित करनेवाली महाशक्ति आर्थिक केन्द्र है । कमलेश्वर के उपन्यासों में आज के क्रूर और नग्न सत्य का अंकन आज की सामाजिक स्थिति की अनुरूपता लिये हुए है ।"(१९) रम्मी अपने बेटे को मृत्यु का मुआवजा लेने के लिए नेवी दफतरों के चक्कर काटती है । यहाँ तक कि मुआवज़े के लिए पति को भी छोड़ देती है, समीरा को नर्स के होस्टेल में भर्ती कर देती है, श्यामलाल कपड़ों की फेक्टरी में चोकीदारी की नौकरी मिल जाती है और रम्मी तारा के यहाँ आया की जिंदगी गुजारने पर मजबूर हो जाती है । मकान मालिक इन तीनों के पीछे किराया वसूली के लिए पड़ गया था यहाँ तक कि – "जब से मकान मालिक ने श्यामलाल से बोलना बंद कर दिया था, तब से उन्हें शक होने लगा था कि उसने मुकदमा कर दिया है या नोटिस किसी भी दिन आ सकता है ।" दूसरी ओर घर में कोई आता तो दिल धड़कने लगता कि पता नहीं कौन आ गया है, श्यामलाल ने जगह–जगह से कर्जा ले रखा था और वे लोग आकर उन्हें बेइज्जत कर जाते थे ।" इन सब परिस्थितियों के कारण ही श्यामलाल का परिवार बिखर जाता है, तितर–बितर

हो जाता है । समाज में सिर्फ पदाधिकारी और धनवान की ही इज्जत होती है, चाहे उनके पास चारित्रिक विशेषताएँ हों या न हों कोई फर्क नहीं पड़ता है । श्यामलाल के पास न पद था न धन सिर से एड़ी तक वह कर्ज में डूबा हुआ था । श्यामलाल का परिवार समाज से कटा हुआ, खोखले संबंधों से भरा हुआ आर्थिक विषमताओं के समुद्र में खो गया है । समाज के थपेड़ों ने, प्रहारों ने उन्हें आहत कर दिया । समीरा बदलती परिस्थिति रूपी अग्नि में तप कर पूर्ण समझ चुकी है - खून के रिश्ते से अलग संघर्ष के रिश्ते कायम हो गए हैं - इसलिए दुःख और सुख, हंसना और रोना, बहुत मामूली सी चीजें रह गई हैं । इनका अब कोई वजूद नहीं रह गया है । अब चारों और सन्नाटा है ।" समीरा जब भी होस्टेल की छत पर चढ़कर चारों ओर देखती है । तब समुद्र ही समुद्र नज़र आता...भीड़ का समुद्र....।(२०)

कमलेश्वर के पात्र समाज से चोट खाए हुए हैं । समाज का सही यथार्थ चित्र उपस्थित करने के लिए उनकी कथा के पात्र हर कदम पर, हर मोड़ पर समाज से मार खाए हुए हैं, समाज के रीत-रिवाज, परंपराओं से वे चाहे कितना ही आत्मीयता से जुड़ना चाहे, पर निष्ठुर समाज एवं समाज के इन्सान, अन्य परिवार की बेबसी का फायदा तो उठाते ही हैं पर अन्यायपूर्ण कठोर व्यवहार उनको लड़खड़ाने को देता है । वास्तव में समाज एक समुद्र के समान है, उसकी लहरें रूपी विषमताएँ मनुष्य को बारबार टकराकर उन्हें शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक रूप से खत्म कर देता है ।

संदर्भसंकेत

१. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ.

२. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ.

३. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. २९

४. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ३८

५. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ६७

६. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ११८

७. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ११८

८. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, कमलेश्वर, पृ. ११८

९. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. १८५

१०. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. १९०

११. कहानीकार कमलेश्वर : संदर्भ और प्रकृति, सूर्यनारायण रणसुमे, पृ. ३८

१२. समुद्र में खोया हुआ आदमी, कमलेश्वर, पृ. १२०

१३. कहानीकार कमलेश्वर : संदर्भ और प्रकृति, सूर्यनारायण रणसुमे, पृ. ११

१४. समुद्र में खोया हुआ आदमी, कमलेश्वर, पृ. १३

१५. कमलेश्वर सामाजिक आस्थाओं का कथाकार, डॉ. चंद्रशेखर कर्ण, पृ. १५१

१६. समुद्र में खोया हुआ आदमी, कमलेश्वर, पृ. ०६

१७. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. १५२

१८. हिन्दी के लघु उपन्यास और उनके उपन्यासकार, पृ. १५८

१९. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. २०८

२०. समुद्र में खोया हुआ आदमी, कमलेश्वर, पृ. ९८

षष्ठ अध्याय

कमलेश्वर के उपन्यासों में विचार–सृष्टि की सामाजिकता

(१) भूमिका

(२) विचारधारा और विचार–सृष्टि

(३) स्वाधीन भारतीय समाज का वैचारिक आधार और कमलेश्वर के उपन्यास

(४) उपसंहार : लेखकीय दृष्टि का वैचारिक प्रतिफलन

(१) भूमिका

कमलेश्वर के प्रारम्भिक उपन्यास 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' और 'डाक बंगला' में रूप बंध भी है। उपन्यासों के कथानक साधारण मनुष्य के अनुभव के दायरे से लिये गये हैं । इसीलिए कमलेश्वर के उपन्यासों में सहजता है । कमलेश्वर ने अपने उपन्यासों में व्यक्ति के आंतरिक संघर्ष और बाह्य इयत्ता को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा की है । मानवीय मस्तिष्क के लिए चलने वाले संघर्ष कितने गहरे....आन्तरिक धरातल पर उन सूत्रों का अनुसंधान भी करते जाते हैं, जिनके कारण वह भविष्य के सम्भावित रूपों को चित्रित करते हैं, यह संघर्ष केवल वर्तमान के लिए नहीं, अपितु उस भविष्य के लिए भी होता है जो वर्तमान विद्रूपता में और अधिक अंधकारमय हो गया है । "वर्तमान परिस्थितियों में संघर्ष की दिशा निश्चित है, किन्तु संघर्ष के रूप में कई हो सकते हैं । प्रश्न मर्यादा के अनुसंधान का उतना नहीं है जितना अमर्यादा, अनीति और गलत परंपराओं के टूटने का है ।"(१) कमलेश्वर ने अपने परिवेश में जीवित रहने और उसकी गतिशीलता को महसूस करने की बात उठायी है उनके उपन्यासों में यह परिवेश बहुत स्पष्ट रूप से उभरता है, वे कलागत मूल्यों को जीवन से अलग नहीं मानते अपितु, जीवन के भीतर अर्जित मानते हैं ।

मैनपुरी कस्बे से जुड़े हुए कमलेश्वर ने अपनी प्रारंभिक कहानियों और उपन्यास 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' और 'लौटे हुए मुसाफिर' – एक निश्चित वर्ग को मानकर लिखे हैं । कस्बाई निम्न मध्यवर्ग– वैषम्य, शोषण और सामाजिक असमानता का चित्रण लेखक ने अपनी प्रगतिशील विचारधारा के आधार पर किया है । उनकी यह विचारधारा जीवन के संघर्षों से उत्पन्न हुई हर मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी वर्ग की है ।

आधुनिक संचेतना को कमलेश्वर ने अपने उपन्यासों के माध्यम से वहन किया है । आधुनिक कथाकारों की भाँति अपने परिवेश से कटकर कृत्रिम आभिजात्य में नहीं जाते । कमलेश्वर की कला कृतियों में रोजी–रोटी, पति–पत्नी की कलह और प्रेम–शंकाएँ–आस्थाएँ और निराशा आदि सब कुछ अपने यथार्थ रूप में आते हैं । सामाजिक दायित्व का निर्वाह एवं सोद्देश्यता उनके उपन्यासों की विशेषताएँ हैं । 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ', 'डाक बंगला', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'तीसरा आदमी', 'रेगिस्तान', 'सुबह दोपहर शाम', 'काली आँधी', 'कितने पाकिस्तान' कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा के आठ पड़ाव हैं । युग और समाज को एक सम्पूर्ण परिवेश से प्रकट करने की लेखकीय उत्कंठा के परिणाम स्वरूप लिखे इन उपन्यासों में लेखक की वैचारिक शक्ति का परिचय प्राप्त होता है । उपन्यासों में लघु किन्तु पूर्ण सामाजिक चित्र फलक प्रस्तुत किया गया है । युग बोध और युग सत्य को कमलेश्वर ने सदैव प्राथमिकता दी है ।

राजेन्द्र यादव के निम्नलिखित शब्द इस बात की पुष्टि करते हैं - "कमलेश्वर अपना सच नहीं बोल सकता, मगर युग और अपनी पीढ़ी का सच जरूर बोल सकता है उनके पास जबान है, उसे बात करनी भी आती है । क्योंकि इसी समय सच पर आकर बड़े बड़े जबानदार लोग चुप हो जाते हैं ।"

राजस्थान के चुनाव के अंतर्गत कमलेश्वर ने राजनीति का जो परिदृश्य देखा, गायत्रीदेवी का नाटकीय रूप देखा, सामंतवाद का समर्थन करती गायत्री देवी के दोहरे चेहरे को देखकर राजनीति की घिनौनी कुचालें, उठा-पटक को देखकर कमलेश्वर के मन में राजनीति एवं राजनीतिज्ञों से दुराव आ गया । कमलेश्वर ने अपने आस-पास चुनावों में देखा, उसीकी झलक 'काली आँधी' उपन्यास में उन्होंने प्रस्तुत की है । कमलेश्वर ने 'काली आँधी' उपन्यास में व्यंजित किया है कि किस प्रकार राजनीतिज्ञ धन के आधार पर वोटों की राजनीति कर रहे हैं, यह राजनीति का शुद्ध रूप नहीं है ।

राजनीति पर उन लोगों का अधिकार है जो देश की जनता को निरंतर शोषण और धार्मिकता के शिकंजे में कसा रखना चाहते हैं । राजनीति के नाम पर अंधश्रद्धा व्याप्त है । 'काली आँधी' की नायिका मालती लल्लूलाल कहती है कि रामायण का पाठ रखवाया जाए । जनता की संवेदनशीलता का नाज़ायज फायदा उठाया जाता है, जनता को गुमराह करके अपनी गद्दी को सुरक्षित रखने के उपाय ही इनका इनका एक मात्र उद्देश्य है ।

(२) विचारधारा और विचार सृष्टि

मानव संबंधों में आमूल परिवर्तन के साथ मानव चेतना में भी निरंतर परिवर्तन होना अनिवार्य है, यह परिवर्तन यथा समय होता रहता है, जो सापेक्ष रूप से स्वतंत्र है, चेतना का रूप-तत्त्व मानव-संबंधों में परिवर्तन होते ही बदलने लगता है । साहित्यकार अपनी वर्ग स्थिति और चेतना के अनुरूप ही अपने साहित्यिक विषयों का चुनाव करके उन्हें कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करता है । साहित्यकार अपने समाज की आवश्यकता के अनुसार ही अपने विचारों को बुनता है और उसीके अनुरूप वह विषय को चुनता है । साहित्य सृजन का आधार व्यक्तिगत होता है, परन्तु उसकी चेतना उस वर्ग में समाहित है जिस वर्ग में वह साँसें लेता है, जिस वर्ग में से रचनाकार ने अनुभव प्राप्त किए हैं ।

"किसी उपन्यासकार की केवल विचारधारा ही श्रेष्ठ साहित्य का निर्माण नहीं करती, वरन् उस साहित्यकार में गहरी संवेदना का होना भी अनिवार्य है । साहित्य का सर्जन केवल विचार प्रक्रिया तक सीमित नहीं है बल्कि वह इससे ज्यादा गहन व्यापक और मानसिक है । उपन्यासकार या लेखक जब तक स्वानुभवों से उस दृष्टि का सामंजस्य स्थापित नहीं करता, तब तक कोई श्रेष्ठ साहित्यिक रचना समाज को देना असंभव है । लेखक जिस समाज में जीता है उससे गहरा संबंध स्थापित करते हुए संवेदनात्मक जीवन ज्ञान प्राप्त करके उसी भाव दृष्टि तक स्वयं पहुँचता है ।"(१) केवल विचारधारा को लेकर ही रचे

गये साहित्य में कला मूल्यों की उपेक्षा संभव है, सिर्फ विचार प्रमुख साहित्य कभी जनवादी साहित्य हो ही नहीं सकता । सर्वोच्च साहित्य ही जनता में लोकप्रिय, और जनता का साहित्य हो सकता है । इसलिए साहित्य में कला और विचार का सामंजस्य बैठाकर ही साहित्यकार एक श्रेष्ठ रचना दे सकता है ।

"विचारधारा का अर्थ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं धार्मिक समस्याओं के प्रति व्यक्त किये गये विचारों की मान्यताओं की व्यवस्था । मार्क्सवाद के अनुसार विचारधारा बाह्य संरचना का हिस्सा होती हैं । वर्ग विभक्त समाज में विचारधारात्मक संघर्ष भी वर्ग संघर्ष के अधीन होते हैं ।"(२) रचनाकार अपनी विचारधारा को जीवन दृष्टि के रूप में विकसित करता है और नवीन जीवन दृष्टि जब रचना में घुल-मिलकर उपस्थित हो जाये तभी रचना प्रभावशाली हो सकती है । साहित्यकार अपने संवेदनशील विवेक द्वारा वास्तविक यथार्थ को आत्मसात करता है । लेखक जब अपने जीवन और यथार्थ से जितना ही आत्मीय रूप से साक्षात्कार करता है उसके व्यक्तित्त्व एवं अभिव्यक्ति का उतना ही विकास होता है । लेखक एक वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करता है, इससे उस वर्ग में प्रचलित सामान्य भावधारा भी उसके विकास में सहयोग प्रदान करती है, जो कलात्मक विवेक का रुप धारण कर साहित्य सम्बन्धी विचारधारा भी बन जाती है ।

(३) स्वाधीन भारतीय समाज का वैचारिक आधार और कमलेश्वरजी के उपन्यास

स्वाधीनता भारत के समाज का वैचारिक आधार तलाशने के लिए स्वाधीनता पूर्व की उन घटनाओं को नज़र अंदाज नहीं किया जा सकता । स्वाधीनता प्राप्त करने से पूर्ण अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुईं, जिन्होंने भारतीय जन मानस का निर्माण किया । सन् १८५७ में जब भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम हुआ तब कोई सोच भी नहीं सकता था कि आज से ९० वर्ष बाद भारत को स्वाधीनता मिलेगी और न यह कि स्वाधीनता देश के टुकड़े करके मिलेगी । यह भी नहीं सोचा था कि व्यापार करने आये अंग्रेज मुगल और अन्य सामंतों को हटाकर देश पर एक छत्र राज्य करने लगेंगे । अंग्रेजी राज्य इस दृष्टि से बड़ा महत्त्वपूर्ण था कि भारत राष्ट्र के रूप में उभरकर सामने आया और जो आंदोलन बंगाल में समाज सुधार के नाम पर चलाये जा रहे थे, वे आंदोलन सारे भारत में फैलकर सोई हुई जनता को उद्बुद्ध करने में सफल हुये ।"(३)

कमलेश्वर का उपन्यास साहित्य भी इसी वैचारिकता की नींव पर खड़ा है । 'सुबह दोपहर शाम' उपन्यास स्वाधीनता पूर्व की पृष्ठभूमि पर रचा हुआ उपन्यास है जिसमें १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का जिक्र किया गया है । सुबह दोपहर शाम उपन्यास में उपन्यासकार ने तीन पीढ़ियों के वैचारिक विकास को स्पष्ट किया गया है । सन १८५७ के संग्राम में बड़े बाबा ने अपने राजासाब

के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग किया । बड़ेबाबा 'सुबह दोपहर साम' उपन्यास की प्रथम पीढ़ी, दूसरी पीढ़ी अंग्रेजों की चाटुभरी करनेवाली निकली 'सुबह दोपहर शाम' का पात्र जसवंत जो अंग्रेजों के गुणगान करता रहता है । उपन्यास की तीसरी पीढ़ी सन्तो, जो देशप्रेमी परिवार में ब्याही गई और क्रांतिकारी देवर को सुरक्षा के लिए अंग्रेजों के सामने शेरनी सम, चंडिका का रूप धारण कर लेती है । उपन्यासकार ने 'सुबह दोपहर शाम' उपन्यास में स्वाधीनता पूर्व भारतीयों की वैचारिक मानसिकता के माध्यम से अपने विचारों को सशक्त रूप से पेश किया है ।

भारत को स्वतंत्रता तो प्राप्त हुई किन्तु देश दो खंडों में विभक्त हो गया । भारत-पाक विभाजन की विडम्बना में उपन्यासकार की भावुक आत्मा अत्यंत दुखी हो जाती है । 'लौटे हुए मुसाफिर' में राजनीतिक कुचक्र में पिसता हुआ भारतीय जन समुदाय का चित्र प्रस्तुत किया गया है । स्वाधीनता पूर्व हिन्दू मुसलमानों में एक भाईचारा दिखलायी देता था वह सीमाओं के विभाजन के साथ साथ मानो समाप्त हो गया । हृदय की सीमाओं का भी विभाजन हो गया । जातिवाद की समस्या खड़ी कर अपना उल्लू सीधा करनेवाले राजनीतिज्ञों ने हिन्दू एवं मुसलमानों को मोहरा बनाया । उपन्यासकार की पैनी विचारधारा ने उन काठ के उल्लुओं की कलई खोलकर रख दी । भारत-पाक विभाजन से संत्रस्त आम इन्सान, पाकिस्तान के सपने देखता, मुसलमान जाति, जो पाकिस्तान न पहुँच कर भारत के ही विभिन्न शहरों में बस जाती है , उन

सबकी मन:स्थिति को कमलेश्वर जी के उपन्यासों में उजागर किया गया है , इनसे जुड़ी सभी समस्याओं को उपन्यास में स्थान दिया गया है । 'लौटे हुए मुसाफिर' की नई युवा पीढ़ी जो किशोरावस्था में कहां गई थी और युवा होकर मजदूर के रूप में काम की तलाश में लौट आई है । इनका बड़ा ही मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया गया है ।

स्वाधीनता पूर्व की परिस्थितियों ने लेखक को सोचने के लिए बाध्य किया है, तभी तो कमलेश्वर की सूक्ष्म गहन सूझ उनके उपन्यासों के परिप्रेक्ष्य में देखने को मिलती है । विचारों के संत्रास से गुजरने की प्रक्रिया का ही यह परिणाम 'रेगिस्तान' में देखने को मिलता है । 'रेगिस्तान' उपन्यास का नायक विश्वनाथ देश को हिन्दी भाषा के एक सूत्र में बाँधना चाहता है । विश्वनाथ के विचारों में लेखक की वैचारिक प्रतिछाया कहीं न कहीं दृष्टिगोचर होती है । विश्वनाथ का चरित्र राष्ट्रभाषा प्रेम के प्रति आबद्ध है अपने देश के प्रति, देशवासियों के प्रति अनन्य लगाव को सूचित करता है । वह देश को एवं देशवासियों को गूंगा नहीं देखना चाहता, इसलिए उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम चारों दिशाओं को हिंदी भाषा के माध्यम से एकसूत्रता में बाँधने के अभियान में अपना संपूर्ण जीवन लगा देता है । उपन्यासकार के हृदय में कहीं न कहीं देश प्रेम का जज्बा है । वह उनके विचार के माध्यम से (प्रतिफलित होता है, विश्वनाथ जैसे चरित्र को गहरा सदमा लगता है । भारत पाक विभाजन ने सिर्फ देश की सीमाओं को ही नहीं बाँटा, परिवारों को, परिवार के सदस्यों को

भी बाँट दिया । अपना संपूर्ण जीवन रेगिस्तान बनाने वाला विश्वनाथ बदलते परिप्रेक्ष्य को समझ ही नहीं पाया । जनमानस की मानसिकता ही बदल गई थी ।

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यास के नायक सरनाम की सोच समझ का वैचारिक स्तर काफी उँचा है । चाहे वह बेरोजगार हो, परिस्थितियों के कुचक्र का शिकार बनकर डकैतियाँ डालता हो, चाहे जो भी कार्य करता हो, ड्राइवरी करता हो, पर बंसरी के साथ के अपने सारे रिश्ते भूल कर वह अपने आपको सही मित्र साबित करता है । मित्र के घर में डकैती नहीं डालता, मित्रता के नाम पर गद्दारी नहीं करता है, उसकी सोच सराहनीय है । बंसरी जब अस्पताल में होती है तो वहाँ जाकर अस्पताल का बिल अदा करता है और कहता है – किसी चीज की जरूरत हो तो बता देना । कमलेश्वर ने सरनाम के पात्र के माध्यम से सिद्ध किया है कि इन्सान अपनी परिस्थितियों का गुलाम है, परिस्थितिवश वह चाहे कोई भी बुरा काम करता हो, तो वह बेबसी से करता है किंतु उसके अंदर का इन्सान लाचार नहीं है, उसकी अच्छाइयाँ उसमें विद्यमान हैं । सरनाम अपने हृदय पर पत्थर रखकर बंसरी का दाम्पत्यजीवन सफल बनाना चाहता है । वह एक असफल प्रेमी भले रहा हो, फिर भी एक सही सच्चे प्रेमी की तरह अपनी भावनाओं की आहुतियाँ देकर अपना कर्तव्य अदा करता है । मित्र के रूप में भी सरनाम की वैचारिक सोच

काफी उमदा है । सरनाम पढ़ा लिखा नहीं है, किंतु उसकी सोच में लेखक की सोच का प्रतिबिंब झलकता है ।

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' उपन्यासका कथानक दो भागों में विभाजित है स्वतंत्रतापूर्व और स्वातंत्र्योत्तर दोनों परिस्थितियों में मानव पिसता है । स्वाधीनतापर्व कितने नौजवानों ने कितने सुंदर सपने देखे थे, किन्तु समय की गति और परिस्थितियों ने उनके सपनों को चकनाचूर कर दिया । उन्होंने ऐसे भारत की परिकल्पना नहीं की थी । एक भयंकर जोरदार हादसा उस युवा पीढ़ी को लगता है, जो सपनों की दुनिया से हटकर स्वतंत्रता-पश्चात् की परिस्थिति से धायल हो चुके थे ।

भारत-पाक विभाजन की दुःखद विडम्बना से लेखक का हृदय दर्द से रिसता हुआ प्रतीत होता है । भारत पाक विभाजन की विडम्बना को लेखक ने स्वयं नहीं सहा पर दूसरों के दर्द को देखकर जैसे वे खुद महसूस कर रहे हों । इस प्रकार उसे चित्रित किया है ।

"कमलेश्वर के विचार समय की समग्रता के साथ विकसित होते रहे हैं । वे कलाओं के विकास का आधार सामाजिक-साम्बंधिक अस्तित्त्व को मानते रहे हैं क्यों कि यही मानवीय मूल्यों का संरक्षण होता है । तथा सामाजिक नव-निर्माण संभव होता है ।"(४) कमलेश्वर हिन्दी के सर्वाधिक गतिशील उपन्यासकार हैं जिनके कथानक परिवेश और समय की आकांक्षाओं

के साथ बदलते रहते हैं । उनके कथानक में हिन्दी उपन्यास की बदलती त्वरा की प्रतीति तो है ही, उसकी अस्मिता भी है । उनके कथानक में भारतीय मानसिकता की सही तलाश हो सकती है ।

"कमलेश्वर लेखन को विश्वास की अभिव्यक्ति मानते हैं । इस विश्वास या आस्था की आवश्यकता इसलिए उन्हें पड़ी कि वे समाज से जुड़े हुए हैं । अस्तित्त्व का संकट, जो एक सामूहिक संकट है । लेखक की हैसियत से वे भी झेलते हैं, लेकिन अपने में उसे ठेलने की ऊर्जा भी पाते हैं । उन्होंने अपने संकट को दूसरे के संकट से तादात्म्य कर लेखन को सम्भव बनाया । इन्हीं संकट या यातनापूर्ण स्थितियों से उनका कथानक प्रसवित होता है ।(५)

"कमलेश्वर ने एक स्थान पर यह स्वीकारा है कि आज का कथा साहित्य दुनिया के व्यावहारिक और वास्तविक जीवन से जुड़ा है । फलस्वरूप आज का लेखक कुछ कहने के लिए अपने भीतर एक उबाल महसूस करता है । आज भी संक्रांति ने हमारी संवेद्य शक्तियों पर दबाव डाला है और चेतना को जागृत किया है । इससे आज का कथा साहित्य कल्पना के पंखों पर उड़ने की बजाय धरती से जुड़ा है, धरती की हर मरोड़ उसमें बिम्बित हुई है । वे यह मानते हैं कि न्याय के लिए संघर्षरत आदमी के प्रति उनका रवैया क्या है । वे अत्याचार पीड़ित या शोषित व्यक्ति या समुदाय या देश की जनता के प्रति उसके रुज को महत्त्वपूर्ण मानते हैं और यही उनके कथा-साहित्य की दिशा-दृष्टि तजवीज करती है ।"(६)

कमलेश्वर के कथा साहित्य की यात्रा में पडी रेखाओं को जिसने भी सूक्ष्मता से देखा है, उन्हें ज्ञात है कि कमलेश्वर ने वैचारिक और रचनात्मक दोनों ही स्तर पर सदा अपने को परिवेश और सामान्य जन से सार्थक ढंग से जोड़े रखा है । वे साहित्य की प्रक्रिया पर जोर देते हुए हैं कि सामान्य जन समुदाय से प्राप्त अनुभवों का अगर संवेदनशीलता से अर्थ तलाश करे, उन विचारों को सामान्य जन के हित में लगाया जाये, तभी वह लेखक सामान्य जन का पक्षधर और उसके हितों का प्रहरी हो सकता है ।

'मेरा पन्ना' में कमलेश्वर का कथन है – "यह पूरा देश अब इक भयंकर दलदल बन चुका है और इसे दलदल बनानेवाले लोग प्राचीरों परकोटों पर जाकर बैठ गये हैं और दलदल में धँसते दम तोड़ते आम आदमी के मरण का उत्सव मना रहे हैं ।"(७) आज के कथा साहित्य में आम आदमी की समस्याएँ और उनसे जूझते आदमी का विश्वास है, क्योंकि यह लड़ाई आर्थिक शोषण, सांस्कृतिक विषमताओं की सरहद पर निर्णायक रूप में लड़ी जा रही है । इस संदर्भ में कमलेश्वर क विचार – "ये मुजस्सिम आदमी की बदलती हुई धारणाओं, उनके प्रश्नों और चिंताओं की लिखित तहरीर ही नहीं , बल्कि समय में लिये गये उसके फैसलों की यथार्थ प्रतिलिपियाँ भी हैं ।"(८)

आज का लेखक प्रतिबद्ध है और वह मूल्यों की स्थापना में विश्वास रखता है । कमलेश्वर ने वर्तमान समय को बड़ी नजदीक से देखा है । आज का आदमी कदम–कदम पर कुचला जा रहा है । कभी वह आर्थिक शोषण का

शिकार बनता है तो कभी हिंसा का । न्यायतंत्र का कानून भी पक्षधर बना हुआ है । आज की विषम सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था ने मनुष्य का सारा सौंदर्य छीन लिया है ।

कमलेश्वर ने अपने लघु उपन्यासों में यथार्थ को विषय–वस्तु के रूप में ढाला है, जिनमें नये मूल्यों के प्रति आग्रह, नये सृजन की अकुलाहट और परिवर्तन की सम्भावना का संकेत है । कमलेश्वर के उपन्यासों में साफ, स्वस्थ जीवन दृष्टि और सम्भावनापूर्ण भविष्य का चित्र है । उनकी विषय–वस्तु में प्रवंचना धर्मी आदर्श, जटिल लक्ष्य तथा दिशाओं का घुमाव नहीं है । उनके साहित्य में विचार और भावना का सही संतुलन है । कमलेश्वर की लेखनी में सहजता है ।

कमलेश्वर की प्रारंभिक रचनाओं में कस्बाई जीवन संम्पूर्ण सत्य और शक्ति के साथ उभरा है । ऐसे उपन्यास अधिक व्यापक और समृद्ध हैं, जिन में कस्बे के चित्र उभर गए हैं । वहाँ के हर रंग, जिंदगी के हर पहलू को उपन्यासकार ने आत्मीयता से देखा और, परखा है और पहचाना है । उपन्यास में कस्बाई जीवन चित्रित करने में उपन्यास की व्यापकता में कहीं भी कोई बाधा नहीं आई है । उन्होंने सामाजिक पृष्ठभूमि में टकराते सामाजिक मूल्यों को अपने उपन्यास में मूर्त रूप दिया है । लेखक ने कस्बाई जीवन चित्रित करने में उपन्यास की व्यापकता में कहीं भी कोई बाधा नहीं आई है । उन्होंने सामाजिक पृष्ठभूमि में टकराते सामाजिक मूल्यों को अपने उपन्यास में मूर्त रूप दिया है ।

लेखक ने कस्बाई जीवन के जन समुदाय की मानसिकता को स्पष्ट रूप से व्यंजित किया है । 'एक सड़क सत्तावन गलियों' में मैनपुरी कस्बे की मौसमी रंग ऋतुओं के अनुसार अपने कार्य करते कस्बाई जनों की मानसिकता को व्यंजित किया है साथ-साथ लेखक का सूक्ष्म नज़रिया काबिले तारिफ है कि उस कस्बाई जीवन में लोगों के दिलो दिमाग (मनो मस्तिष्क) पर अंध विश्वास ने कितना बुरी तरह से कब्ज़ा कर लिया है । इसे व्यक्त करने में वह चूकता हीं । "बालकृष्ण लीला में दया हुई भगवान की जन्म सफल हुआ, बालकृष्ण ने स्तनपान किया...धन्य हो माई धन्य...धन्य अवाजें उठीं । युवती मदहोश होकर अलग हो गई । बालकृष्ण धूटनों चलने लगे...मातु मातु ।"(९)

कमलेश्वर के अनुभव-बोध बाद में स्पष्ट परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है । यह बदलाव उनके इलाहाबाद से दिल्ली आने के बाद होता है । 'खोयी हुई दिशाएँ' की भूमिका में उन्होंने स्वीकार भी किया है कि दिल्ली आने के समय इलाहाबाद छोडने में उन्हें काफी तकलीफ का अहसास हुआ । दिल्ली में सब कुछ बदला बदला लगा - "एक अजीब सा परायापन और बेगानापन ।"(१०)

'तीसरा आदमी' उपन्यास में लेखक ने 'मैं' अर्थात् नरेश के पदोन्नति के माध्यम से व्यक्ति की उच्च महत्त्वाकांक्षा स्पष्ट किया है । नरेश इलाहाबाद में रेडियो में एलाउन्सर था, जो पदोन्नित के लालच में दिल्ली आता है, जहाँ उसके दाम्पत्यजीवन में विषमताएँ पनपनी शुरू हो जाती हैं । नरेश का चरित्र दिल्ली महानगर की कश्मकश जिंदगी से परेशान है । आधुनिक युग में

महानगरीय विषमताएँ अजगर की तरह इन्सान को अपने फंदे में घसीट लेती हैं; जिनसे वह अपने आपको मुक्त नहीं करवा पाता । घुटन, लाचारी और बेबसी उसे खत्म कर देती है । महानगर की त्रासदी को कमलेश्वर ने भोगा है और वही संत्रास उन्होंने 'तीसरे आदमी' उपन्यास में व्यंजित किया है । शहरी जीवन की मजबूरियों से भरा है, जिनमें चुभन है । 'तीसरा आदमी' उपन्यास में कमलेश्वर ने जीवन का तनाव और व्यर्थता बोध को व्यंजित किया है । कमलेश्वर मानवीयता के पक्षधर हैं, आर्थिक दबाव मावनीय मूल्यों का गला घोंट देता है । सुप्रसिद्ध विचारक एवं शिक्षाशास्त्री प्रो. हूमायू कबीर का कथन है कि - "आधुनिक भारत वर्ष में मध्यवर्गों का असन्तुलित विकास सम्भवतः सबसे प्रमुख घटना है ।"(११) "मध्य वर्ग अपने विकास काल से लेकर आज तक का जीवन और व्यक्तितत्त्व सर्वाधिक उथल-पुथल से युक्त एवं संघर्षों से भरा हुआ है, क्योंकि अतीत की परंपरा को यह वर्ग एकाएक उतार फेंकने में असमर्थ रहा है जबकि पाश्चात्य शिक्षा और संस्कृति के प्रभाव के कारण प्रस्तुत वर्ग में समाज की सड़ी-गली रूढ़ियों से छुटकारा पाने की अटूट कामना छिपी हुई थी । अपनी मिथ्या सम्मान-भावना के कारण इस वर्ग को अपने जीवन स्तर का निर्वाह करना ही पड़ता था, जबकि आर्थिक अभाव में यह कार्य उसके लिए दुरूह था ।" (१२)

'तीसरा आदमी' उपन्यास की नायिका चित्रा भी समाज की सड़ी गली रूढ़ियों से छुटकारा पाने की इच्छा रखती है । जब पति ही अपनी पत्नी को

बेसहारा छोड़कर विमुख हो चला जाए तो उसे रिश्तों को रबर की तरह खींचकर अपने आपको मानसिक रूप से सज़ा देने के बराबर है । कमलेश्वर ने सामाजिक मूल्यों को उतना ही महत्त्व दिया है । चित्रा परेशान है फिर भी कर्तव्य को पूरा करती है । आर्थिक अभाव में पीसी जाती चित्रा अपनी संतान का इलाज करवाने में कहीं भी कसर नहीं छोड़ती है । "आर्थिक अभाव के कारण मध्य वर्ग का जीवन कलह क्लेश और आलोचना से भरा है, किन्तु इसके बावजूद मध्यवर्गीय जीवन में ममता, दया और क्षमा आदि मानवीय गुणों का स्रोत शुष्क नहीं होता है । इस प्रकार अभावों एवं उलझनों से घिरे मध्यवर्ग का जीवन इतना जटिल एवं दुरूह है कि उसे समझ पाना मुश्किल है ।"(१३) कमलेश्वर ने मध्यवर्ग की अकुलाहट उसके जटिल जीवन को करीब से देखा और पहचाना है । उनके उपन्यास में उनकी पृष्ट वैचारिकता उभर आती है ।

'समुद्र में खोया हुआ आदमी' उपन्यास कथानक की पृष्ठभूमि वही महानगरीय जीवन है । लेखक ने मध्य वर्गीय जीवन की मजबूरियों का कच्चा चिट्ठा इस उपन्यास में खोल कर रख दिया है । 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' में शहरी जीवन का तनाव, आर्थिक विषमता, बेरोजगारी एवं आवास की विडम्बना से भरा है, उस जीवन में व्यर्थता का बोध है । शहरी आदमी उस भीड़ में अपने को उखड़ा हुआ पाता है, यहाँ तक कि परिवार के सदस्य भी उस शहरी भीड़ में बिखर कर रह जाते हैं, जैसे इस उपन्यास के नायक श्यामलाल का संपूर्ण परिवार चारों दिशाओं में बिखर कर रह गया है । उसे यह प्रति

भासित होता है कि सारे संबंध खोखले हैं । उसे लगता है कि हर आदमी अपनी पहचान तलाश रहा है । एक यान्त्रिकता सबको निगल गयी है । कमलेश्वर ने बदले बोध का निदर्शन उपन्यास में आलेखित किया है ।"

कमलेश्वर ने लिखा भी है - "नये कथा साहित्य का मूल स्त्रोत है - जीवन का यथार्थ बोध और इस यथार्थ बोध को लेकर चलने वाला वह विराट मध्यवर्ग और निम्न मध्य वर्ग है जो अपनी जीवनी शक्ति से आज के दुर्दांत संकट को जाने अनजाने झेल रहा है ।"(१४)

कमलेश्वर के बाद के उपन्यासों का संदर्भ बदल जाता है । वह आम आदमी के साथ तेजी से जुडने लगता है -"आम आदमी आज मौत से भी बदतर जिंदगी जीने को बाध्य है । आज भी सारी उत्पादन व्यवस्था और उसका असमान वितरण, सत्ता, सरकार, छद्म राजनीति और पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था के झूठे आश्वासनों के बीच आज का आदमी रफता रफता मौत के करीब हो रहा है । घिनौने वर्तमान और अंधे भविष्य की लड़ाई में उसका अभिमन्यु-अस्तित्त्व घिर गया है ।"(१५) कमलेश्वर एक सतर्क उपन्यासकार हैं । अपने आस-पास की फैली दुनिया को खुली नज़र से देखते है । सही साफ देखने की कोशिश इनके लेखन को महत्त्वपूर्ण बनाती है । राजनीतिक हिपोकैसी को इनका लेखन नंगा करता है । कमलेश्वर ने राजस्थान के चुनाव के दौरान जो अनुभव इकट्ठे किये थे, वे यही थे कि भ्रष्ट हो गए चुनाव की नीति एवं भ्रष्ट तंत्र के चुनावों के प्रति उनके मन में कसैला और कड़वा स्वाद

ही रह गया । चुनावों ने नाटक का स्वरूप ग्रहण किया है जिन पर से लेखक का विश्वास उठ गया । '' 'काली आँधी' मेरे दिमाग में उस वख्त उठी थी जब मैं १९६२ में राजस्थान में हो रहे चुनावों के दौरान एक कारकुन की तरह शामिल हुआ था, मैं उस वख्त कांग्रेस के उम्मीदवार का प्रचार कर रहा था ।''(१६) ईमानदार और निष्ठावान व्यक्ति चुनावों में कदापि सफलता हासिल नहीं कर सकता । भ्रष्ट हो गई चुनाव प्रणाली के प्रति तीव्र घृणा जागृत हो गई । लेखक को खुद लाचारी का अनुभव होने लगा । बदलती चुनाव प्रणाली में घुस गई इन विषमताओं के कारण राजनीति एक दलदल बन गयी है । पंचसाला चुनाव की जो आँधी आती है, उसकी उठा-पटक, अनीतियों से भ्रष्टता से काली हो गई है इसीलिए कमलेश्वर ने अपने उपन्यास का शीर्षक 'काली आँधी' रखा ।

कमलेश्वर युग-चेतना के प्रति जागृत हैं । वे जागरूक उपन्यासकार हैं जिन्होंने समकालीन राजनीतिक कुचक्र को 'काली आँधी' उपन्यास का आधार बनाया है । उपन्यासकार ने चुनाव के अंतर्गत प्राप्त किए अनुभवों को बड़ी निखालसता से कथानक में विश्लेषित किया है । राजनीति के दाँवपेच हथकंडो को व्यंजित किया है । स्वाधीनता के पश्चात देश में व्याप्त राजनीति के आंतरिक पहलुओं को निर्ममता से उद्‌धाटित करता है । राजनीति का रंग जिसे एक बार लग जाता है उससे वह व्यक्ति कभी भी अपने आपको, उस रंग को छुड़ा नहीं पाता है । 'काली आँधी' की नायिका मालती को राजनीति का एसा

गहरा खुमार चढ़ता है कि वह अपनी पारिवारिक जीवन की नींव को उखाड़ देती है । राजनीति कितनी घिनौनी स्वार्थयुक्त होती है इसका अनुभव मालती के पति जग्गीबाबू लगातार करते रहते हैं । कमलेश्वर ने जग्गीबाबू पात्र के द्वारा उनके अपने विचारों को व्यंजित किया है – राजनीति की ओर उनका भयंकर आक्रोश व्यक्त हुआ है – "तुम लोग सिर्फ चीजों को इस्तेमाल करना जानते हो...बाढ़ आई तो इस्तेमाल करो, सूखा पड़ा तो उसे इस्तेमाल करो, कहीं कोई लड़की भाग गई तो उसके मामले को इस्तेमाल करो...कहीं कोई मर गया तो उसकी मौत को इस्तेमाल करो..तुम लोगों ने आंसुओं और ज़जबातों तक को नहीं छोड़ा....उससे ज्यादा घटिया बात और क्या हो सकती है कि दु:खी और मुसीबत अदा इन्सानों के सपनों तक का इस्तेमाल तुमने कर लिया..तुमने उसके सपनों के तार बनाकर निचोड लिया ।"(१७)

आगे उन्होंने लिखा हैं "आज का राजनीतिक परिदृश्य इस कदर जलालत से भर गया है कि अच्छे–बुरे की पहचान खो गयी है । प्रजातंत्र का हर मंच गलत बोलने लगा है । शब्द फरेब का फंदा है । शब्द सही अर्थ भरमाने वाला हो गया है । ये मंच गलत लोगों से भर गये हैं तथा सारे चहरे एक से हैं ।"(१८)

आज का नेता (मंत्री) प्रजातंत्र भी सबसे बड़ी विषाक्त फसल है, जिसे काटने के लिए जनता विवश है । आज का आधुनिक नेता सत्ता पर अपनी रोटी सेंकता है ।"आज की जिंदगी छद्‌म से भरी है, आम आदमी जो छल–छन्दों से

दूर है, प्रतिदिन छले जा रहे हैं । विडम्बना तो यह है कि छलनेवाला ही सत्ता प्रतिष्ठान की बडी हिस्सेदारी में है, या फिर सत्ता से अलग होकर सिद्धांतों का झण्डाबरदार बन गया है ।"(१९) 'काली आँधी' उपन्यास का कथानक उसी छद्मवृत्ति से भरा है, राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन से जुड़ी हुआ है । राजनीतिज्ञ रिश्तों के मासूम विश्वास, को जनता की आस्था को ठगते रहते है । राजनीति एक ऐसा क्रूर खेल है जिसमें काम की शक्ल ही बदल जाती है । 'काली आँधी' उपन्यास की नायिका मालती का दाँया हाथ लल्लूलाल का मुख्य मंत्र है – "हर काम करो पर उसकी शक्ल बदलकर करो समझे भइये । शराब पियो किन्तु दवाई की शीशी में ड़ालकर उसका लुत्फ उठाओ ।"(२०) राजनीति के खेल में, जीतने के लिए राजनीतिज्ञ कुछ भी करवा सकते हैं । जातिवाद (साम्प्रदायिकता) खड़ा करना, किसी पार्टी को दबा देना आदि लल्लूलाल का मुख्य कर्म है । वैसे "स्वतंत्रता के बाद भारतीय नेताओं ने देश के लिए लोकतान्त्रिक पद्धति का चयन किया, लोकतंत्र में चुनाव का महत्त्व निश्चित रूप से उँचा है, मगर उसमें कितनी चालें चली जाती हैं तथा उसका लाभ किसको मिलता है उसको विस्तृत रूप से कमलेश्वर ने 'काली आँधी' में चित्रित किया है । चुनाव के समय सामान्य जनता की मनोवृत्ति क्या होती है । यह मतदान करनेवाली जनता बड़ी संवेदनशील है । बेदिमाग, अनपढ़ और भुलावे में भटकनेवाले लोगों का एक समुदाय भर है । ये कितने चुनाव है ये सिद्धांतों पर नहीं लड़े जाते, बेतहाशा रुपया खर्च होता है, वोटों को खरीदने के

लिए शराब मिलाई जाती है । झूठे वादों पर लोगों को गुमराह किया जाता है । कभी लाठी और जूतों का भी सहारा लेना होता है ।"(२१)

राजस्थान के चुनाव के दौरान गायत्रीदेवी का रवैया और उनकी चालें देखकर उपन्यासकार ने जो अनुभव प्राप्त किया उस अनुभव पर अपनी विचारधारा की पृष्ठभूमि वे दे पाये हैं । एक तत्त्ववेत्ता की भाँति उन्होंने एक एक स्थिति एवं परिस्थिति को 'काली आँधी' उपन्यास में व्यंजित किया है । एक श्रेष्ठ मनीषी की भाँति उन्होंने सतत चिंतन किया है और यथार्थ को सामने रखा, सच्चाई का निचोड़ उनकी विचारधारा में दृष्टिगत होती है ।

'डाकबंगला' उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार ने नारी की करुण दास्तानों को, व्यथा-पीड़ा को, 'इरा' नायिका के माध्यम से व्यंजित किया है - "समाज सदैव नारी के प्रति क्रूर और आक्रमक रहा है । नारी को बराबर जिस तरह से इस्तेमाल किया है । कमलेश्वर ने बड़ी बेबाकी से समाज के उस सत्य को नंगा किया जिसका समाज अभ्यस्त हो गया है या जिसे देखकर भी वह देखना नहीं चाहता । वह 'मायोपिया' का शिकार है उसकी संवेदना पथरा गयी है, ठंडी हो गयी है ।"(२२)

कमलेश्वर अपने उपन्यासों में युग सत्य की सूक्ष्मता एवं सांकेतिकता को निरूपित करने में सिद्धहस्त हैं । सहधर्मी कथाकार राजेन्द्र यादव के शब्दों में - "कमलेश्वर अपना सच नहीं बोल सकता मगर अपने युग का और अपनी

पीढ़ी का सच वह जरूर बोल सकता है क्योंकि उसके पास जबान है और उसे बात करनी भी आती है ।"(२२)

उनका उपन्यास 'डाक बंगला' भी आधुनिक नारी जीवन की अनेक विसंगतियों को रेखांकित करता है । उपन्यासकार नारी की वैयक्तिक भीतरी नैतिकता का पक्षधर बनता है । इरा आधुनिक काल की एक ऐसी नायिका है जिसके जीवन में चार पुरुष आते हैं विमल, बतरा, बूढ़ा डॉक्टर और मेजर सोलंकी परंतु उसकी आत्मा हमेशा उसके प्रथम प्रेमी विमल को ही तरसती रही । इरा की जिंदगी बगैर मंजिलों के चलनेवाले चिर पथिक की जिंदगी है वह कहती है - "मेरा पड़ाव कभी नहीं है । रास्ते में कोई गंदी चाय की दुकान आ गई तो लोग वहाँ भी रुककर एक प्याला पी लेते हैं ।"(२३) उसी प्रकार उसकी जिंदगी में जो भी आया वह उसे सहज रूप में स्वीकारती गई उसकी जिंदगी औरों के लिए एक पड़ाव एक डाक बंगला मात्र बनकर रह गयी । "इरा की कहानी के साथ इस लघु उपन्यास में ऐसा बहुत कुछ है जो हमें बाँध लेता है । मध्यवर्गीय समाज की विडम्बना और विसंगतियों तथा हमारे उच्च समाज के खोखलेपन का अच्छा खाफा लेखक ने खींचा है ।"(२४) दु:खों ने इरा को दार्शनिक बना दिया है अत: उसका प्रत्येक वाक्य कोई सूक्ति जान पड़ता है - "जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी या दुर्घटना यही है कि हमें हर चीज हर सुख मिलता है पर समय पर नहीं ।"(२५) "तथाकथित नारी के नैतिक शोषण के कोणों को इसमें लेखक ने खराद पर चढ़ाकर और भी नुकीला बना

दिया है । उपन्यास के अंत में इरा की टूटन को लेखक ने एक ही वाक्य के द्वारा व्यंजित कर दिया ।"(२६) "चलो भाई सूटकेस चलें...."(२७)

उपन्यासकार ने डाक बंगला लधु उपन्यास के अनुकूल सांकेतिकता संक्षिप्तता एक सूत्रता एवं प्रतीकात्मकता के साथ आज के आधुनिक युग की नारी की दास्तान को रखा है । इरा जैसी माँ विहीन लड़कियों की ऐसी ही दशा होती है । पितृप्रेम से वंचित इरा के पात्र के द्वारा लेखक ने दर्शाया है कि आधुनिक समाज नारी के लिए कितनी विसंगतियों को जन्म देता है । पुरुष प्रधान समाज में पुरुष का प्रपंची, छद्‌म एवं अविश्वनीय रूप उभारा गया है । नारी प्रत्येक कदम पर छली जाती है कभी वह प्रेम में छली जाती है, कभी वह पुरुष के प्रपंच में फँस जाती है, कभी वह अपनी अतिशय श्रेष्ठ आत्मिक विश्वास में छली जाती है । वह किस पर विश्वास करे ? कैसे करे ? जहाँ हर कदम पर नारी को लूटने खसोंटने की भावना ही सामने आती है । उपन्यासकार ने इरा के पात्र के द्वारा यह प्रतीति करवाई है नारी चाहे कितनी भी पढ़ी लिखी क्यों न हो पर उसकी कोमल आत्मा, उसकी भावुकता, उसके अपनत्व जैसे गुणों से ही वह खुद छली जाती है । समाज का उच्चवर्ग नारी को भोग्या ही समझता है जब भी उनको समय और मौका मिलता है तब वे नारी को किसी भी तरह से फँसा कर अपना उल्लू सीधा करते हैं । नारी को एक हड्‌डी की भाँति चूसकर फेंक देते हैं । ऐसे समाज में नारी कहाँ अपना प्रतिष्ठित स्थान पाये ? यह एक विचारणीय प्रश्न उपन्यासकार ने खड़ा किया है ।

कमलेश्वर का एक अन्य उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' हिन्दी साहित्य में एक मील का पत्थर साबित हुआ है । इस उपन्यास में कमलेश्वर के विचारों ने वैश्विक सभ्यताओं-संस्कृतियों का निचोड़ प्रस्तुत कर दिया है । कमलेश्वरने मुख्यतः मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ की अभिव्यक्ति देने की चेष्टा की है । उनके कथा साहित्य में एक आम इन्सान के जीवन में आती अर्नागनत विडम्बनाओं को उभारा गया है । 'कितने पाकिस्तान' के संदर्भ में ''कमलेश्वर की दृष्टि में तमाम चीजें पाकिस्तान हैं, जो अहसास को उथला करती हैं, कम करती हैं, या खत्म कर देती हैं और जो हमारे बीच सन्नाटा पैदा करती हैं । लेखक के लिए पाकिस्तान कोई मुल्क नहीं , एक दु:खद सच्चाई का नाम है ।''(२८)

कमलेश्वर के कथा साहित्य में आज का वर्तमान झलकता है । ''उनके कथा साहित्य में रूढ़ियों के प्रति तिरस्कार एवं विद्रोह, प्रगतिशीलता एवं नवीन मूल्यों के आग्रह का सशक्त स्वर है । विभाजन का विषय बनाकर लिखी गयी उनकी रचनाओं में मानवीय सम्बन्धों में पनपते शक, नफरत, अलगाव तथा टूटते मानवीय मूल्यों, आस्थाओं की छटपटाहट और आकुलता तो है ही, विभाजन के कारण मानव जीवन में उत्पन्न विडम्बनापूर्ण स्थितियों का मर्मस्पर्शी चित्र है ।''(२९)

'कितने पाकिस्तान' में वैशिवक सभ्यताओं और संस्कृतियों के मूल तक किया गया गहन अध्ययन उपन्यासकार के विचारों द्वारा प्रस्तुत किया गया है ।

नफरत का प्रतीक बना पाकिस्तान, में भारत–पाक विभाजन की विडम्बना के साथ–साथ वर्तमानकाल में उसके कारण जन्मी विभिन्न समस्याएँ – कारगील युद्ध में भारत के नेताओं की बेफिक्री, बाबरी मस्जिद एवं राम मंदिर का विवाद बनाकर आज के नेता साम्प्रदायिक दरारें खड़ी करते हैं और मानव और मानव के दरम्यान जातिगत प्रश्न खड़े कर उनकी मानवीय संवेदना का हरण करते हैं । मानव के बीच अलगाव खड़ा कर अपनी सत्ता की रोटी सेकता नेता सिर्फ अपना ही उल्लू सीधा करता है । उनके लिए देश के जांबाज़ सिपाहियों के लिए कोई लगाव, मान–सम्मान नहीं है । उन्हें सिर्फ अपनी खुरसी की चिंता है । इसी विषय की चर्चा करते हुए डॉ. प्रमिला अग्रवाल ने लिखा "आधुनिक काल की वर्तमान परिस्थितियों के कारण निर्मित अभावग्रस्त परिवेश ने त्याग, स्वार्थहीनता और सहानुभूति जैसी मानवीय संवेदनाओं को अर्थहीन बना दिया है, पारिवारिक रिश्तों की मजबूत कड़ी धीरे धीरे टूटती जा रही है । वर्तमान के आगे आत्मसमर्पण कर वे निष्क्रिय हो गये हैं । उनके चारों ओर अनिश्चित भविष्य और निराशा का काला शून्य है । जिसमें किसी प्रकार जी लेना ही जीवन का लक्ष्य रह गया है ।(३०)

वैश्विक स्तर पर अशांति, नफरत, घृणा, संवेदनाहीन मनुष्य हत्याएँ, कत्लेआम, बम्ब विस्फोट एक आम बात बन गई है । विश्व के सभी मुल्कों के संवेदनाहीन होते मनुष्य जो अपनापन, आत्मीयता, प्रेम, भावुकता सब कुछ भूलकर बैठे हैं । उनका मानसिकता को यहाँ दर्शाया गया है । नफरत का यह

पाकिस्तान वर्तमान काल का एक गहन प्रश्न बन गया है । उपन्यासकार ने 'कितने पाकिस्तान' में काफी गहन अध्ययनकर अपने विचार प्रस्तुत किए हैं । यह नफरत सिर्फ अपने वर्तमान का प्रश्न न होकर सदियों से चला आ रहा प्रश्न है । आर्य सभ्यता को ही लें तो देवता और इन्सान के बीच का प्रश्न, यह प्रश्न वैश्विक सभ्यताओं और संस्कृतियों से भी जुड़ा हुआ है । बाबर, हूमायूँ, औरंगजेब से चली आ रही समस्याएँ हैं, वर्तमानयुग में ही सिर्फ रिश्तों में दरारे नहीं पड़ीं, सत्ता लोलुपता सिर्फ आज का प्रश्न और लालच नहीं है । औरंगजब और दारा के इतिहास से लेखक ने प्रकाश ड़ालने का संपूर्ण प्रयास किया है कि यह तो सदियों से चली आ रही विडम्बना है । औरंगजेब ने अपने सगे भाइयों को ठिकाने लगा दिया । दारा का कत्ल कर दिया । क्यों ? सिर्फ सत्ता राजसिंहसान प्राप्त करने के लिए, मानवीय संवेदनाओं को इन्सान कब से छोड़ चुका है, वर्तमान युग में यह समस्या पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी है । उपन्यासकार ने अनेक संवेदनाओं को 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में उभारा है ।

लेखक बयान करता हैं कि आज विश्वस्तर पर अशांति, नफरत, घृणा, हत्याए फैली हुई हैं । ऐसा कोई मुलक शेष नहीं है जहाँ सभी समस्याएँ न हों, मानव हत्या तो आम बात बन चुकी है । अन्य मुल्क अपने मुल्क को सर्वोत्तम-श्रेष्ठ बनाने में, सीमाओं को बढ़ाने में खून की नदियाँ बहाकर भी अपनी

महत्त्वाकांक्षाओं को पूर्ण करने में लगे है । मानव ने मानव की हत्या कर संपूर्ण मानवजाति पर ग्रहण लगा दिया है ।

(४) उपसंहार : लेखकीय दृष्टि का वैचारिक प्रतिफलन

कमलेश्वर जी सामाजिक जीवन के सशक्त कथाकार हैं । अपने अनुभवों और लेखकीय दृष्टि के बल पर उन्होंने हमारे समाज को चौथे दशक के अंतिम चरण से लेकर, आज तक के कृतित्त्व से - चाहे वह रचना धर्मी कथाकार के रूप में हों या 'नयी कहानियाँ अथवा 'सारिका' के संपादक के रूप में हों, उन्होंने सामाजिक राजनैतिक और धार्मिक कारणों की पूरी पड़ताल की है और उनके विचारों से यह तथ्य उभरकर आता है कि वे प्रतिबद्ध वामपंथी हैं । उनके मतानुसार पूरे मध्यकाल में तमाम मुस्लिम आक्रांताओं के मूल्यों, शासकीय नीतियों और सामाजिक परिवर्तनों के बावजूद हिन्दू-मुसलमानों में किसी प्रकार की साम्प्रदायिक लड़ाई नहीं थी, जो आज के आधुनिक युग में आम बात हो गई है । आज का शासक वर्ग जनता को आपस में लड़ाकर स्वयं सत्ता सुख भोग रहा है । कमलेश्वरजी (इतिहास के माध्यम) यह बताना चाहते हैं कि लडाई धर्म की नहीं है । सत्ता के बँटवारे की है । धर्म की लड़ाई होती तो तब से होती जब मुसलमान इस देश में आये, उन्होंने हिन्दू राजाओं की

सहायता और हिन्दू जनता के सहयोग से सैंकड़ों वर्ष तक राज्य किया । हिन्दू राजाओं ने अपनी बहन-बेटियाँ उन्हें ब्याहीं ।

रचनाकार की वैचारिकता की वास्तविक पकड़ उसके लेखन एवं कृतित्त्व से ही होती है । सामाजिक या व्यक्तिगत जीवन में छल या ओढ़ा हुआ व्यक्तित्त्व लेकर चला तो जा सकता है । पूंजीवादी समाज में ऐसे दोहरे चेहरे वाले या द्वित्व चरित्र वाले लोगों की कमी नहीं होती खासतौर से व्यापार उद्योग एवं राजनीति क्षेत्रों में ही होते हैं ।

कमलेश्वर की कहानियों की अपेक्षा कमलेश्वर के उपन्यासों की पृष्ठभूमि व्यापक है । यद्यपि वह रूपात्मक विधा की ओर सतर्क रहे हैं किन्तु उन्होंने सामाजिक पृष्ठभूमि और उसमें टकराते हुए सामाजिक मूल्यों को ही अपने उपन्यासों की 'वस्तु' बनाया है । उनकी दृष्टि उस मानवीय दृष्टि को परखती तथा पोषित करती गयी है जो मात्र 'स्वस्थ मानव' और 'स्वस्थ सामंजस्य' की पक्षधर है । आर्थिक प्रभाव या आर्थिक दबाव किस तरह से मानवीय मूल्यों के लिए संकट बनकर उपस्थित हुए हैं उसकी सक्रियता को कमलेश्वर ने पकड़ा है । कमलेश्वर की विचारधारा को उपन्यास में व्यंजित किया है ।

गदद्‌ी को सुरक्षित रखने के उपाय ही इनका एकमात्र उद्देश्य है । जनता को अनेक भ्रमजालों में उलझाये रखकर ये राजनीतिज्ञ अपना स्वार्थ पूरा कर रहे

हैं । कमलेश्वर को ऐसी राजनीति में घिन आती है । जिस स्वतंत्रता के लिए देश के अनेक लोगों ने कुरबानियाँ दीं वे सब निष्फल हो गईं । जो सपना हमारी जनता ने देखा वह व्यर्थ हो गया । स्वतंत्रता प्राप्ति की लड़ाई में हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों ने खून बहाया, हाथ में हाथ लेकर एक नारों में हम आवाज़ बनकर स्वतंत्रता प्राप्त की, फिर क्यों साम्प्रदायिक दंगे इन राजनीतिज्ञों ने करवाए ? अपनी सत्ता बनाए रखने के लिए इन राजनीतिज्ञों ने किसी को बक्षा नहीं । 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में तो उपन्यासकार ने खुल्लेआम नेताओं की पोल खोली है । कारगिल युद्ध में शहीद जवानों के लिए बोलनेवाले कमलेश्वर ने सही बयान दिया है कि "आप लोगों के पैर में मोच तक का इलाज देश के खर्चे पर विदेशों में होता है ।"उत्तरी सीमान्त पर कारगिल युद्ध हो रहा था तो दूसरी ओर भारत के रक्षामंत्री जार्ज फरनांडीज़ विदेश में भाषण देने गए थे । उपन्यासकार ने प्रधानमंत्री के नैतिकपतन की पराकाष्ठा को भी बयान किया है । 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास के माध्यम से आधुनिक युग में इन्सान की इन्सानियत, नैतिकता का जो पतन हो रहा है, उसे वैश्विक स्तर पर लेखक ने गहरी चिंतन दृष्टि से पेश किया है ।

उपन्यासकार कमलेश्वर ने इन्सान की नफरत को 'पाकिस्तान' के रूप में देखा है । उनकी विचारधारा में यह पाकिस्तान एक नहीं संपूर्ण विश्व में छाया हुआ है । अपनी-अपनी विचारधारा है जिसका केन्द्रबिंदु अमानवीयता, असंतोष, घृणा, नफरत, क्रूरता, असंवेदनशीलता है । कमलेश्वर ने सिर्फ भारत

की दशा को अपने विचार का केन्द्रबिंदु न रखकर संपूर्ण वैश्विक मुल्कों की स्थितियों को अपनी विचारधारा का केन्द्रबिंदु रखा है । यह केन्द्रबिंदु आज का इन्सान है । कमलेश्वर की गहन सोच, चिंतन का यह परिणाम उन्होंने साक्षात रूप से प्रस्तुत किया है कि इन्सान ही अपनी इन्सानियत की नींव उखाड रहा है तभी तो उसने अपनी ही मानवजाति के नाश के लिए मानव बंध बनाए हैं । कमलेश्वर की गहन-सोच-विचारधारा में मनुष्य मुख्य केन्द्रबिंदु पर है । व्यक्ति ही समाज का अंग बनकर, सामाजिकता का निर्वाह करते हुए ही प्रतिष्ठित हो सकता है ।

संदर्भसंकेत

१. कमलेश्वर

२. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, डॉ. शोभा पालीवाल, पृ. १२७

३. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, डॉ. शोभा पालीवाल, पृ. १२८

४. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, डॉ. शोभा पालीवाल, पृ. १३१

५. कमलेश्वर, डॉ. चंद्रशेखर, सामाजिक आस्थाओं का कलाकार, पृ. १४४

६. कमलेश्वर, डॉ. चंद्रशेखर, सामाजिक आस्थाओं का कलाकार, पृ. १४४

७. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. १४४-१४५

८. 'मेरा पन्ना', कमलेश्वर

९. 'मेरा पन्ना', कमलेश्वर

१०. 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ', कमलेश्वर, पृ. ५१

११. खोयी हुई दिशाएँ, भूमिका, पृ. २

१२. हमारी परंपरा, प्रो. हुमायू कबीर, पृ. १००

१३. भगवती चरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, डॉ. जवाहरलाल सिंह, पृ. ११६

१४. भगवती चरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, डॉ. जवाहरलाल सिंह, पृ. ११७

१५. 'मांस का दरिया', कमलेश्वर, आत्म कथ्य, पृ. ७

१६. कमलेश्वर और कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. १४४

१७. आधुनिक हिन्दी उपन्यास, भगवतीप्रसाद निदारिया, पृ. ४५०

१८. 'काली आँधी', पृ. ८

१९. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. १५०

२०. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. १५२

२१. 'काली आँधी', पृ. २५

२२. भगवती चरण वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना, डॉ. जवाहरलाल सिंह, पृ. २८

२३. कमलेश्वर, मधुकरसिंह, पृ. १५१

२४. मेरा हमदम मेरा दोस्त, पृ. ४२

२५. डाक बंगला, पृ. २७

२६. हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास में साठोत्तरी उपन्यास, डॉ. पारूकान्त देसाई, पृ. २५१

२७. डाक बंगला, पृ. ११६

२८. हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास में साठोत्तरी उपन्यास, डॉ. पारूकान्त देसाई, पृ. २५१

२९. डाक बंगला, पृ. २४

३०. कितने पाकिस्तान, पृ. ५४

३१. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य, डॉ. प्रतिभा अग्रवाल, पृ. ८६

३२. भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य, डॉ. प्रतिभा अग्रवाल, पृ. ८६

ग्रंथानुक्रमणिका

(अ) **आधार ग्रंथ :**

(१)	एक सड़क सत्तावन गलियाँ	कमलेश्वर
(२)	रेगिस्तान	कमलेश्वर
(३)	समुद्र में खोया हुआ आदमी	कमलेश्वर
(४)	तीसरा आदमी	कमलेश्वर
(५)	काली आँधी	कमलेश्वर
(६)	लौटे हुए मुसाफिर	कमलेश्वर
(७)	सुबह दोपहर शाम	कमलेश्वर
(८)	डाक बंगला	कमलेश्वर
(९)	कितने पाकिस्तान	कमलेश्वर

(ब) **सहायक ग्रंथ – हिन्दी**

	शीर्षक	लेखक
(१)	अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना	डॉ. शोभा पालीवाल
(२)	आधुनिक हिन्दी उपन्यास	भीष्म साहनी
(३)	उपन्यास और यथार्थ	मोहन राकेश
(४)	कमलेश्वर	मधुकरसिंह
(५)	कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा	

(६)	कमलेश्वर : सामाजिक आस्थाओं के कलाकार	डॉ. कमलेश्वर शर्मा
(७)	कहानीकार कमलेश्वर : संदर्भ और प्रकृति	डॉ. सूर्यनारायण रणसूभे
(८)	काव्य के रूप	डॉ. गुलाबराय
(९)	झूठा-सच	भगवतीचरण वर्मा
(१०)	नई कहानी की भूमिका	कमलेश्वर
(११)	निर्मला	प्रेमचंद
(१२)	पं. भगवतीप्रसाद बाजपेयी अभिनंदनग्रंथ	पं. नंददुलारे बाजपेयी
(१३)	पचपन खंभे लाल दीवारें	उषा प्रियंवदा
(१४)	प्रमुख समाजशास्त्रीय विचारक	डॉ. राजनाथ शर्मा डॉ. राजेन्द्रकुमार शर्मा
(१५)	प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना	डॉ. अमरसिंह लोधा
(१६)	प्रेमचंद : कुछ विचार	डॉ. सत्येन्द्र
(१७)	भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास और युगचेतना	डॉ. जवाहरसिंह
(१८)	भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में नारी	डॉ. नीता रत्नेश

(१९)	भगवतीचरण वर्मा की उपन्यास चेतना	डॉ. इन्दु शुक्ला
(२०)	भारत विभाजन अभिशाप था	जोश मलीहाबादी
(२१)	भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास	पी. एम. थोमस
(२२)	भारत विभाजन और हिन्दी कथा साहित्य	डॉ. प्रमीला अग्रवाल
(२३)	समाजशास्त्र परिचय	प्रो. ए. जी. शाह प्रो. जे. के. दवे
(२४)	समाजशास्त्र नई दिशाएँ	एस. एल. दोशी, जी. सी. जैन
(२५)	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना	
(२६)	स्वाधीनता संग्राम	डॉ. रामविलास शर्मा
(२७)	हिन्दी के लघु उपन्यास	डॉ. घनश्याम मधुप
(२८)	हिन्दी उपन्यास सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप	डॉ. प्रभा वर्मा
(२९)	हिन्दी उपन्यास साहित्य की विकास परंपरा में साठोत्तरी उपन्यास	डॉ. प्रभा वर्मा

(३०) हिन्दी उपन्यास में सामाजिक चेतना — डॉ. लालसिंह साहब

(३१) हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी — डॉ. रेखा कुलकर्णी

अंग्रेजी ग्रंथ

(1) History of English Literature — J. N. Mundra, S.C. Mundra

(2) Sociological Theories — N. Jayaplan

(3) दी इकोनोमिकल डेवलपमेंट ऑव इण्डिया — डॉ. देशमुख

(4) The art of Fiction of Great Crities

कोश

(१) हिन्दी विश्वकोश — डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी

प्रथम अध्याय

सामाजिकता : तात्पर्य और व्याप्ति

द्वितीय अध्याय

कमलेश्वर की औपन्यासिक यात्रा : परिचयात्मक अध्ययन

तृतीय अध्याय

स्वतंत्रता पूर्व की स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

चतुर्थ अध्याय

स्वातंत्र्योत्तर स्थितियों से संबंधित कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

पंचम अध्याय

कमलेश्वर के उपन्यासों की पात्र–सृष्टि में सामाजिकता

षष्ठ अध्याय

कमलेश्वर के उपन्यासों में
विचार–सृष्टि
की सामाजिकता

ग्रंथानुक्रमणिका

कमलेश्वर के उपन्यासों में सामाजिकता

प्रमाणपत्र

प्रस्तावना

अनुक्रमणिका